निवेदन

गूजराती लिपिथी अनभ्यस्त अेवा मुमुक्षु बंधुओने बालबोध टाईपमां आ नित्यक्रम उपयोगी थशे अेवा आशयथी तेनी ३७५ प्रत अत्रेथी प्रकाशित करवामां आवेल छेः ते मुमुक्षुओने उपकारक थाओ.

श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम,
स्टेशन अगास, वाया आणंद,
ता. २२-३-५८

संतसेवक
रावजीभाई छ. देसाई.

अनुक्रमणिका



शुद्धिपत्रक

पृष्ठ	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
९	१५	लनी	लीनी
१०	१	वसाइ	वसाई
	४	बुहारी	बुहारी
१३	३	निजन	निज
१५	४	नमा	नमौं
	१९	शिमांहि	शिवमांही
१४	१	पदना	पदनो
२६	१	थया	थयो
३५	१३	निश्वास	निश्वासं
	१८	चितामणी	चिंतामणी
३६	४	मखडा	मखंडा
	२०	तआ	तओ
४२	२०	साहस	सहस
	२१	इद्र	इन्द्र
	२२	इद्र	इन्द्र
	२३	सनतकुकार	सनतकुमार
४३	२	निन्यायवैं	नित्यानंवं
४४	९	विभोगए	विभोगओ
४७	२०	लप्छन	लव्छन
४८	१७	जिनगण	जिनगुण
४९	२३	चाळवा	पाळवा
५६	१५	जेहसं	जेहसुं
५७	७	कम्यासे	अभ्यासे
६३	१५	सुरद्रमः	सुरद्रुमः
	२१	त्रिगण	त्रिगुण
६४	१	गुरुविष्णुर्गुरुदेवो	गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो
६६	३	ध्यानमूल	ध्यानमूलं
	५	व्याप्त	व्याप्तं
	६	दर्शित	दर्शितं
	११	गुरुगुरुप्वस्तु	गुरुर्गुरु-प्वस्तु
	१२	धर्मेसु	धर्मेसु
	१३	गरवे	गुरवे
	१४	गरवे	गुरवे
	१५	सद्गरु	सद्गुरु
६९	१३	वढे	वडे
७२	९	मोक्षमाग	मोक्षमार्ग
७६	७	जणाय यो	जणाय जो
	२२	चतन्य	चैतन्य
८२	१३	त्वप्न	स्वप्न
८४	१२	१६६	१३६
	१३	क्रथे	कथे
	१९	स्वप्न	स्वप्न
८९	१९	कृन	कृत

पृष्ट	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
१०२	२१	अरविंदनाजी	अरविंदनाजी
१०८	१२	श्राश्रव	आश्रव
१०९	२०	वीतरागशुं	वीतरागशुं रे
	२३	सीझे	सीझेजी
११०	१४	अमे,	अमे, प्र०
११२	१७	आज ही	आज हो
११८	११	सुचदायक	सुखदायक
११९	१४	साधम्य	साधर्म्य
१२३	१	सुच	सुख
	१८	वरणवा	वरणववा
१२४	७	हुं तुम पगर्ना खेह हो	तुम गुण परम अनंत हो
	१७	श्रनुभव	अनुभव
१२६	१७	तुमारो	तुमारा
१३४	१७	उपदेशना	उपदेशनो
१३७	१६	पङ्कर	पंङ्कर
१४३	१८	श्रागम	आगम
१५६	२४	वाडी	काढी
१५७	१८	आनंहचन	आनंदघन
१६४	२०	माहरा	माहरो
१६५	१	नेमिनाथ	नमिनाथ
१७४	२२	वंधु	वंध
२०२	१०	सेया	सेवा



શ્રીમદ્ રાજચન્દ્ર

જન્મ :
સંવત ૧૯૨૪

स्व० फूलराज देवी की पुण्य स्मृति देहोत्सर्ग :
में फूलरतन पारख द्वारा सप्रेम भेंट संवत १९५७



શ્રી લઘુરાજ સ્વામી

જન્મ :
સંવત ૧૯૧૦

દેહોત્સર્ગ :
સંવત ૧૯૯૨



श्रीमद् सद्गुरवे नमोनमः

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम

नित्यक्रम.

प्रातःकाळनी भक्तिनो क्रम. समय ५–७॥

१. मंगलाचरण.

अहो श्री सत्पुरुषके वचनामृतं जगहितकरम्,
मुद्रा अरू सत् समागम सुति चेतना जागृतकरम्;
गिरती वृत्ति स्थिर रखे दर्शन मात्रसें निर्दोष है,
अपूर्व स्वभावके प्रेरक सकल सद्गुण कोष है.
स्वस्वरूपकी प्रतीति अप्रमत्त संयम धारणम्,
पूरणपणे वीतराग निर्विकल्पताके कारणम्;
अंते अयोगि स्वभाव जो ताके प्रगट करतार है,
अनंत अव्याबाध स्वरूपमें स्थिति करावनहार है.
सहजात्म सहजानंद आनंदघन नाम अपार है,
सत् देव धर्म स्वरूप दर्शक सुगुरु पारावार है;
गुरु भक्तिसें लहो तीर्थपतिपद शास्त्रमें विस्तार है,
त्रिकाळ जयवंत वर्तो श्री गुरुराजने नमस्कार है.
ऐम प्रणमी श्री गुरुराजके पद आप–परहितकारणम्,
जयवंत श्री जिनराज–वाणी करुं तास उच्चारणम्;
भवभीत भविक जे भणे भावे सुणे समजे सद्दहे,
श्री रत्नत्रयनी ऐक्यता लही सही सो निज पद लहे.

---

२. जिनेश्वरनी वाणी.

अनंत अनंत भाव भेदथी भरेली भली,
अनंत अनंत नयनिक्षेपे व्याख्यानी छे;
सकळ जगत हित कारिणी, हारिणी मोह,
तारिणि भवाब्धि, मोक्षचारिणी प्रमाणी छे.
उपमा आप्यानी जेने तमा राखवी ते व्यर्थ,
आपवाथी निज मति मपाई में मानी छे;
अहो! राजचंद्र, बाळ ख्याल नथी पामता ए,
जिनेश्वर तणी वाणी जाणी तेणे जाणी छे.
(गुरुराज तणी वाणी जाणी तेणे जाणी छे.)

---

३. प्रातःकाळनी भावनानां पदो.

तीन भुवन चूडा रतन, सम श्री जिनके पाय;
नमत पाइअे आप पद, सब विधि बंध नशाय.
आस्रव भाव अभावतें, भये स्वभाव स्वरूप;
नमो सहज आनंदमय, अचलित अमल अनूप.
करी अभाव भवभाव सब, सहज भाव निज पाय;
जय अपुनर्भव भावमय, भये परम शिवराय.
कर्म शांति के अर्थी जिन, नमो शांति करतार;
प्रशमित दुरित समूह सब, महावीर जिन सार.
ज्ञान ध्यान वैराग्यमय, उत्तम जहां विचार;
अे भावे शुभ भावना, ते उतरे भव पार.

—त्रण मंत्रनी माळा—

सहजात्म स्वरूप परम गुरु.
आतम भावना भावतां जीव लहे केवळज्ञानरे.
परमगुरु निर्ग्रंथ सर्वज्ञदेव.

४. आत्मजागृतिनां पदो.

अबद्धस्पृष्ट, अनन्य, नियत, अविशेष, असंयुक्त;
जल-कमल, मृत्तिका, समुद्र, सुवर्ण, उदक उष्ण.

उष्ण उदक जेवो रे आ संसार छे,
तेमां अेक तत्त्व मोटुं रे समजण सार छे.

शुद्धता विचारे ध्यावे, शुद्धतामें केलि करे;
शुद्धतामें स्थिर वहे, अमृतधारा वरसे.

अेनुं स्वप्ने जो दर्शन पामेरे, तेनुं मन न चडे बीजे भामेरे;
थाय सद्‌गुरुनो लेश प्रसंगरे, तेने न गमे संसारीनो संगरे.

हसतां रमतां प्रगट हरि देखुंरे, मारुं जीव्युं सफळ तव लेखुंरे;
मुक्तानंदनो नाथ विहारीरे, संतो, जीवनदोरी हमारीरे.

---

*५. स्वात्मवृत्तांत काव्य.

धन्य रे दीवस आ अहो,
जागी रे शांति अपूर्व रे;
दश वर्षे रे धारा उल्लसी,
मट्यो उदयकर्मनो गर्व रे. धन्य० १

ओगणीससें ने अेकत्रीसे,
आव्यो अपूर्व अनुसार रे;

---

* आ नित्यक्रममां नथी परंतु तत्त्वज्ञानमांथी विविध पद आवां चिह्नवाळां स्थाने प्रसंगोपात्त उमेराय छे.

ओगणीससें ने बेतालीसे,
अद्भुत वैराग्यधार रे. धन्य० २

ओगणीससें ने सुडतालीसे,
समकित शुद्ध प्रकाश्युं रे;
श्रुत अनुभव वधती दशा,
निज स्वरूप अवभास्युं रे. धन्य० ३

त्यां आव्यो रे उदय कारमो,
परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीअे,
तेम वधे न घटे अेक रंच रे. धन्य० ४

वधतुं अेम ज चालियुं,
हवे दीसे क्षीण कांई रे;
क्रमे करीने रे ते जशे,
अेम भासे मनमांहि रे. धन्य० ५

यथाहेतु जे चित्तनो,
सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी,
अेम थयो निर्धार रे. धन्य० ६

आवी अपूर्व वृत्ति अहो,
थशे अप्रमत्त योग रे;
केवल लगभग भूमिका,
स्पर्शीने देहवियोग रे. धन्य० ७

अवश्य कर्मनो भोग छे,
भोगववो अवशेष रे;
तेथी देह अेक ज धारीने,
जाशुं स्वरूप स्वदेश रे. धन्य० ८

श्रीमद् राजचंद्र

---

*(६)

१. जड ने चैतन्य बन्ने द्रव्यनो स्वभाव भिन्न,
सुप्रतीतपणे बन्ने जेने समजाय छे;
स्वरूप चेतन निज, जड छे संबंध मात्र,
अथवा ते ज्ञेय पण परद्रव्य मांय छे;
अेवो अनुभवनो प्रकाश उल्लासित थयो,
जडथी उदासी तेने आत्मवृत्ति थाय छे;
कायानी विसारी माया, स्वरूपे शमाया अेवा,
निर्ग्रंथनो पंथ भव-अन्तनो उपाय छे.

२. देह जीव अेकरूपे भासे छे अज्ञान वडे,
क्रियानी प्रवृत्ति पण तेथी तेम थाय छे;
जीवनी उत्पत्ति अने रोग शोक दुःख मृत्यु,
देहनो स्वभाव जीव पदमां जणाय छे;
अेवो जे अनादि अेकरूपनो मिथ्यात्वभाव,
ज्ञानीनां वचन वडे दूर थई जाय छे;
भासे जड चैतन्यनो प्रगट स्वभाव भिन्न,
बन्ने द्रव्य निजनिज रूपे स्थित थाय छे.

[illegible] पुज्यश्रीसद्गुरु राजचंद्र

[illegible] द्वारा सप्रेम भेट

ओगणीससें ने बेतालीसे,
अद्भुत वैराग्यधार रे. धन्य० २

ओगणीससें ने सुडतालीसे,
समकित शुद्ध प्रकाश्युं रे;
श्रुत अनुभव वधती दशा,
निज स्वरूप अवभास्युं रे. धन्य० ३

त्यां आव्यो रे उदय कारमो,
परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीअे,
तेम वधे न घटे अेक रंच रे. धन्य० ४

वधतुं अेम ज चालियुं,
हवे दीसे क्षीण कांई रे;
क्रमे करीने रे ते जशे,
अेम भासे मनमांहि रे. धन्य० ५

यथा हेतु जे चित्तनो,
सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी,
अेम थयो निर्धार रे. धन्य० ६

आवी अपूर्व वृत्ति अहो,
थशे अप्रमत्त योग रे;
केवल लगभग भूमिका,
स्पर्शीने देहवियोग रे. धन्य० ७

अवश्य कर्मनो भोग छे,
भोगववो अवशेष रे;
तेथी देह अेक ज धारीने,
जाशुं स्वरूप स्वदेश रे. धन्य० ८

श्रीमद् राजचंद्र

---

*(६)

१. जड ने चैतन्य बन्ने द्रव्यनो स्वभाव भिन्न,
सुप्रतीतपणे बन्ने जेने समजाय छे;
स्वरूप चेतन निज, जड छे संबंध मात्र,
अथवा ते ज्ञेय पण परद्रव्य मांय छे;
अेवो अनुभवनो प्रकाश उल्लासित थयो,
जडथी उदासी तेने आत्मवृत्ति थाय छे;
कायानी विसारी माया, स्वरूपे शमाया अेवा,
निर्ग्रंथनो पंथ भव-अन्तनो उपाय छे.

२. देह जीव अेकरूपे भासे छे अज्ञान वडे,
क्रियानी प्रवृत्ति पण तेथी तेम थाय छे;
जीवनी उत्पत्ति अने रोग शोक दुःख मृत्यु,
देहनो स्वभाव जीव पदमां जणाय छे;
अेवो जे अनादि अेकरूपनो मिथ्यात्वभाव,
ज्ञानीनां वचन वडे दूर थई जाय छे;
भासे जड चैतन्यनो प्रगट स्वभाव भिन्न,
बन्ने द्रव्य निजनिज रूपे स्थित थाय छे.

श्रीमद् राजचंद्र

महत्तत्व महनीयमहः, महाधाम गुणधाम;
चिदानंद परमातमा, वंदो रमता राम.

---

७. श्री सद्‌गुरुभक्तिरहस्य.

(भक्तिना वीश दोहरा)

हे प्रभु ! हे प्रभु ! शुं कहुं, दीनानाथ दयाळ;
हुं तो दोष अनंतनुं, भाजन छुं करुणाळ. १

शुद्ध भाव मुजमां नथी, नथी सर्व तुज रूप;
नथी लघुतां के दीनता, शु कहुं परम स्वरूप ? २

नथी आज्ञा गुरुदेवनी, अचळ करी उरमांहि;
आपतणो विश्वास दृढ, ने परमादर नांहि. ३

जोग नथी सत्संगनो, नथी सत्सेवा जोग;
केवळ अर्पणता नथी, नथी आश्रय अनुयोग. ४

'हुं पामर शुं करी शकुं,' अेवो नथी विवेक;
चरण शरण धीरज नथी, मरण सुधीनी छेक. ५

अचिंत्य तुज माहात्म्यनो, नथी प्रफुल्लित भाव;
अंश न अेके स्नेहनो, न मळे परम प्रभाव. ६

अचळरूप आसक्ति नहि, नहि विरहनो ताप;
कथा अलभ्य तुज प्रेमनी, नहि तेनो परिताप. ७

भक्तिमार्ग प्रवेश नहि, नहि भजन दृढ भान;
समज नहि निजधर्मनी, नहि शुभ देशे स्थान. ८

काळदोष कळिथी थयो, नहि मर्यादा धर्म;
तोय नहि व्याकुळता, जुओ प्रभु मुज कर्म. ९

सेवाने प्रतिकूळ जे, ते बंधन नथी त्याग;
देहेंद्रिय माने नहि, करे बाह्य पर राग. १०

तुज वियोग स्फुरतो नथी, वचन नयन यम नांहि;
नहि उदास अनभक्तथी, तेम गृहादिक मांहि. ११

अहंभावथी रहित नहि, स्वधर्म संचय नांहि;
नथी निवृत्ति निर्मळपणे, अन्य धर्मनी कांई. १२

अेम अनंत प्रकारथी, साधन रहित हुंय;
नहीं अेक सद्गुण पण, मुख बतावुं शुंय? १३

केवळ करुणा-मूर्ति छो, दीनबंधु दीननाथ;
पापी परम अनाथ छुं, ग्रहो प्रभुजी हाथ. १४

अनंत काळथी आथड्यो, विना भान भगवान;
सेव्या नहि गुरु संतने, मूक्युं नहि अभिमान. १५

संतचरणआश्रय विना, साधन कर्यां अनेक;
पार न तेथी पामियो, उग्यो न अंश विवेक. १६

सहु साधन बंधन थयां, रह्यो न कोई उपाय;
सत्साधन समज्यो नहि, त्यां बंधन शुं जाय? १७

प्रभु प्रभु लय लागी नहि, पड्यो न सद्गुरु पाय;
दीठा नहि निज दोष तो, तरीअे कोण उपाय? १८

अधमाधम अधिको पतित, सकळ जगतमां हुंय;
अे निश्चय आव्या विना, साधन करशे शुंय? १९

पडी पडी तुज पदपंकजे, फरि फरि मागुं अेज;
सद्गुरु संत स्वरूप तुज, अे द्रढता करी देज. २०

श्रीमद् राजचंद्र

८. आलोचना पाठ.

दोहा.

वंदो पांचों परमगुरु, चौविसौं जिनराज;
कहूं शुद्ध आलोचना, शुद्धि करनके काज. १

सखी छंद (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोप किये अति भारी;
तिनकी अब निवृत्ति काजा, तुम शरन लही जिनराजा. २

ईक बे ते चउ इन्द्री वा, मन-रहित-सहित जे जीवा;
तिनकी नहि करुना धारी, निरदई ह्वै घात विचारी. ३

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ;
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं. ४

शत आठ जु ईम भेदनतैं, अघ कीने पर छेदनतैं;
तिनकी कहुं कोलौं कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी. ५

विपरीत अेकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके;
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहि जात कहीने. ६

कुगुरुनकी सेव जु कीनी, केवल अदयाकर भीनी;
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुंगतिमधि दोष उपायो. ७

हिंसा पुनि जूठ जु चोरी, परवनितासों द्दग जोरी;
आरंभ परिग्रह भीनो, पनपाप जु या विधि कीनो. ८

सपरस रसना घ्रानको, चख कान विषय सेवनको;
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने. ९

फल पंच उदंवर खाये, मधु मांस मद्य चित्त चाहे;
नहिं अष्ट मूलगुणधारी, विसन जु सेये दुखकारी. १०

दुइवीस अभख ज़िन गाये, सो भी निशदिन भुंजाये;
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों कर उदर भरायो. ११

अनंतान जु वँधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो;
संज्वलन चौकरी गुनिये, सव भेद जु षोडश मुनिये. १२

परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद सँजोग;
पनवीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप कीये हम. १३

निद्रावश शयन कराइ, सुपनेमधि दोष लगाइ;
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविध विषफल खायो. १४

किये आहार निहार विहारा, इनमें नहि जतन विचारा;
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी भोजन खाई. १५

तव ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो;
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गई है. १६

मरजादा तुम ढिग लनी, ताहूमें दोष जु कीनी;
भिन भिन अब कैसें कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पईये. १७

हा! हा! मैं दुठ अपराधी, त्रसजीवनराशि विराधी;
थावरकी जतन न कीनी, उरमें करुणा नहि लीनी. १८

पृथिवी बहु खोद कराइ, महलादिक जागां चिनाई;
विनगाल्यो पुनि जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो. १९

हा! हा! मैं अदयाचारी, बहु हरित जु काय विदारी;
या मधि जीवनके खंदा, हम खाये धरि आनंदा. २०

हा! मैं परमाद वसाई, विन देखे अगनि जलाई;
ता मध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये. २१

विंधो अन्न राति पिसायो, इंधन बिनसोधि जलायो;
झाडू ले जागां बुहारी, चिंटिआदिक जीव विदारी. २२

जल छानि जीवानी कीनी, सोहू पुनि डारि जु दीनी;
नहिं जलथानक पहुँचाइ, किरिया विन पाप उपाई. २३

जल मल मोरिनमें गिरायो, कृमिकुल बहु घात करायो;
नदियनि बिच चीर धुवाये, कोसनके जीव मराये. २४

अन्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई;
तिनका नहिं जतन कराया, गरियारे धूप डराया. २५

पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरँभहिंसा साजे;
कीये तिसनावश भारी, करूना नहि रंच विचारी. २६

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता;
संतति चिरकाल उपाई, वानीतैं कहिय न जाई. २७

ताको जु उदय जब आयो, नानाविध मोहि सतायो;
फल भुंजत जिय दुःख पावे, वचतैं कैसें करि गावे. २८

तुम जनत केवलज्ञानी, दुःख दूर करो शिवथानी;
हम तौ तुम शरन लही है, जिन तारन बिरुद सही है. २९

जो गांवपति इक होवै, सो भी दुखिया दुःख खोवै;
तुम तीन भुवनके स्वामी, दुःख मेटो अंतरजामी. ३०

द्रौपदीको चीर बढायो, सीता प्रति कमल रचायो;
अंजनसे किये अकामी, दुःख मेटो अंतरजामी. ३१

मेरे अवगुण न चितारो, प्रभु अपनो विरुद निहारो;
सब दोषरहित करि स्वामि, दुःख मेटहु अंतरजामी. ३२

इन्द्रादिक पदवी न चाहूं, विषयनिमें नाहिं लुभाऊं;
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निजपद दीजे. ३३

दोहा

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय;
सब जीवनके सुख बढै, आनंद मंगल होय. ३४

अनुभव माणिक पारखी, जौहरी आप जिनंद;
येहि वर मोहि दीजीये, चरन शरन आनंद. ३५

आलोचनापाठ समाप्त.

---

९. सामायिक-पाठ (छ आवश्यक कर्म)

१ प्रतिक्रमण कर्म.

काल अनंत भ्रम्यो जगमें सहिये दुःख भारी,
जन्म मरण नित किये पापको व्है अधिकारी;
कोडि भवांतर मांहि मिलन दुर्लभ सामायिक,
धन्य आज मैं भयो जोग मिलियो सुखदायक. १.

हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अव,
ते सव मन वच काय योगकी गुप्ति विना लभ;
आप समीप हजूरमांहि मैं खडो खडो सव,
दोष कहुं सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब. २

क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्रानी,
दुःखसहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी;
बिना प्रयोजन अेकइन्द्रि बि ति चउ पंचेंद्रिय,
आप प्रसादहिं मिटे दोष जो लग्यो मोहि जिय. ३

आपसमें इक ठोर थापिकरी जे दुःख दीने,
पेलि दिये पगतलें दाबिकरी प्राण हरीने;
आप जगतके जीव जीते तिन सबके नायक,
अरज करुं मैं सुनो दोष मेटो दुःखदायक. ४

अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय,
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय;
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि,
यह पडिकोंणों कियो आदि षट्कर्ममांहि विधि. ५

२ प्रत्याख्यान कर्म.

जो प्रमाद वश होइ विराधे जीव घनेरे,
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे;
सो सब जूठो होहु जगतपतिके परसादै,
जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख दुःख न लाधैं. ६

मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ,
किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ;
निंदूं हूं मैं बारबार निज जियको गरहूं.
सब विधि धर्म उपाय पाय फिरि पापहि करहूं. ७

दुर्लभ हैं नरजन्म तथा श्रावककुल भारी,
सत्संगति-संयोग धर्म जिन श्रद्धा धारी;

जिन वचनामृत धार समावतैं जिनवानी,
तोहूं जीव संहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी. ८

इन्द्रियलंपट होय खोय निजन ज्ञानजमा सब,
अज्ञानी जिम करै तिसी विधि हिंसक व्है अव;
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले,
ते सब दोष किये निंदू अब मनवचतोले. ९

आलोचनविधिथकी दोष लागे जु घनेरे,
ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे;
वारवार ईस भांति मोह मद दोष कुटिलता,
ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता. १०

३ सामायिक कर्म.

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है,
सब जिय मोसम समता राखो भाव लग्यो है;
आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूं सामायिक,
संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायिक. ११

पृथिवी जल अर अग्नि वायु चउ काय वनस्पति,
पंचहि थावरमांहि तथा त्रसजीव बसैं जित;
वे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रियमाहिं जीव सब,
तिनसैं क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब. १२

इस अवसरमें मेरे सब सम कंचन अरू त्रण,
महल मसान समान शत्रु अर मित्रहु सम गण;
जन्मन मरन समान जान हम समता कीनी,
सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी. १३

मेरो है ईक आतम तामैं ममत जु कीनो,
और सवै मम भिन्न जानि समतारस भीनो;
मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सवैं यह,
मोतैं न्यारे जानि यथारथ रूप कर्यो गह. १४

मैं अनादि जगजालमांहिं फँसि रूप न जाण्यो,
अेकेंद्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो;
ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी,
भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी. १५

४ वन्दना कर्म.

नमौं रिषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको,
संभव भवदुःखहरन करन अभिनंद शर्मको;
सुमति सुमतिदातार तार भवसिंधु पार कर,
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीतिप्रीति धर. १६

श्री सुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्धकर,
श्री चंद्रप्रभ चंद्रकांतिसम देह कांतिधर;
पुष्पदंत दमि दोषकोष भवि पोष रोषहर,
शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर. १७

श्रेयरूप जिनश्रेय धेय नित सेय भव्यजन,
वासुपूज्य शत पूज्य वासवादिक भवभय हन;
विमल विमलमति देन अंतगत है अनंत जिन,
धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांति विधायिन. १८

कुंथु कुंथुमुख जीव पाल अरनाथ जालहर,
मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारन प्रचारधर;

मुनिसुव्रत व्रतकरन नमत सुरसंघहि नमि जिन,
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथमांहि ज्ञानघन १९
पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपल सम मोक्षरमापति,
वर्द्धमान जिन नमा वमौं भवदुःख कर्मकृत;
या विधि मैं जिनसंघरूप चउवीस संख्य धर,
स्तऊं नमूं हूं वारवार वंदूं शिवसुखकर. २०

५ स्तवन कर्म.

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति,
वर्द्धमान अतिवीर वंदिहौं मनवचतनकृत;
त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं,
वंदूं नित प्रति कनकरूपतनु पाप निकंदूं. २१

सिद्धारथ नृपनंद द्वंद दुःख दोष मिटावन,
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उद्धारन;
कुंडलपुर करि जन्म जगत जिय आनंदकारन,
वर्ष वहत्तरि आयु पाय सबही दुःख-टारन. २२

सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्ममरनभय,
वाल ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय;
दे उपदेश उद्धारि तारि भवसिंधु जीवघन,
आप वसे शिमांहि ताहि वंदो मनवचतन. २३

जाके वंदनथकी दोष दुःख दूरहि जावे,
जाके वंदन थकी मुक्तितिय सन्मुख आवै;
जाके वंदनथकी वंद्य होवैं सुरगनके,
अैसे वीर जिनेश वंदिहौं क्रमयुग तिनके. २४

सामायिक षट्कर्ममांहि वंदन यह पंचम,
वंदे वीर जिनेंद्र इन्द्रशतवंद्य वंद्य मम;

जन्ममरण भय हरो करो अघशांति शांतिमय,
मैं अघकोश सुपोष दोषको दोष विनाशय. २५

६ कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्गविधान करुं अंतिम सुखदाई,
काय त्यजनमय होय काय सबको दुःखदाई;
पूरव दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं,
जिनगृह वंदन करुं हरुं भव पापतिमिर मैं. २६

शिरोनती मैं करुं नमुं मस्तक कर धरिकैं,
आवर्तादिक क्रिया करुं मनवचमद हरिकैं;
तीनलोक जिनभवनमांहि जिन हैं जु अकृत्रिम,
कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वीपमांहि वंदौं जिम. २७

आठकोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणुं,
च्यारि शतक परि असी अेक जिनमंदिर जाणुं;
व्यंतर ज्योतिषिमांहि संख्यरहिते जिनमंदिर,
जिनगृह वंदन करुं हरहु मम पाप संघकर. २८

सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक,
सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक;
श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक,
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुःखहानक. २९

जे भवि आतमकाजकरण उद्यमके धारी,
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी;
राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब,
बुध 'महाचंद्र' विलाय जाय तातैं कीज्यो अब. ३०

सामायिकपाठ समाप्त.

---

१०. मेरी भावना.

सद्गुरु श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठपद,-सेवाथी शुद्ध ज्ञान थशे;
अवर उपासन कोटि करो पण, श्रीहरिथी नहि हेत थशे.

* (ए देशी)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया,
सब जीवोंको मोक्षमार्गका निःस्पृह हो, उपदेश दिया;
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति भावसें प्रेरित हो यह, चित्त उसीमें लीन रहो. १

विषयोंकी आशा नहिं जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं,
निज परके हित साधनमें जो, निशदिन तत्पर रहते हैं;
स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या, विना खेद जो करते हैं,
अैसे ज्ञानी साधु जगतके, दुःखसमूहको हरते हैं. २

रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,
उनही जैसी चर्यामें यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे;
नहीं सताऊं कोसी जीवको, जूठ कभी नहि कहा करुं,
परधन वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करुं. ३

अहंकारका भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करुं,
देख दूसरोंकी वढतीको, कभी न ईर्षा-भाव धरुं;
रहे भावना अैसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करुं,
बने जहांतक इस जीवनमें, औरौंका उपकार करुं. ४

मैत्रीभाव जगतमें मेरा, सब जीवोंसे नित्य रहे,
दीन-दुःखी जीवोंपर मेरे, ऊरसे करुणास्रोत बहे;
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रक्खूं मैं उनपर, अैसी परिणति हो जावे. ५

गुणीजनोंको देख हृदयमें, मेरे प्रेम उमड आवे,
बने जहांतक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे;
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे. ६

कोइ बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों बर्षोतक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे;
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्गसें मेरा, कभी न पद डिगने पावे. ७

होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न गभरावे,
पर्वत नदी स्मशान भयानक, अटवीसे नहि भय खावे;
रहे अडोल अकंप निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे,
ईष्टवियोग-अनिष्टयोगमें, सहनशीलता दिखलावे. ८

सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न गभरावे,
वैर पाप-अभिमान छोड जग, नित्य नये मंगल गावे;
घर घर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञानचरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावें. ९

ईति-भीति व्यापे नहिं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजाका किया करे;
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्तिसे जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगतमें फैल सर्व हित किया करे. १०

फैले प्रेम परस्पर जगमें, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय-कटुक-कठोर-शब्द नहिं, कोई मुखसें कहा करे;
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे, देशोन्नतिरत रहा करे,
वस्तुस्वरूप विचार खुशीसे, सब दुःख-संकट सहा करे. ११

११. कैवल्यबीज शुं ?

(त्रोटक छंद)

यम नियम संयम आप कियो,
पुनि त्याग विराग अथाग लह्यो;
वनवास लियो मुख मौन रह्यो,
दृढ आसन पद्म लगाय दियो. १

मनपौन-निरोध स्वबोध कियो,
हठजोग प्रयोग सु तार भयो;
जप भेद जपे तप त्यौंहि तपे,
उरसेंहि उदासी लही सबपें. २

सब शास्त्रनके नय धारि हिये,
मतमंडन-खंडन भेद लिये;
वह साधन बार अनंत कियो,
तदपि कछु हाथ हजु न पर्यो. ३

अब क्यौं न विचारत है मनसें,
कछु और रहा उन साधनसें?
बिन सद्गुरु कोय न भेद लहे,
मुख आगल हैं कह बात कहे ? ४

करुना हम पावत हे तुमकी,
वह बात रही सुगुरु गमकी;
पलमें प्रगटे मुख आगलसें,
जब सद्गुरुचर्न सुप्रेम बसें. ५

तनसें, मनसें, धनसें, सबसें,
गुरुदेवकी आन स्व-आत्म बसें;

तब कारज सिद्ध बने अपनो,
रस अमृत पावहि प्रेम घनो. ६

वह सत्य सुधा दरसावहिंगे,
चतुरांगुल हे द्रगसें मिलहे;
रस देव निरंजन को पिवही,
गहि जोग जुगोजुग सो जीवही. ७

परप्रेम-प्रवाह वढे प्रभुसें.
सब आगम भेद सु ऊर बसें;
वह केवलको बीज ग्यानि कहे,
निजको अनुभौ बतलाई दिये. ८

श्रीमद् राजचंद्र

---

१२. क्षमापना. ✓

हे भगवान! हुं बहु भूली गयो, में तमारां अमूल्य वचनोने लक्षमां लीधां नहीं. में तमारां कहेलां अनुपम तत्त्वनो विचार कर्यो नहीं. तमारा प्रणीत करेला उत्तम शीलने सेव्युं नहीं. तमारां कहेलां दया, शांति, क्षमा अने पवित्रता में ओळख्यां नहीं. हे भगवन्! हुं भूल्यो, आथड्यो, रझळ्यो अने अनंत संसारनी विटम्बनामां पड्यो छुं. हुं पापी छुं. हुं बहु मदोन्मत्त अने कर्म रजथी करीने मलीन छुं. हे परमात्मा! तमारां कहेलां तत्त्व विना मारो मोक्ष नथी. हुं निरंतर प्रपंचमां पड्यो छुं; अज्ञानथी अंध थयो छुं; मारामां विवेकशक्ति नथी,

हुं हवे तमारुं, तमारा धर्मनुं अने तमारा मुनिनुं शरण ग्रहुं छुं. मारा अपराध क्षय थई हुं ते सर्व पापथी मुक्त थाउं अे मारी अभिलाषा छे. आगळ करेलां पापोनो हुं हवे पश्चात्ताप करुं छुं. जेम जेम हुं सूक्ष्म विचारथी ऊंडो उतरुं छुं, तेम तेम तमारा तत्त्वना चमत्कारो मारा स्वरूपनो प्रकाश करे छे. तमे निरागी, निर्विकारी, सच्चिदानंदस्वरूप, सहजानंदी, अनंतज्ञानी, अनंतदर्शी अने त्रैलोक्य-प्रकाशक छो. हुं मात्र मारा हितने अर्थे तमारी साक्षीअे क्षमा चाहुं छुं. अेक पळ पण तमारां कहेलां तत्त्वनी शंका न थाय, तमारा कहेला रस्तामां अहोरात्र हुं रहुं, अे ज मारी आकांक्षा अने वृत्ति थाओ! हे सर्वज्ञ भगवान! तमने हुं विशेष शुं कहुं? तमाराथी कंई अजाण्युं नथी. मात्र पश्चात्तापथी हुं कर्मजन्य पापनी क्षमा इच्छुं छुं.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

वि. सं. १९४१ — श्रीमद् राजचंद्र

---

१३. छ पदनो पत्र.

अनन्य शरणना आपनार अेवा श्री सद्‌गुरुदेवने
अत्यंत भक्तिथी नमस्कार.

शुद्ध आत्मस्वरूपने पाम्या छे अेवा ज्ञानी पुरुषोअे नीचे कह्यां छे ते छ पदने सम्यक्‌दर्शननां निवासनां सर्वोत्कृष्ट स्थानक कह्यां छे.

प्रथम पदः—

आत्मा छे. जेम घटपट आदि पदार्थो छे तेम आत्मा पण छे. अमुक गुण होवाने लीधे जेम घटपट आदि होवानुं प्रमाण

छे, तेम स्वपरप्रकाशक अेवी चैतन्यसत्तानो प्रत्यक्ष गुण जेने विषे छे अेवो आत्मा होवानुं प्रमाण छे.

बीजुं पदः—

आत्मा नित्य छे. घटपट आदि पदार्थो अमुक काळवर्ती छे. आत्मा त्रिकाळवर्ती छे. घटपटादि संयोगे करी पदार्थ छे. आत्मा स्वभावे करीने पदार्थ छे, केमके तेनी उत्पत्ति माटे कोई पण संयोगो अनुभव योग्य थता नथी. कोई पण संयोगी द्रव्यथी चेतनसत्ता प्रगट थवा योग्य नथी, माटे अनुत्पन्न छे. असंयोगी होवाथी अविनाशी छे, केमके जेनी कोई संयोगथी उत्पत्ति न होय, तेनो कोईने विषे लय पण होय नहीं.

त्रीजुं पदः—

आत्मा कर्त्ता छे. सर्व पदार्थ अर्थक्रियासंपन्न छे. कंई ने कंई परिणामक्रियासहित ज सर्व पदार्थ जोवामां आवे छे. आत्मा पण क्रियासंपन्न छे. क्रियासंपन्न छे माटे कर्त्ता छे. ते कर्त्तापणुं त्रिविध श्री जिने विवेच्युं छे; परमार्थथी स्वभाव परिणतिअे निज स्वरूपनो कर्त्ता छे. अनुपचरित (अनुभवमां आववायोग्य-विशेष संबंध सहित) व्यवहारथी ते आत्मा द्रव्यकर्मनो कर्त्ता छे. उपचारथी घर, नगर आदिनो कर्त्ता छे.

चोथुं पदः—

आत्मा भोक्ता छे. जे जे कंई क्रिया छे ते ते सर्व सफळ छे, निरर्थक नथी. जे कंई पण करवामां आवे तेनुं फल भोगववामां आवे अेवो प्रत्यक्ष अनुभव छे. विष खाधाथी विषनुं फल, साकर खावाथी साकरनुं फल, अग्निस्पर्शथी ते अग्निस्पर्शनुं फल, हीमने स्पर्श करवाथी हीमस्पर्शनुं जेम

थया, ते सत्पुरुषना उपकारने सर्वोत्कृष्ट भक्तिअे नमस्कार हो ! नमस्कार हो !

मुं. फाल्गुन १९५०

श्रीमद् राजचंद्र



१४.

वीतरागनो कहेलो परम शांत रसमय धर्म पूर्ण सत्य छे अेवो निश्चय राखवो, जीवना अनधिकारीपणाने लीधे तथा सत्पुरुषना योग विना समजातुं नथी; तो पण तेना जेवुं जीवने संसाररोग मटाडवाने वीजुं कोई हितकारी औषध नथी अेम वारंवार चिंतवन करवुं.

आ परम तत्त्व छे; तेनो मने सदाय निश्चय रहो, अे यथार्थ स्वरूप मारा हृदयने विषे प्रकाश करो ! अने जन्म मरणादि बंधनथी अत्यंत निवृत्ति थाओ ! निवृत्ति थाओ !

हे जीव, आ क्लेशरूप संसार थकी विराम पाम, विराम पाम, कंईक विचार, प्रमाद छोडी जागृत था, जागृत था; नहि तो रत्नचिंतामणि जेवो आ मनुष्यदेह निष्फळ जशे.

हे जीव, हवे तारे सत्पुरुषनी आज्ञा निश्चये उपासवा योग्य छे.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः



हे काम ! हे मान ! हे संगउदय !
हे वचनवर्गणा ! हे मोह ! हे मोहदया !
हे शिथिलता ! तमे शा माटे अंतराय करो छो ?
परम अनुग्रह करीने हवे अनुकूळ थाव ! अनुकूळ थाव !

श्रीमद् राजचंद्र

---

१५. प्रातःकाळनी स्तुति

महादेव्याः कुक्षिरत्नं, *शब्दजितवरात्मजम्;
राजचंद्रमहं वंदे, तत्त्वलोचनदायकम्. १.

जयगुरुदेव! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामी.

ॐकारं बिंदु-संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमोनमः २.

मंगलमय मंगलकरण, वीतराग विज्ञान;
नमो ताहि जाते भये, अरिहंतादि महान. ३.

विश्वभाव व्यापि तदपि, अेक विमल चिद्रूपः
ज्ञानानंद महेश्वरा, जयवंता जिनभूप. ४.

महत्तत्त्व महनीय महः महाधाम गुणधाम;
चिदानंद परमातमा, वंदो रमता राम. ५.

तीनभुवनचूडारतन, सम श्री जिनके पाय;
नमत पाइअे आप पद, सब विधि बंध नशाय. ६

नमुं भक्तिभावे, ऋषभ जिन शांति अघ हरो,
तथा नेमि पार्श्व, प्रभु मम सदा मंगल करो;
महावीरस्वामी भुवनपति कापो कुमतिने,
जिना शेषा जे ते सकल मुज आपो सुमतिने. ७.

अर्हंतो भगवंत इन्द्रमहिताः! सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वंतु वो मंगलम्. ८.

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा—
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्

---

* पाठान्तर : शब्दजितरवात्मजम्

इरियावहियं

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं
पडिक्कमामि ॥ इच्छं ॥ इच्छामि पडिक्कमिउं १
इरियावहियाअे विराहणाअे २
गमणागमणे ३
पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे
ओसा उत्तिंग पणगदग मट्टीमक्कडा संताणासंकमणे ४
जे मे जीवा विराहिया ५
अेगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया; पंचिंदिया ६
अभिहया, वत्तिया, लेसिया संघाइया, संघट्टिया,
परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं
संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स
मिच्छामि दुक्कडं. ७

तस्स उत्तरी

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं,
विसोहीकरणेणं विसल्लीकरणेणं,
पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाअे,
ठामि काउस्सगं १

अन्नत्थ उससिअेणं

अन्नत्थ उससिअेणं नीससिअेणं खासिअेणं,
छीअेणं जंभाइअेणं; उड्डुअेणं, वायनिसग्गेणं,
भमलिअे, पित्तमुच्छाअे. १
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं. २

अेवमाइअेहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ,
हुज्ज मे काउस्सग्गो. ३
जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि ४
ताव कायं, ठाणेणं मोणेणं झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि. ५

लोगस्स.

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे;
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली. १
उसभमजिअं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमइं च;
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे. २
सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंसवासुपुज्जं च;
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि. ३
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च;
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च. ४
अेवं मअे अभिथुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा;
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु. ५
कित्तिय वंदिय महिया, जे अे लोगस्स उत्तमा सिद्धा;
आरुग्गबोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु. ६
चंदेसु निम्मलयरा आइच्चेसु अहियं पयासयरा;
सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु. ७

चैत्यवंदनो.

(१)

सकलकुशलवल्ली पुष्करावर्तमेघो,
दुरिततिमिरभानु कल्पवृक्षोपमानः

भवजलनिधिपोतः सर्वसंपत्तिहेतुः
स भवतु सततं वः श्रेयसे शांतिनाथः
श्रेयसे पार्श्वनाथः

---

(२)

परम कृपाळु देव प्रति, विनय विनंति अेहः
त्रय तत्त्व त्रण रत्न मुज, आपो अविचल स्नेह.
तत्त्वोपदेष्टा तुम तणा, मार्ग तणे अनुसार;
लक्ष लक्षण रहो सदा, खरेखरो अेक तार.
मिथ्या तमने फेडवा, चंद्र सूर्य तुम ज्ञान;
दर्शननी सुविशुद्धिथी, भाव चरण मल हान.
ईच्छा वर्ते अंतरे, निश्चय दृढ संकल्प;
मरण समाधि संपजो, न रहो कांई कुविकल्प.
कामितदायक पद शरण, मन स्थिर कर प्रभु ध्यान;
नाम स्मरण गुरु राजनुं, प्रगट कल्याण-निदान.
भुवनजन-हितकर सदा, कृपाळु कृपानिधान,
पावन करता पतितने, स्थिर गुणनुं दई दान.
सर्वज्ञ सद्गुरु प्रति, फरि फरि अरज अे नेक;
लक्ष रहो प्रभु स्वरूपमां, हो रत्नत्रय अेक.

---

(३)

पंच परमेष्ठिगुण चैत्यवंदन.

बार गुण अरिहंत देव प्रणमीजे भावे;
सिद्ध आठ गुण समरतां दुःख दोहग जावे.
आचारज गुण छत्रीस, पंचवीस उवज्झाय;
सत्तावीस गुण साधुना, जपतां सुख थाय.

अष्टोत्तर सय गुण मली, अेम समरो नवकार;
धीर विमल पंडित तणो, नय प्रणमें नित सार. ३

---

(४)

जगचिंतामणि चैत्यवंदन.

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् चैत्यवंदन करुं ?॥ इच्छं॥
जगचिंतामणि, जगनाह, जगगुरु, जगरक्खण,
जगबंधव, जगसथ्थवाह, जगभावविअक्खण,
अठ्ठावयसंठवियरूव, कमठ्ठविणासण, चउवीसंपि
जिणवरा जयंतु अप्पडिहयसासण. १

कम्मभूमिहिं कम्मभूमिहिं, पढमसंघयणि, उक्कोसय
सत्तरिसय, जिणवराण विहरंत लब्भई, नवकोडीहिं
केवलिण, कोडीसहस्सनव साहु गम्मई,
संपई जिणवर वीस मुणी, बीहुंकोडिहिं वरनाणि
समणह कोडिसहसदुअ, थुणिजिअ निच्च विहाणि. २

जयउ सामी जयउ सामी, रिसह सत्तुंजि, उज्जिंते
पहु नेमिजिण, जयउ वीर सच्चउरिमंडण;
भरुअछ्छहिं मुणिसुव्वय, मुहरि पास दुहदुरिअखंडण;
अवर विदेहिं तिथ्थयरा, चिहुं दिसि विदिसि जिंकेवि;
तीआणागयसंपईअ, वंदुं जिण सव्वेवि. ३

सत्ताणवईसहस्सा, लख्खा छप्पन्न अठ्ठकोडीओ;
बत्तीसय बासिआइं तिअलोअे चेईअे वंदे ४
पनरस कोडीसयाइं कोडी बायाल लख्ख अडवन्ना;
छत्तीस सहस असिइं, सासयबिंबाइं पणमामि. ५

जंकिंचि.

जं किंचि नाम तिथ्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोअे;
जाइं जिणबिंवाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि. १

नमुथ्थुणं वा शक्रस्तव.

नमुथ्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं; १
आइगराणं, तिथ्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं; २
पुरिसुत्तमाणं, पुरिससिंहाणं, पुरिसवरपुंडरीआणं.
पुरिसवरगंधहथ्थीणं; ३
लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहिआणं,
लोगपईवाण, लोगपज्जोअगराणं; ४
अभयदयाणं, चख्खुदयाणं, मग्गदयाणं,
सरणदयाणं, जीवदयाणं; बोहिदयाणं; ५
धम्मदयाणं, धम्मदेसियाणं, धम्मनायगाणं,
धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं,
दीवो ताणं सरण गई पईट्ठा; ६
अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं, विअट्टछउमाणं; ७
जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं,
बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं; ८
सवन्नूणं सव्वदरिसिणं, सिवमयलमरुअ-
मणंतमख्खयमव्वाबाहमपुणराविति सिद्धिगइनामधेय
ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं, जिअभयाणं; ९
जेअ अईआ सिद्धा, जेअ भविस्संति अणागअे
काले, संपई अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि. १०

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरियलोए अ;
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तथ्थ संताइं. १

जावंत केविसाहू.

जावंत के वि साहू, भरहेरवय महाविदेहे अ;
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंड विरयाणं. १

परमेष्ठि नमस्कार.

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः

उपसर्गहर स्तवन.

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं;
विसहरविसनिन्नासं, मंगलकल्लाणआवासं. १

विसहर फुलिंगमंतं, कंठे धारेई जो सया मणुओ;
तस्स गहरोगमारि, दुठ्ठजरा जंति उवसामं. २

चिठ्ठउ दूरे मंतो तुज पणामोवि बहुफलो होइ;
नरतिरिअेसुवि जीवा, पावंति न दुःखदोगच्चं. ३

तुह सम्मत्ते लद्धे चिंतामणि कप्पपायवप्भहिअे;
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं. ४

ईअ संथुओ महायस, भत्तिप्भरनिप्भरेण हिअअेण;
ता देव दिज्ज बोहिं, भवे भवे पासजिणचंद. ५

—: भक्तिना छंद तथा स्तवनो :—

जय वीयराय जगगुरु, होउ मम तुह पभावओ भयवं;
भवनिव्वेओ मग्गा-णुसारिआ ईट्ठफलसिद्धि. १

लोगविरुद्धच्चाओ गुरुजणपूआ परत्थकरणं च;
सुहगुरुजोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा. २

वारिज्जई जईवि निआणवंधणं वीयराय तुह समअे;
तहवि मम हुज्ज सेवा, भवे भवे तुम्ह चलणाणं. ३

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, समाहिमरणं च वोहिलाभो अ;
संपज्जओ मह अेअं, तुह नाह पणाम करणेणं. ४

सर्व मंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकारणं;
प्रधानं सर्व धर्माणां, जैनं जयति शासनं. ५

अरिहंत चेइआणं.

अरिहंतचेइआणं, करेमि काउस्सग्गं. १

वंदणवत्तिआअे, पूअणवत्तिआअे, सक्कारवत्तिआअे;
सम्माणवत्तिआअे, बोहिलाभवत्तिआअे,
निरुवसग्गवत्तिआअे; २

सद्धाअे, मेहाअे, धीइअे, धारणाअे, अणुप्पेहाअे,
वढ्माणीअे, ठामि काउस्सग्गं. ३

कल्लाणकंदं स्तुति.

कल्लाणकंदं पढमं जिणंदं, संतिंतआ नेमिजिणं मुणिंदं;
पासं पयासं सुगुणिक्कठाणं, भत्तिई वंदे सिरिवद्धमाणं. १

१७. वंदन तथा प्रणिपातस्तुति.

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार.
शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुअे आपीओ वर्तुं चरणाधीन.
आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास दास हु दास छुं आप प्रभुनो दीन.
षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप,
म्यान थकी तरवारवत्, अे उपकार अमाप.
जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत.
परम पुरुष प्रभु सद्गुरु, परमज्ञान सुखधाम;
जेणे आप्युं भान निज, तेने सदा प्रणाम.
देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां, हो वंदन अगणित.

हे परमकृपाळु देव ! जन्म, जरा, मरणादि सर्व दुःखोनो अत्यंत क्षय करनारो अेवो वीतराग पुरुषनो मूळ धर्म (मार्ग) आप श्रीमदे अनंतकृपा करी मने आप्यो, ते अनंत उपकारनो प्रतिउपकार वाळवा हुं सर्वथा असमर्थ छुं; वळी आप श्रीमत् कंई पण लेवाने सर्वथा निस्पृह छो, जेथी हुं मन, वचन, कायानी अेकाग्रताथी आपना चरणारविंदमां नमस्कार करुं छुं. आपनी परम भक्ति अने वीतराग पुरुषना मूळ धर्मनी उपासना मारा हृदयने विषे भवपर्यंत अखंड जागृत रहो अेटलुं मागुं छुं ते सफळ थाओ.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ।

१८. श्री सद्गुरु उपकार-महिमा

प्रथम नमुं गुरुराजने, जेणे आप्युं ज्ञान;
ज्ञाने वीरने ओळख्या, टळयुं देह-अभिमान. १

ते कारण गुरुराजने प्रणमुं वारंवार;
कृपा करी मुज उपरे, राखो चरण मोझार. २

पंचम काळे तुं मळयो, आत्मरत्न-दातार;
कारज सार्यां माहरां, भव्य जीव हितकार. ३

अहो! उपकार तुमारडो, संभारुं दिनरात;
आवे नयणे नीर बहु, सांभळतां अवदात. ४

अनंत काळ हुं आथड्यो, न मळया गुरु शुद्ध संत,
दुषम काळे तुं मळयो, राज नाम भगवंत. ५

राज राज सौ को कहे, विरला जाणे भेद;
जे जन जाणे भेद ते, ते करशे भव छेद. ६

अपूर्व वाणी ताहरी, अमृत सरखी सार;
वळी तुज मुद्रा अपूर्व छे : गुणगण रत्न भंडार. ७

तुज मुद्रा तुज वाणीने, आदरे सम्यक्त्वंत;
नहीं बीजानो आशरो, अे गुह्य जाणे संत. ८

बाह्य चरण सुसंतनां, टाळे जननां पाप;
अंतरचारित्र गुरुराजनुं, भांगे भव संताप. ९

---

१९. श्री सद्गुरुस्तुति

सद्गुरु पदमें समात है, अर्हंतादि पद सर्व;
तातैं सद्गुरु चरणकूं; उपासो तजी गर्व.

सद्गुरुचरणं अशरणशरणं, भ्रम-आतपहर रवि-शशिकिरणं;
जयवंत युगलपद जयकरणं, मम सद्गुरुचरण सदा शरणं. १
पद सकलकुशलवल्ली सम ध्याओ, पुष्कर संवर्तमेघ भावो;
सुरगोसम पंचामृत-झरणं—मम० २
पद कल्प-कुंभ कामित दाता, चित्रावली चिंतामणि ख्याता;
पद संजीविनी हरे जरमरणं - मम० ३
पद मंगल कमला-आवासं, हरे दासनां आशपाशत्रासं;
चंदन चरणं चित्तवृत्तिठरणं—मम० ४
दुस्तर भव तरण काज साजं, पद सफरी जहाज अथवा पाजं
मही महीधरवत् अभराभरणं—मम० ५
संसार कांतार पार करवा, पद सार्थवाह सम गुण गरवा;
आश्रित शरणापन्न उद्धरणं—मम० ६
श्रीमद् सद्गुरुपद पुनितं, मुमुक्षु-जनमन अमित वित्तं;
गंगाजलवत् मनमल-हरणं—मम० ७
पदकमल अमल मम दिलकमलं, संस्थापित रहो अखंड अचलं;
रत्नत्रय हरे सर्वावरणं—मम० ८

अनंत चोवीशी जिन नमुं, सिद्ध अनंती क्रोड;
जे मुनिवर मुक्ते गया, वंदुं बे कर जोड.

---

२०. प्रभु-उपकार

कोन उतारे पार. प्रभुविन कौन उतारे पार ?
भवोदधि अगम अपार, प्रभुविन कौन उतारे पार ?
कृपा तिहारीतें हम पायो, नाम मंत्र आधार. प्रभु०
निको तुम उपदेश दियो हे, सब सारनको सार-प्रभु०

हलके है चाले सें निकसे; वूडे जे शिरभार प्रभु०
उपकारीको नहि वीसरीओ; येहि धर्म-अधिकार-प्रभु०
धर्मपाल प्रभु तुं मेरे तारक; क्युं भूलुं उपकार प्रभु०

(मध्याह्न पहेलांनी भक्तिनो क्रम समय ९॥-११॥)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी. पृष्ठ १—२
वीश दोहरा—यमनियम—क्षमापना. पृष्ठ ६-१९-२०

२१. स्वर्गीय कविवर रूपचंद्रजी पांडे कृत.

जिनेंद्र पंचकल्याणक.

मंगलगीत या पंचमंगल

जस्या श्री गुरुराज जगत हित कारणे,
करवा अम उद्धार वारी जाउं वारणे. अे देशी

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिनशासनो,
सकलसिद्धिदातार सु, विघनविनासनो;
सारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकासनो,
मंगलकर चउसंघहि, पापपणासनो.

पापहि पणासन गुणहि गरुवा, दोष अष्टादश-रहिउ,
धरि ध्यान करम विनासि केवलज्ञान अविचल जिन लहिउ;
प्रभु पंचकल्याणक-विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं.
त्रैलोकनाथ सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं १

१. गर्भकल्याणकः—

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो,
अवधिग्यान-परवान, सु ईन्द्र पठाइयो;

रचि नव बारह जोजन नयरि सुहावनी,
कनकरयणमणिमंडित मंदिर अति वनी.
अति बनी पौरि पगार परिखा, सुवन उपवन सोहअे,
नर नारी सुंदर चतुरभेख सु; देख जनमन मोहअे;
तहँ जनकगृह छह मास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो,
पुनि रुचिकवासिनी जननि-सेवा,करहिं सब विधि हरसियो. २

सुर कुंजरसम कुंजर धवल धुरंधरो,
केसरि केसरसोभित, नखसिखसुंदरो;
कमला कलस-न्हवन, दुईदाम सुहावनी,
रविससिमंडल मधुर, मीनजुग पावनी.

पावनी कनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो,
कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो;
रमणिक अमरविमान फणिपति-भवनभुवि छवि छाजअे,
रुचि रतनरासि दिपंत दहन सु, तेजपुंज विराजअे. ३

ये सखि सोरह सुपने, सूती सयनहीं,
देखे माय मनोहर, पच्छिम-रयनहीं;
उठि प्रभात पिय पूछियो अवधि प्रकासियो,
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो.

भासियों फल तिहिं चिंति दंपति परम आनंदित भअे,
छहमासपरि नवमास पुनि तहँ, रयन दिन सुखसौं गअे;
गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सव सुख पावहीं.
भणि'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. ४

२. जन्मकल्याणकः—

मतिसुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो,
तिहूँलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो;

कल्पवासिघर घंट, अनाहद वज्जिया,
जोतिसि-घर हरिनाद, सहज गलगज्जिया.

गज्जिया सहज हि संख भावन-भुवन सबद सुहावने,
वितरनिलय पट्ट पटह बज्जहिं, कहत महिमा क्यों वने;
कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचै जानियो,
धनराज तब गजराज माया,-मयी निरमयो आनियो. ५

जोजन लाख गयंद वदन-सौ निरमअे,
वदन वदन वसु दंत, दंत सर संठअे;
सर सर सौ-पनवीस, कमलिनी छाजहीं,
कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं.

राज हि कमलिनि कमल ठोतर, सौ मनोहर दल वने,
दल दलहिं अपछर नटई नवरस, हावभाव सुहावने;
मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहअे,
गर घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहअे. ६

तिहिं करि हरि चढि आयउ, सुरपरिवारियो,
पुरहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो;
गुप्त जाय जिन जननीहि, सुख निद्रा रची,
मायामइ सिसु राखि तौ, जिन आन्यो सची.

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन त्रिपति न हूजिये,
तब परमहरषित हृदयहरना, साहस लोचन पूजिये;
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इद्र, उछंग धरि प्रभु लीनउ,
ईसान इद्र सु चंद्र छवि सिर छत्र प्रभुके दीनउ. ७

सनतकुकार महेन्द्र, चमर दुई ढारहीं,
सेस सक्र जयकार, सबद उच्चारहीं;

उच्छवसहित चतुरविध, सुर हरखित भअे
जोजन सहस निन्यायवै, गगन उलँघी गअे.

लँघि गये सुरगिरि जहाँ पांडुक—वन विचित्र विराजही,
पांडुक शिला तहँ अर्धचंद्रसमान मणि छवि छाजही;
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम. वसु उंची गनी,
वर अष्ट मंगल कनक कलसनि, सिंहपीठ सुहावनी. ८

रचि मणिमंडप सोभित, मध्य सिंहासनो,
थाप्यो पूरव मुख तहँ, प्रभु कमलासनो;
वाजई ताल मृदंग, भेरि वीणा घने,
दुंदुभिप्रमुखमधुरधुनि, अवर जु वाजने.

वाजनें वाजहि सचीं सब मिलि, धवल मंगल गावहीं,
पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब. देव कौतुक धावहीं;
भरिछीरसागर-जलजु हाथही हाथ सुरगन ल्यावहीं,
सौधर्म अरु ईसानइन्द्र सु कलस ले प्रभु न्हावहीं. ९.

वदन-उदरअवगाह, कलसगत जानिअे,
अेक चार वसु जोजन, मान प्रमानिअे;
सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरें,
पुनि सिंगारप्रमुख आ-चार सवई करें.

करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो.
धनपतिहिं सेवा राखी सुरपति. आप सुरलोकहिं गयो;
जनमाभिषेक महंत महिमा सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १०

———

३. तपकल्याणकः—

श्रमजलरहित, शरीर, सदा सब मलरहिउ,
छीर-वरन वर रुधिर, प्रथमआकृति लहिउ;
प्रथम सारसंहनन, सरूप विराजहीं,
सहज-सुगंध सुलच्छन,-मंडित छाजहीं.

छाजहि अतुल बल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने,
दस सहज अतिशय सुभग मूरति बाललील कहावने;
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचित उचित जु नित नअे,
अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगअे. ११

भवतन - भोग - विरत्त, कदाचित चिंतअे,
धन जोबन पिय पुत्त, कलत्त अनित्त अे;
कोउ न सरन मरनदिन, दुःख चहुँगतिभर्यो,
सुख दुःख अेकहि भोगत, जिय विधिवस पर्यो.

पर्यो विधिवस आन चेतन, आन जड जु कलेवरो,
तन असुचि, परतैं होय आस्रव, परिहरेतैं संवरो;
निरजरा तपबल होय, समकित विन सदा त्रिभुवन भम्यो,
दुर्लभ विवेक विना न कबहूं, परम धरमविषे रम्यो. १२

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाईया.
लौकांतिक वर देव, नियोगी आईया;
कुसुमांजलि दे चरन - कमल सिर नाईयो,
स्वयंबुद्ध प्रभु थुति करि, तिन समुझाईयो.

समुझाय प्रभुको गये निजपद पुनि महोच्छव हरि कियो;
रुचिरुचिर चित्र विचित्र सिबिका, कर सुनंदन बन लियो;
तहँ पंचमूठी लोच कीनो, प्रथम सिद्धनि नुति करी,
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिगह परिहरी. १३

मणिमयभाजन केश, परिद्विय सुरपती,
छीर-समुद्र जल खिपकरि, गयो अमरावती;
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो,
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो.

गयो कछू तहँ काल तपबल रिद्धि वसु विधि सिद्धिया,
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया;
खिपि सातयेंगुण जतनविन तहँ, तीनप्रकृतिजु बुधि बढिउ,
करि करण तीन प्रथम सुकलबल; खिपकसेनी प्रभु चढिउ. १४

प्रकृति छतीस नवैं गुण-थान विनासिया,
दसवैं सूच्छमलोभ,-प्रकृति तहँ नासिया,
सुकल ध्यान पद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो,
बारहवैं-गुण सोरह प्रकृति जु चूरियो.

चूरियो त्रेसठि प्रकृति ईहविध, घातिआ, करमनितनी,
तप कियो ध्यान प्रयंत बारह, विध त्रिलोकसिरोमनी;
निःक्रमणकल्यानक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १५

---

४. ज्ञानकल्याणकः—

तेरहवैं गुण थान, सयोगी जिनेसुरो,
अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो;
समवसरन तब धनपति, बहुविध निरमयो,
आगमजुगतिप्रमाण, गगनतल परिठयो.

परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहअे,
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बनक सुरनर मोहअे;
मुनिकल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योतिभौमभुवन तिया,
पुनि, भवन व्यंतर नभग सुर नर पसुनि कोठे बैठिया. १६

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने,
गंधकुटी सिंहासन कमल सुहावने;
तीन छत्र सिर सोहत, त्रिभुवन मोहअे,
अंतरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहअे.

सोहअे चोसठि चमर ढरत, असोकतरु तल छाजअे,
पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबद जुत तहँ, देवदुंदुभि बाजअे;
सुरपुहप वृष्टि, सुप्रभामंगल, कोटि रवि छबि छाजअे,
ईमि अष्ट अनुपम प्रातिहारिज, वर विभूति विराजअे. १७

दुईसै जोजन मान सुभिच्छ चहूँ दिसी,
गगनगमन अरु प्राणी,-वध नहिं अहनिसी;
निरुपसर्ग निरहार, सदा जग दीसअे,
आनन चार चहूंदिसि सोभित दीसअे.

दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपनो,
छाया विवर्जित सुद्ध फटिक समान तन प्रभुको बनो;
नहिं नयन पलक पतन कदाचित, केस नख सम छाजही,
ये घातियाछयजनित अतिसय, दस विचित्र विराजहीं. १८

सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिये,
सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिये;
सकल रितुज फल फूल, वनस्पति मन हरै,
दरपनसम मनि अवनि, पवनगति अनुसरै.

अनुसरै परमानन्द सबकौ, नारि नर जे सेवता,
जोजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं जहां मारुतदेवता;
पुनि करहिं मेघकुमार, गंधोदक सुवृष्टि, सुहावनी,
पदकमलतर सुर खिपई कमलसु, धरणि ससिसोभा बनी. १९

अमल गगन तल अरु दिसि तहँ अनुहारहीं.
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं;

धर्मचक्र चले आगें, रवि जहँ लाजहीं;
पुनि भृंगार-प्रमुख वसु, मंगल राजहीं.
राजहीं चौदह चारु अतिसय देवरचित सुहावने,
जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा वने;
तव इन्द्र आन कियो महोच्छव, सभा सोभित अति वनी,
धरमोपदेस दियो तहां, उच्छरिय वाणी जिनतणी. २०

छुधा तृपा अरु राग, द्वेप असुहावने,
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोप भयावने,
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घणी,
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिन्ता गणी,
गणिये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरंजनो,
नव परमकेवललब्धिमंडित, सिवरमनि-मनरंजनो;
श्री ज्ञानकल्याणक सुमहिमा सुनत सव सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. २१

---

५. निर्वाण कल्याणकः—

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो,
भव्यनिप्रति उपदेस्यो, जिनवर तारिसो;
भवभयभीत महाजन, सरणै आइया,
रत्नत्रयलच्छन सिवपंथनि लाइया,
लाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतीय सुकल जु पूरियो,
तजि तेरहें गुणथान जोग, अजोगपथ पग धारियो;
पुनि चौदहें चौथे सुकलवल वहत्तर तेरह हती,
ईमि घाति वसु विधि कर्म पहुँच्यो समयमें पंचमगति. २२
लोकसिखर तनुवात,-वलयमहँ संठियो,
धर्मद्रव्यविन गमन न, जिहि आगें कियो;

मयनरहित मूषोदर, अंवर जारिसो,
किमपि हीन निज तनुतै, भयो प्रभु तारिसो,
तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपरिजय छनछयी,
निश्चयनयेन अनंतगुण, विवहार नय वसुगुणमयी;
वस्तु स्वभाव विभावविरहित, सुद्ध परिणति परिणयो,
चिद्रूप परमानंदमंदिर सिद्ध, परमातम भयो. २३

तनुपरमाणु दामिनिपर, सब खिर गये,
रहे सेस नखकेस,-रूप जे परिणये;
तब हरि प्रमुख चतुरविध, सुरगण सुभ सच्यो,
मायामई नखकेसरहित, जिनतनु रच्यो.

रचि अगर चंदनप्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो.
पदपतित अगनिकुमारमुकुटानल, सुविधि संस्कारियो;
निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. २४

मैं मतिहीन भक्तिवस, भावन भाईया,
मंगलगीतप्रबंध सु, जिनगण गाईया;
जो नर सुनहिं बखानहिं, सुर धरि गावहीं,
मनवांछित फल सो नर निहचै पावहीं.

पावहीं आठो सिद्धि नव निधि, मन प्रतीत जु लावहीं,
भ्रमभाव छूटइं सकल मनके, जिनस्वरूप लखावहीं;
पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होहिं मंगल नित नये,
भणि 'रूपचंद' त्रिलोकपतिजिन,— देव चउ संघहि जये. २५

श्रीमंगलगीत समाप्त.

---

२२. श्रीमद्यशोविजयजी उपाध्याय कृत

आठ दृष्टिनी सज्झाय.

ढाळ पहेली

चतुर सनेही मोहना—अे देशी.

शिव सुख कारण उपदिशी, योगतणी अड दिट्ठीरे;
ते गुण थुणी जिनवीरनो, करशुं धर्मनी पुट्ठीरे.
वीरजिनेसर देशना० १
सघन अघन दिनरयणीमां, वालविकल ने अनेरारे;
अर्थ जुअे जेम जुजुआ, तेम ओघनजरना फेरारे. वीर० २
दर्शन जे थयां जुजुआं, ते ओघ नजरने फेरेरे:
भेद थिरादिक दृष्टिमां, समकित दृष्टिने हेरेरे. वीर० ३
दर्शन सकलना नय ग्रहे, आप रहे निज भावेरे;
हित करी जनने संजीवनी, चारो तेह चरावेरे. वीर० ४
दृष्टि थिरादिक चारमां, मुक्ति प्रयाण न भाजेरे;
रयणि शयन जेम श्रमहरे, सुरनर सुख तेम छाजेरे. वीर० ५
अेह प्रसंगथी में कयुं, प्रथम दृष्टि हवे कहीअेरे;
जिहां मित्रा तिहां वोध जे, ते तृण अगनिसो लहीअेरे. वीर० ६
व्रत पण यम इहां संपजे, खेद नहीं शुभ काजेरे;
द्वेष नहीं वळी अवरशुं, अेह गुण अंग विराजेरे. वीर० ७
योगनां वीज इहां ग्रहे, जिनवर शुद्ध प्रणामोरे;
भावाचारज सेवना; भव-उद्वेग सुठामोरे. वीर० ८
द्रव्य अभिग्रह पाळवा, औषध प्रमुखने दानेरे;
आदर आगम आसरी, लिखनादिक वहुमानेरे. वीर० ९

लेखन पूजन आपवुं, श्रुत वाचना उद्ग्राहोरे;
भाव विस्तार सज्झायथी, चिंतन भावना चाहोरे. वीर० १०
बीज कथा भली सांभळी, रोमांचित हुवे देहरे;
अेह अवंचक योगथी, लहीअे धरम सनेहरे. वीर० ११
सद्गुरु योगे वंदन क्रिया, तेहथी फल होय जेहोरे;
योग क्रिया फळ भेदथी, त्रिविध अवंचक अेहोरे. वीर० १२
चाहे चकोर ते चंद्रने, मधुकर मालती भोगीरे;
तेम भवि सहजगुणे होये, उत्तम निमित्त संयोगीरे. वीर० १३
अेह अवंचक योग ते, प्रगटे चरमावर्त्तेरे;
साधुने सिद्ध दशासमुं, बीजनुं चित्त प्रवर्त्तेरे. वीर० १४
करण अपूर्वना निकटथी, जे पहेलुं गुणठाणुंरे;
मुख्यपणे ते इहां होये, सुयश विलासनुं टाणुंरे. वीर० १५

ढाळ बीजी.

मनमोहन मेरे—अे देशी.

दर्शन तारा दृष्टिमां, मनमोहन मेरे; गोमय अग्नि समान; म०
शौच संतोष ने तप भलुं म० सज्झाय ईश्वर ध्यान. म० १
नियम पंच ईहां संपजे, म० नहीं किरिआ उद्वेग; म०
जिज्ञासा गुणतत्त्वनी, म० पण नहीं निज हठ टेग. म० २
अेह दृष्टि होय वरततां, म० योगकथा बहु प्रेम; म०
अनुचित तेह न आचरे, म० वाळयो वळे जेम हेम. म० ३
विनय अधिक गुणीनो करे, म० देखे निजगुण हाण; म०
त्रास धरे भवभव थकी, म० भव माने दुःखखाण. म० ४
शास्त्र घणां मति थोडली, म० शिष्ट कहे ते प्रमाण; म०
सुयश लहे अे भावथी, म० न करे जुठ डफाण. म० ५

सूक्ष्मबोध तो पण ईहांजी, समकितविण नवि होयः
वेद्य संवेद्य पदे कह्योजी, ते न अवेद्ये जोय. मन० ५

वेद्य बंधशिव हेतु छेजी, संवेदन तस नाण;
नयनिक्षेपे अति भलुंजी, वेद्य संवेद्य प्रमाण. मन० ६

ते पद ग्रंथि विभेदथीजी, छेहली पाप प्रवृत्ति;
तप्तलोह पद घृति समीजी, तिहां होय अंत निवृत्ति. मन० ७

अेह थकी विपरीत छेजी, पद ते अवेद्य संवेद्य;
भवाभिनंदी जीवनेजी, ते होय वज्र अभेद्य. मन० ८

लोभी कृपण दयामणोजी, मायी मच्छर ठाण;
भवाभिनंदी भय भर्योजी, अफल आरंभ अयाण. मन० ९

अेवा अवगुणवंतनुंजी, पद छे अवेद्य कठोर;
साधु संग आगमतणोजी, ते जीत्यो धुरंधोर. मन० १०

ते जिते सहजे टळेजी, विषम कुतर्क प्रकार;
दूर निकट हाथी हणेजी, जेम अे बठर विचार. मन० ११

हुं पाम्यो संशय नहींजी, मूरख करे अे विचार;
आळसुआ गुरु शिष्यनोजी, ते तो वचन प्रकार मन० १२

धीजे ते पति आववुंजी, आपमते अनुमान;
आगम ने अनुमानथीजी, साचुं लहे सुज्ञान. मन० १३

नहीं सर्वज्ञ जुजुआजी, तेहना जे वळी दास;
भक्ति देवनी पण कहीजी, चित्र अचित्र प्रकाश. मन० १४

देव संसारी अनेक छेजी, तेहनी भक्ति विचित्र;
अेक राग पर द्वेषथीजी, अेक मुक्तिनी अचित्र. मन० १५

इंद्रियार्थगत बुद्धि छेजी, ज्ञान छे आगम हेत;
असंमोह शुभ कृति गुणेजी, तेणे फल भेद संकेत. मन० १६

आदर किरिया रति घणीजी, विघन टळे मिले लच्छि;
जिज्ञासा बुद्ध सेवनाजी, शुभकृति चिन्ह प्रत्यच्छि. मन० १७
बुद्धि क्रिया भवफल दीअेजी, ज्ञानक्रिया शिवअंग;
असंमोह किरिआ दीअेजी, शीघ्र मुक्तिफल चंग. मन० १८
पुद्गल रचना कारमीजी, तिहां जस चित्त न लीन;
अेक मार्ग ते शिव तणोजी, भेद लहे जगदीन. मन० १९
शिष्य भणी जिन देशनाजी, कहे जन परिणति भिन्न;
कहे मुनिनी नय देशनाजी, परमार्थथी अभिन्न. मन० २०
शब्द भेद झगडो किस्योजी, परमारथ जो अेक;
कहो गंगा कहो सुर नदीजी, वस्तु फरे नहीं छेक. मन० २१
धर्म क्षमादिक पण मटेजी, प्रगटे धर्म सन्यास;
तो झगडा मोटा तणोजी, मुनिने कवण अभ्यास. मन० २२
अभिनिवेश सघळो त्यजीजी, चार लही जेणे दृष्टि;
ते लेशे हवे पंचमीजी, सुयश अमृत घनवृष्टि. मन० २३

ढाळ पांचमी.

धन धन संप्रति साचो राजा—अे देशी.

दृष्टि थिरामांहे दर्शन नित्ये, रत्नप्रभा सम जाणोरे;
भ्रांति नहि वळी बोध ते सूक्ष्म, प्रत्याहार वखाणोरे. १
अे गुण वीर(राज)तणो न विसारुं, संभारुं दिनरातरे;
पशु टाली सुररूप करे जे, समकितने अवदातरे. अे गुण० २
बाल धुलि घर लीला सरखी, भव चेष्टा इहां भासेरे;
रिद्धि सिद्धि सवि घटमां पेसे, अष्ट महा सिद्धि पासेरे. अे० ३
विषय विकारे न इंद्रिय जोडे, ते इहां प्रत्याहारोरे;
केवल ज्योति ते तत्त्व प्रकाशे, शेष उपाय असारोरे. अे० ४

सूक्ष्मबोध तो पण ईहांजी, समकितविण नवि होयः
वेद्य संवेद्य पदे कह्योजी, ते न अवेद्ये जोय. मन० ५

वेद्य बंधशिच हेतु छेजी, संवेदन तस नाण;
नयनिक्षेपे अति भलुंजी, वेद्य संवेद्य प्रमाण. मन० ६

ते पद ग्रंथि विभेदथीजी, छेहली पाप प्रवृत्ति;
तप्तलोह पद धृति समीजी, तिहां होय अंत निवृत्ति. मन० ७
अेह थकी विपरीत छेजी, पद ते अवेद्य संवेद्य;
भवाभिनंदी जीवनेजी, ते होय वज्र अभेद्य. मन० ८
लोभी कृपण दयामणोजी, मायी मच्छर ठाण;
भवाभिनंदी भय भर्योजी, अफल आरंभ अयाण. मन० ९

अेवा अवगुणवंतनुंजी, पद छे अवेद्य कठोर;
साधु संग आगमतणोजी, ते जीत्यो धुरंधोर. मन० १०
ते जिते सहजे टळेजी, विषम कुतर्क प्रकार;
दूर निकट हाथी हणेजी, जेम अे वठर विचार. मन० ११
हुं पास्यो संशय नहींजी, मूरख करे अे विचार;
आळसुआ गुरु शिष्यनोजी, ते तो वचन प्रकार मन० १२

धीजे ते पति आववुंजी, आपमते अनुमान;
आगम ने अनुमानथीजी, साचुं लहे सुज्ञान. मन० १३
नहीं सर्वज्ञ जुजुआजी, तेहना जे वळी दास;
भक्ति देवनी पण कहीजी, चित्र अचित्र प्रकाश. मन० १४
देव संसारी अनेक छेजी, तेहनी भक्ति विचित्र;
अेक राग पर द्वेषथीजी, अेक मुक्तिनी अचित्र. मन० १५
इंद्रियार्थगत बुद्धि छेजी, ज्ञान छे आगम हेत;
असंमोह शुभ कृति गुणेजी, तेणे फल भेद संकेत. मन० १६

आदर किरिया रति घणीजी, बिघन टळे मिले लच्छि;
जिज्ञासा बुद्ध सेवनाजी, शुभकृति चिन्ह प्रत्यच्छि. मन० १७
बुद्धि क्रिया भवफल दीअेजी, ज्ञानक्रिया शिवअंग;
असंमोह किरिआ दीअेजी, शीघ्र मुक्तिफल चंग. मन० १८
पुद्गल रचना कारमीजी, तिहां जस चित्त न लीन;
अेक मार्ग ते शिव तणोजी, भेद लहे जगदीन. मन० १९
शिष्य भणी जिन देशनाजी, कहे जन परिणति भिन्न;
कहे मुनिनी नय देशनाजी, परमार्थथी अभिन्न. मन० २०
शब्द भेद झगडो किस्योजी, परमारथ जो अेक;
कहो गंगा कहो सुर नदीजी, वस्तु फरे नहीं छेक. मन० २१
धर्म क्षमादिक पण मटेजी, प्रगटे धर्म सन्यास;
तो झगडा मोटा तणोजी, मुनिने कवण अभ्यास. मन० २२
अभिनिवेश सघळो त्यजीजी, चार लही जेणे दृष्टि;
ते लेशे हवे पंचमीजी, सुयश अमृत घनवृष्टि. मन० २३

ढाळ पांचमी.

धन धन संप्रति साचो राजा—अे देशी.

दृष्टि थिरामांहे दर्शन नित्ये, रत्नप्रभा सम जाणोरे;
भ्रांति नहि वळी बोध ते सूक्ष्म, प्रत्याहार वखाणोरे. १
अे गुण वीर(राज)तणो न विसारुं, संभारुं दिनरातरे;
पशु टाली सुररूप करे जे, समकितने अवदातरे. अे गुण० २
वाल धुलि घर लीला सरखी, भव चेष्टा इहां भासेरे;
रिद्धि सिद्धि सवि घटमां पेसे, अष्ट महा सिद्धि पासेरे. अे० ३
विषय विकारे न इंद्रिय जोडे, ते ईहां प्रत्याहारोरे;
केवल ज्योति ते तत्त्व प्रकाशे, शेष उपाय असारोरे. अे० ४

शीतळ चंदनथी पण उपन्यो, अग्नि दहे जेम वननेरे;
धर्म जनित पण भोग ईहां तेम, लागे अनिष्ट ते मननेरे. अ० ५
अंशे होय ईहां अविनाशी, पुद्गल जाल तमासीरे;
चिदानंद घन सुयश विलासी, केम होय जगनो आशीरे. अ० ६

ढाळ छठ्ठी.

भोलीडा हंसारे विषय न राचीअे—अे देशी.

अचपल रोगरहित निठुर नहि, अल्प होय दोय नीति;
गंध ते सारोरे कान्ति प्रसन्नता, सुस्वर प्रथम प्रवृत्ति.
धन धन शासन श्री जिनवरतणुं. १
धीर प्रभावीरे आगले योगथी, मित्रादिकयुतचित्त;
लाभ ईष्टनोरे द्वंद्व अधृष्यता, जन प्रियता होय नित्य. धन० २
नाश दोषनोरे तृप्ति परम लहे, समताउचितसंयोग;
नाश वैरनोरे बुद्धि ऋतंभरा, अे निष्पन्नह योग. धन० ३
चिन्ह योगनांरे जे परग्रंथमां, योगाचारय दिठ्ठ;
पंचम दृष्टि थकी ते जोडीअे, अेहवा तेह गरिठ्ठ. धन० ४
छठ्ठी दिठ्ठीरे हवे कांता कहुं, तिहां ताराभ्र प्रकाश;
तत्त्व मिमांसारे दृढ होये धारणा, नहीं अन्य श्रुत वास. धन० ५
मन महिलानुंरे वाहला उपरे, बीजां काम करंत;
तेम श्रुतधर्मे रे मन दृढ धरे, ज्ञानाक्षेपकवंत. धन० ६
अेहवे ज्ञानेरे विघन निवारणे, भोग नहि भवहेत;
नहि गुण दोष न विषय स्वरूपथी, मनगुण अवगुण खेत धन० ७
माया पाणीरे जाणी तेहने, लंघी जाय अडोल;
साचुं जाणीरे ते बीतो रहे, न चले डामाडोल. धन० ८
भोग तत्त्वनेरे अेम भय नवि टळे, जुठा जाणेरे भोग;
ते अे दृष्टिरे भवसायर तरे, लहे वळी सुयश संयोग. धन० ९

ढाल सातमी.

अे छिंडी किहां राखी—अे देशी.

अर्कप्रभा सम बोधप्रभामां, ध्यान प्रिया अे दिट्ठी;
तत्त्व तणो प्रतिपत्ति इहां वळी, रोग नहीं सुखपुट्ठीरे.
भविका वीर वचन चित्त धरीअे. १
सघळुं परवश ते दुःखलक्षण, निजवश ते सुख लहीअे;
अे दृष्टे आतम गुण प्रगटे, कहो सुख ते कुण कहीअेरे. भ० २
नागरसुख पामर नव जाणे, वल्लभ सुख न कुमारी;
अनुभव विण तेम ध्यानतणुं सुख, कोण जाणे नरनारीरे. भ० ३
अेह दृष्टिमां निर्मळ बोधे, ध्यान सदा होय साचुं;
दूषण रहित निरंतर ज्योति, रत्न ते दीपे जाचुंरे. भ० ४
विष भाग क्षय, शांत वाहिता, शिव मारग ध्रुवनाम;
कहे असंग क्रिया ईहां योगी, विमल सुयश परिणामरे. भ० ५

ढाळ आठमी.

तुज साथे नहि बोलुं मारा वहाला—अे देशी.

दृष्टि आठमो सार समाधि, नाम परा तस जाणुंजी;
आप स्वभावे प्रवृत्ति पूरण, शशिसम बोध वखाणुंजी;
निरतिचार पद अेहमां योगी, कहिये नहीं अतिचारीजी;
आरोहे आरुढे गिरिने, तेम अेहनी गति न्यारीजी. १
चंदन गंध समान क्षमा ईहां, वासकने न गवेषेजी;
आसंगे वरजित वळी अेहमां, किरिया निजगुण लेखेजी;
शिक्षाथी जेम रतन नियोजन, दृष्टि भिन्न तेम अेहोजी;
तास नियोगे करण अपूरव, लहे मुनि केवल गेहोजी. २
क्षीण दोष सर्वज्ञ महामुनि, सर्व लब्धि फल भोगीजी;
पर उपगार करी शिवसुख ते, पामे योग अयोगीजी;

सर्व शत्रुक्षय सर्व व्याधिलय, पूरण सर्व [1]समीहाजी;
सर्व अरथ योगे सुख तेहथी, अनंतगुण निरीहाजी. ३

अे अडदिट्ठी कही संक्षेपे, योग शास्त्र संकेतेजी;
कुल योगी ने प्रवृत्तचक्र जे, तेह तणे हित हेतेजी;
योगी कुले जाया तस धर्मे, अनुगत ते कुलयोगीजी;
अद्वेषी गुरुदेवद्विज-प्रिय, दयावंत उपयोगीजी. ४

शुश्रूषादिक अडगण संपुरण, प्रवृत्तचक्र ते कहियेजी;
यमद्वय लाभी परदुग अर्थि, आद्य अवंचक लहीयेजी;
चार अहिंसादिक यम ईच्छा, प्रवृत्ति थिर सिद्धिनामेजी;
शुद्ध रुचें पाले अतिचारह, टाले फळ परिणामेजी. ५

कुलयोगी ने प्रवृत्तचक्रने, श्रवण शुद्धि पक्षपातजी;
योगदृष्टि ग्रंथे हित होवे, तेणे कहि अे वातजी;
शुद्ध भाव ने सुनि किरिया, बेहुमां अंतर केतोजी;
जलहलतो सूरज ने खजुओ, तास तेजमां तेतोजी. ६

गुह्य भाव अे तेहने कहिअे, जेहसं अंतर भांजेजी;
जेहसुं चित्त पटंतर होवे, तेहसुं गुह्य न छाजेजी;
योग्य अयोग्य विभाग अलहतो, करशे मोटी वातोजी;
खमशे ते पंडित परखदमां, मुष्टिप्रहार ने लातोजी. ७

सभा त्रण श्रोता गुण अवगुण, नंदीसूत्रे दिसेजी;
ते जाणी अे ग्रंथ योग्यने, देजो सुगुण जगीशेजी;
लोक पूरजो निजनिज ईच्छा, योग भाव गुणरयणेजी;
श्री नयविजय विबुध पयसेवक, वाचक यशने वयणेजी. ८

---

१. वांच्छा

२३. छूटक पदो

सुखकी सहेली हे, अकेली उदासीनता;
अध्यात्मनी जननी, ते उदासीनता.

लघु वयथी अद्भुत थयो, तत्त्वज्ञाननो बोध;
अेज सूचवे अेम के, गति आगति कां शोध? १.
जे संस्कार थवो घटे, अति कभ्यासे कांय;
विना परिश्रम ते थयो, भव शंका शी त्यांय? २.
जेम जेम मति अल्पता, अने मोह उद्योत;
तेम तेम भवशंकना, अपात्र अंतर ज्योत. ३.
करी कल्पना दृढ करे, नाना नास्ति विचार;
पण अस्ति ते सूचवे, अेज खरो निर्धार. ४.
आ भव वण भव छे नहीं, अेज तर्क अनुकूळ;
विचारतां पामी गया, आत्मधर्मनुं मूळ. ५.

वि. सं. १९४९ श्रीमद् राजचंद्र

---

(२)

भिन्न भिन्न मत देखीये, भेद दृष्टिनो अेह;
अेक तत्त्वना मूळमां, व्याप्या मानो तेह. १.
तेह तत्त्वरूप वृक्षनुं, आत्मधर्म छे मूळ;
स्वभावनी सिद्धि करे, धर्म ते ज अनुकूळ. २.
प्रथम आत्मसिद्धि थवा, करीअे ज्ञान विचार;
अनुभवि गुरुने सेवियेे, बुधजननो निर्धार. ३.
क्षण क्षण जे अस्थिरता, अने विभाविक मोह;
ते जेनामांथी गया, ते अनुभवि गुरु जोय. ४.

बाह्य तेम अभ्यंतरे, ग्रंथ ग्रंथि नहि होय;
परम पुरुष तेने कहो, सरळ दृष्टिथी जोय. ५.

श्रीमद् राजचंद्र

(मध्याह्न पछीनो भक्तिनो क्रम समय २॥ थी ४॥)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी. पृ. १-२.
वीश दोहरा यमनीयम-क्षमापना. पृ. ६, १९-२०.

२४. गुणस्थान आरोहणक्रम

१. अपूर्व अवसर अेवो क्यारे आवशे?
क्यारे थईशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो?
सर्व संबंधनुं बंधन तिक्ष्ण छेदीने,
विचरशुं कब महत् पुरुषने पंथ जो. अपूर्व०

२. सर्व भावथी औदासीन्य वृत्ति करी,
मात्र देह ते संयम हेतु होय जो;
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं,
देहे पण किंचित् मूर्छा नव जोय जो. अपूर्व०

३. दर्शनमोह व्यतीत थई उपज्यो बोध जे,
देह भिन्न केवल चैतन्यनुं ज्ञान जो,
तेथी प्रक्षीण चारित्रमोह विलोकिये,
वर्ते अेवुं शुद्धस्वरूपनुं ध्यान जो. अपूर्व०

४. आत्मस्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी,
मुख्यपणे तो वर्ते देहपर्यंत जो;
घोर परिषह के उपसर्ग भये करी,
आवी शके नहीं ते स्थिरतानो अंत जो. अपूर्व०

५. संयमना हेतुथी योगप्रवर्तना,
स्वरूपलक्षे जिनआज्ञा आधीन जो;
ते पण क्षण क्षण घटती जाति स्थितिमां,
अंते थाये निज स्वरूपमां लीन जो. अपूर्व०

६. पंच विषयमां रागद्वेष विरहितता,
पंच प्रमादे न मळे मननो क्षोभ जो;
द्रव्य क्षेत्र ने काळ भाव प्रतिबंध वण,
विचरवुं उदयाधीन पण वीतलोभ जो. अपूर्व०

७. क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोधस्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीनपणानुं मान जो;
माया प्रत्ये माया साक्षी भावनी,
लोभ प्रत्ये नहीं लोभ समान जो. अपूर्व०

८. बहु उपसर्गकर्ता प्रत्ये पण क्रोध नहीं,
वंदे चक्रि तथापि न मळे मान जो;
देह जाय पण माया थाय न रोममां,
लोभ नहीं छो प्रबळ सिद्धि निदान जो. अपूर्व०

९. नग्नभाव मुंडभाव सह अस्नानता,
अदंत धोवन आदि परम प्रसिद्ध जो;
केश, रोम, नख के अंगे शृंगार नहीं,
द्रव्यभाव संयममय निर्ग्रंथ सिद्ध जो. अपूर्व०

१०. शत्रु मित्र प्रत्ये वर्ते समदर्शिता,
मान अमाने वर्ते ते ज स्वभाव जो;
जीवित के मरणे नहीं न्यूनाधिकता,
भव मोक्षे पण शुद्ध वर्ते समभाव जो. अपूर्व०

११. अेकाकी विचरतो वळी स्मशानमां,
वळी पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जो;
अडोल आसन ने मनमां नहीं क्षोभता,
परम मित्रनो जाणे पाम्या योग जो. अपूर्व०

१२. घोर तपश्चर्यामां पण मनने ताप नहीं,
सरस अन्ने नहीं मनने प्रसन्नभाव जो;
रजकण के रिद्धि वैमानिकदेवनी,
सर्वे मान्या पुद्गल अेक स्वभाव जो. अपूर्व०

१३. अेम पराजय करीने चारित्रमोहनो,
आवुं त्यां ज्यां करण अपूर्व भाव जो;
श्रेणी क्षपकतणी करीने आरूढता.
अनन्य चिंतन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो. अपूर्व०

१४. मोह स्वयंभूरमण समुद्र तरी करी,
स्थिति त्यां ज्यां क्षीणमोहगुणस्थान जो;
अंत समय त्यां पूर्ण स्वरूप वीतराग थइ,
प्रगटावुं निज केवलज्ञान निधान जो. अपूर्व०

१५. चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद ज्यां,
भवनां बीजतणो आत्यंतिक नाश जो;
सर्व भाव ज्ञाता दृष्टा सह शुद्धता.
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनंत प्रकाश जो. अपूर्व०

१६. वेदनीयादि चार कर्म वर्ते जहां,
बळी सींदरीवत् आकृति मात्र जो;
ते देहायुष आधीन जेनी स्थिति छे,
आयुष पूर्ण मटिये दैहिक पात्र जो. अपूर्व०

१७. मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा,
छूटे जहां सकळ पुद्गल संबंध जो;
अेवुं अयोगि गुणस्थानक त्यां वर्ततुं,
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो. अपूर्व०

१८. अेक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता,
पूर्ण कलंक रहित अडोलस्वरूप जो.
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहजपदरूप जो. अपूर्व०

१९. पूर्वप्रयोगादि कारणना योगथी,
उर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो;
सादि अनंत अनंत समाधिसुखमां,
अनंत दर्शन, ज्ञान, अनंतसहित जो. अपूर्व०

२०. जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान जो·
तेह स्वरूपने अन्य वाणी ते शुं कहे?
अनुभवगोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो. अपूर्व०

२१. अेह परमपदप्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में,
गजा वगर ने हाल मनोरथ रूप जो;
तो पण निश्चय राजचंद्र मनने रह्यो,
प्रभु आज्ञाअे थाशुं ते ज स्वरूप जो. अपूर्व०

श्रीमद् राजचंद्र

---

२५. मूळमार्ग रहस्य

मूळ मारग सांभळो जिननो रे, करी वृत्ति अखंड सन्मुख; मू०
नो'य पूजादिनी जो कामनारे, नो'य व्हालुं अंतर भवदुःख. मू०१

करी जो जो वचननी तुलना रे, जोजो शोधिने जिन सिद्धांत; मू०
मात्र कहेवुं परमारथ हेतुथी रे, कोइ पामे मुमुक्षु वात मू० २
ज्ञान, दर्शन, चारित्रनी शुद्धता रे, अेकपणे अने अविरुद्ध; मू०
जिन मारग ते परमार्थथी रे, अेम कह्युं सिद्धांते बुद्ध. मू० ३
लिंग अने भेदो जे व्रतना रे, द्रव्य देश काळादि भेद; मू०
पण ज्ञानादिनी जे शुद्धता रे, ते तो त्रणे काळ अभेद. मू० ४
हवे ज्ञान दर्शनादि शब्दनो रे, संक्षेपे सुणो परमार्थ; मू०
तेने जोतां विचारी विशेषथी रे, समजाशे उत्तम आत्मार्थ. मू० ५
छे देहादिथी भिन्न आतमा रे, उपयोगी सदा अविनाश; मू०
अेम जाणे सद्‌गुरु उपदेशथी रे, कह्युं ज्ञान तेनुं नाम खास. मू० ६
जे ज्ञाने करीने जाणियुं रे; तेनी वर्ते छे शुद्ध प्रतीत; मू०
कह्युं भगवंते दर्शन तेहने रे, जेनुं बीजुं नाम समकीत. मू० ७
जेम आवी प्रतीति जीवनी रे, जाण्यो सर्वेथी भिन्न असंग; मू०
तेवो स्थिर स्वभाव ते उपजे रे, नाम चारित्र ते अणलिंग. मू० ८
ते त्रणे अभेद परिणामथी रे, ज्यारे वर्ते ते आत्मारूप; मू०
तेह मारग जिननो पामियो रे, किंवा पाम्यो ते निज स्वरूप. मू० ९
अेवां मूळ ज्ञानादि पामवा रे, अने जवा अनादि बंध; मू०
उपदेश सद्‌गुरुनो पामवो रे, टाळी स्वच्छंद ने प्रतिबंध. मू० १०
अेम देव जिनंदे भाखियुं रे, मोक्षमार्गनुं शुद्ध स्वरूप; मू०
भव्य जनोना हितने कारणे रे, संक्षेपे कह्युं स्वरूप. मू० ११

आणंद, आशो शुद १, १९५२

(सायंकाळनी भक्तिनो क्रम. समय ६–)

२६. सायंकाळनी स्तुति तथा देववंदन

महादेव्याःकुक्षिरत्नं शब्दजितरवात्मजम्;
राजचंद्रमहं वंदे तत्त्वलोचनदायकम् १

जय गुरुदेव ! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामि.

ॐकारं बिंदु संयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः २

मंगलमय मंगलकरण वीतराग विज्ञान,
नमो ताही जाते भये अरिहंतादि महान. ३

विश्वभाव व्यापि तदपि अेक विमल चिद्रूप,
ज्ञानानंद महेश्वरा जयवंता जिन भूप. ४

महत्तत्व महनीय महः महाधाम गुणधाम,
चिदानंद परमातमा वंदो रमताराम. ५

तीन भूवन चूडा रतन सम श्री जिनके पाय,
नमत पाईअे आप पद सब विधि बंध नशाय. ६

दर्शनं देवदेवस्य दर्शनं पापनाशनम्,
दर्शनं स्वर्गसोपानं दर्शनं मोक्षसाधनम्. ७

दर्शनाद् दुरितध्वंसि वंदनाद् वांछितप्रदः
पूजजात् पूरकः श्रीणां जिनः साक्षात् सुरद्रुमः ८

प्रभुदर्शन सुखसंपदा प्रभुदर्शन नवनिधि,
प्रभु दर्शनसें पामिये सकल मनोरथ सिद्धि. ९

ब्रह्मानंदं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्,
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादि लक्ष्यम्;
अेकं नित्यं विमलमचलं सर्वदा साक्षीभूतम्,
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि. १०

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्:
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि. ११

श्रीमद् परब्रह्मगुरुं वदामि श्रीमद्परब्रह्मगुरुं नमामि,
श्रीमद् परब्रह्मगुरुं भजामि श्रीमद् परब्रह्मगुरुं स्मरामि. १२

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः,
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ १३

ध्यानमूलं गुरुमूर्तिः पूजामूलं गुरुपदम्,
मंत्रमूलं गुरुर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरुकृपा. १४

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्,
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः १५

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानांजनशलाकया,
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः १६

ध्यानधूपं मनःपुष्पं पंचेन्द्रिय हुताशनम्,
क्षमाजाप संतोषपूजा पूज्यो देवो निरंजनः १७

देवेषु देवोऽस्तु निरंजनो मे, गुरुगुरुष्वस्तु दमी शमी मे;
धर्मेषु धर्मोऽस्तु दयापरो मे, त्रिण्येव तत्वानि भवे भवे मे. १८

परात्परगुरवे नमः परंपराचार्य गुरवे नमः
परमगुरवे नमः साक्षात् प्रत्यक्ष सद्गुरवे नमोनमः १९

अहो! अहो! श्रीसद्गुरु, करुणा सिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो! उपकार. २०

शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपीओ, वर्तुं चरणाधीन. २१

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन.
दास दास हुं दास छुं, आप प्रभुनो दीन. २२

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. २३

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत. २४

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव ! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामी अंतरजामी भगवान इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाअे निसिहिआअे मत्थअेण वंदामि.

परम पुरुष प्रभु सद्गुरु, परमज्ञान सुखधाम;
जेणे आप्युं भान निज, तेने सदा प्रणाम. २५

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव !.........मत्थअेण वंदामि.
देह छतां जेनी दशा वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां हो वंदन अगणित. २६

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव !.........मत्थअेण वंदामि.
नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, शरणं, शरणं, शरणं, त्रिकाल शरणं, भवो भव शरणं, सद्गुरु शरणं, सदा सर्वदा त्रिविध त्रिविध भाववंदन हो, विनयवंदन हो, समयात्मक वंदन हो, ॐ नमोस्तु जय गुरुदेव शांतिः, परम तारु, परम सज्जन, परम हेतु, परम दयाळ, परम मयाळ, परम कृपाळ, वाणीसुरसाल, अति सुकुमाळ, जीवदया प्रतिपाळ, कर्मशत्रुना काळ, 'मा हणो मा हणो' शब्दना करनार, आपके चरणकमळमें मेरा मस्तक, आपके चरणकमळ मेरे हृदयकमळमें अखंडपणे संस्थापित रहें, संस्थापित रहें; सत्पुरुषोंका सत्स्वरूप, मेरे चित्त स्मृतिके पटपर टंकोत्कीर्णवत् सदोदित, जयवंत रहे, जयवंत रहे.

आनदमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्;
योगीन्द्रमीडयं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि.

---

२७ आरती (१)

जय जय आरती सद्गुरुराया,
श्रीमद् राजचंद्र नमुं (तुज) पाया जय जय० १
पहेली आरती मिथ्या टाळे,
सम्यग्ज्ञान प्रकाश निहाळे. जय जय० २
बीजी आरती बीज उगाडे,
द्वंद्वातीतपणाने पमाडे. जय जय० ३
त्रीजी आरती त्रिकरण शुद्धि,
थाअे सहेजे निर्मळ बुद्धि. जय जय० ४
चोथी आरती अनंतचतुष्टय,
परिणामे आपे पद अव्यय. जय जय० ५
पंचमी आरती पंच संवरथी,
शुद्ध स्वभाव सहज लहे अरथो. जय जय० ६
श्रीमद् सद्गुरुराज कृपाअे,
सत्य मुमुक्षुपणुं प्रगटाये. जय जय० ७

आरती (२)

जयदेव जयदेव, जय पंच परम पद स्वामी;
प्रभु पंच परम पद स्वामी;
मोहादिक हणयाथी (२) अनंत गुणधामी. जयदेव जयदेव० १
लोकालोक प्रकाशक, सूर्य प्रगट ज्ञानी, प्रभु०
आरती करी जीव पामे (२) शिव पद सुखखाणी. जयदेव० २

पहेली आरती प्रभुनी, जिज्ञासु करता; प्रभु०
निजपद लक्ष लहीने (२) मिथ्यामति हरता. जयदेव० ३

बीजी आरती प्रभुनी, समकिती करता; प्रभु०
प्रभु सम निज चिद्रूपने (२) अंतर अनुभवता. जयदेव० ४

त्रीजी आरती प्रभुनी, शांत सुधा झरता; प्रभु०
रत्नत्रय उज्ज्वलथी (२) धर्मध्यान धरता. जयदेव० ५

चोथी आरती प्रभुनी, श्रेणी क्षपक चडता; प्रभु०
शुक्ल ध्यान वर योगे (२) मोह शत्रु हणता. जयदेव० ६

पंचमी आरती प्रभुनी, केवलश्री वरता; प्रभु०
धन्य धन्य सहजात्मा (२) सिद्धिसदन वसता. जयदेव० ७

शुद्ध चिदात्मनी आरती, आत्मार्थी करता; प्रभु०
श्री गुरुराज कृपाथी (२) भवजलधि तरता. जयदेव० ८

---

२८. मंगल दीवो (१)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो,
श्रीमद् सद्गुरु शाश्वत् जीवो. दीवो० १

सम्यग् दर्शन नयन अजवाळे,
केवल ज्ञान प्रकाश निहाळे. दीवो० २

भवभ्रमतिमिरनुं मूळ नसावे,
मोह पतंगनी भस्म बनावे. दीवो० ३

पात्र मुमुक्षु न नीचे राखे,
तपवे नहीं ओ अचरिज दाखे. दीवो० ४

कलिमल सब उत्पत्ति जाओ,
श्रीमद् सद्गुरु सदाय वरायो. दीवो० ५

श्रोता वक्ता भक्त सकलमें,
शिवकर वृद्धि करे मंगलमें. दीवो० ६
श्रीमद् सेवक भाव प्रभावे,
सेवक सेव्य अभेद स्वभावे. दीवो० ७

मंगल दीवो (२)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो;
ज्ञान दीवो प्रभु तुज चिरंजीवो. दीवो० १
निश्चय दीवे प्रगटे दीवो;
प्रगटावो भवि दीलमें दीवो. दीवो० २
प्रगट दीवो ज्ञानी परमात्मा;
तेने अर्पण हो निज आत्मा दीवो० ३
बहिरातमता तजी प्रभु शरणे;
बनो अंतरात्मा प्रभु स्मरणे. दीवो० ४
परमातमता निशदिन भावे;
आतम अर्पणता तो थावे. दीवो० ५
आतमभावना सतत अभ्यासे;
निज सहजात्मस्वरूप प्रकाशे. दीवो० ६
आत्मदृष्टि दीवो जलहलतो;
प्रगटयो उरमां जन्म सफल तो दीवो० ७
श्रीमद् सद्गुरु राज कृपाथी;
स्वरूपसिद्धि साधे मोक्षार्थी. दीवो० ८

(रात्रिनी भक्तिनो क्रम समय ७॥-९॥)

वंदना तथा प्रणिपात स्तुति पृष्ठ ३७
मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी पृष्ठ १-२
वीश दोहरा-यमनियम. पृष्ठ ६-१९

२९. भक्तिनो उपदेश.

(तोटक छंद)

शुभ शीतळतामय छांय रही, मनवांछित ज्यां फळपंक्ति कही;
जिनभक्ति ग्रहो तरुकल्प अहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. १

निज आत्मस्वरूप मुदा प्रगटे, मनताप उताप तमाम मटे;
अति निर्जरता वणदाम ग्रहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. २

समभावि सदा परिणाम थशे, जड मंद अधोगति जन्म जशे.
शुभ मंगळ आ परिपूर्ण चहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ३

शुभ भाव वढे मन शुद्ध करो, नवकार महापदने समरो;
नहि अेह समान सुमंत्र कहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ४

करशो क्षय केवळ राग कथा, धरशो शुभ तत्त्वस्वरूप यथा;
नृपचंद्र प्रपंच अनंत दहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ५

३०

विना नयन पावे नहीं, विना नयनकी बात;
सेवे सद्गुरुके चरन, सो पावे साक्षात्. १.
बूझी चहत जो प्यास को, है बूझनकी रीत;
पावे नहि गुरुगम विना, अेही अनादि स्थिति. २.
अेही नहि है कल्पना, अेही नहि विभंग;
कयि नर पंचमकालमें, देखी वस्तु अभंग. ३.

नहि दे तुं उपदेशकुं, प्रथम लेहि उपदेश;
सबसे न्यारा अगम है, वो ज्ञानीका देश. ४.

जप, तप और व्रतादि सब, तहां लगी भ्रमरूप;
जहां लगी नहि संतकी, पाई कृपा अनूप. ५.

पायाकी ए बात है, निज छंदनको छोड,
पिछे लाग सत्पुरुके, तो सब बंधन तोड. ६.

मुं. अ. १९४७ श्रीमद् राजचंद्र

---

३१. अमूल्य तत्त्वविचार.

(हरिगीत छंद)

बहु पुण्यकेरा पुंजथी, शुभ देह मानवनो मळ्यो,
तोये अरे! भवचक्रनो, आंटो नहि एक्के टळ्यो;
सुख प्राप्त करतां सुख टळे छे, लेश ए लक्षे लहो,
क्षण क्षण भयंकर भावमरणे, कां अहो राची रहो? १.

लक्ष्मी अने अधिकार वधतां, शुं वध्युं ते तो कहो?
शुं कुटुंब के परिवारथी, वधवापणुं ए नय ग्रहो;
वधवापणुं संसारनुं, नरदेहने हारी जवो,
एनो विचार नहीं अहोहो! एक पळ तमने हवो! २.

निर्दोष सुख निर्दोष आनंद, ल्यो गमे त्यांथी भले,
ए दिव्य शक्तिमान जेथी, जंजिरेथी नीकळे;
पर वस्तुमां नहि मूंझवो, एनी दया मुजने रही,
ए त्यागवा सिद्धांत के पश्चात् दुःख ते सुख नहीं. ३.

हुं कोण छुं? क्यांथी थयो? शुं स्वरूप छे मारुं खरुं?
कोना संबंधे वळगणा छे? राखुं के ए परहरुं?

એના વિચાર વિવેકપૂર્વક, શાંત ભાવે જો કર્યા,
તો સર્વ આત્મિકજ્ઞાનનાં, સિદ્ધાંततत्त्व અનુભવ્યાં. ૪
તે પ્રાપ્ત કરવા વચન કોનું સત્ય કેવળ માનવું?
નિર્દોષ નરનું કથન માનો 'તેહ' જેણે અનુભવ્યું;
રે! આત્મ તારો! આત્મ તારો! શીઘ્ર એને ઓળખો,
સર્વાત્મમાં સમદૃષ્ટિ દ્યો, આ વચનને હૃદયે લખો. ૫

वि. सं. १९४१ श्रीमद् राजचंद्र

---

३२. બ્રહ્મચર્ય વિષે સુભાષિત.

(दोहरा)

નિરખીને નવયૌવના, લેશ ન વિષય નિદાન;
ગણે કાષ્ટની પૂતળી, તે ભગવાન સમાન. १.
આ સઘળા સંસારની, રમણી નાયકરૂપ;
એ ત્યાગી ત્યાગ્યું બધું, કેવળ શોકસ્વરૂપ. २.
એક વિષયને જીતતાં, જીત્યો સૌ સંસાર;
નૃપતિ જીતતાં જીતિયે, દળ પુર ને અધિકાર. ३.
વિષયરૂપ અંકૂરથી, ટળે જ્ઞાન ને ધ્યાન;
લેશ મદીરાપાનથી, છાકે જ્યમ અજ્ઞાન. ४.
જે નવ વાડ વિશુદ્ધથી, ધરે શિયળ સુખદાઈ;
ભવ તેનો લવ પછી રહે, તત્ત્વવચન એ ભાઈ. ५.
સુંદર શિયળ સુરતરુ, મન વાણી ને દેહ;
જે નરનારી સેવશે, અનુપમ ફળ લે તેહ. ६.
પાત્ર વિના વસ્તુ ન રહે, પાત્રે આત્મિક જ્ઞાન;
પાત્ર થવા સેવો સદા, બ્રહ્મચર્ય મતિમાન. ७.

वि. सं. १९४१ श्रीमद् राजचंद्र

क्षमापना– छपदनो पत्र, पृष्ट २०-२१
वीतरागनो कहेलो......धर्म..... पृष्ट २६
मुख पाठ पत्रो, मोक्षमाळाना पाठ वगेरे...
—: त्रण मंत्रनी माळा :—

ॐ

३३. श्रीआत्मसिद्धि शास्त्र.

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत. १.

वर्तमान आ काळमां, मोक्षमार्ग बहु लोप;
विचारवा आत्मार्थीने, भाख्यो अत्र अगोप्य. २.

कोई क्रिया-जड थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई;
माने मारग मोक्षनो, करुणा उपजे जोई ३.

बाह्य क्रियामां राचतां, अंतरभेद न कांई;
ज्ञानमार्ग निषेधतां, तेह क्रियाजड आंहि. ४.

बंध मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणीमांहि;
वर्ते मोहावेशमां, शुष्कज्ञानी ते आंहि. ५.

वैराग्यादि सफळ तो, जो सह आतमज्ञान;
तेमज आतमज्ञाननी, प्राप्तितणां निदान. ६.

त्याग–विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;
अटके त्याग–विरागमां, तो भूले निज भान. ७.

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, तहां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन अेह. ८.

सेवे सद्गुरुचरणने, त्यागी दई निज पक्ष;
पामे ते परमार्थने, निज पदनो ले लक्ष. ९.

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग;
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्‌गुरुलक्षण योग्य १०.

प्रत्यक्ष सद्‌गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
अेवो लक्ष थया विना, उगे न आत्मविचार. ११.

सद्‌गुरुना उपदेश वण, समजाय न जिनरूप;
समज्यावण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप. १२.

आत्मादि अस्तित्वनां, जेह निरूपक शास्त्र;
प्रत्यक्ष सद्‌गुरुयोग नहीं, त्यां आधार सुपात्र. १३.

अथवा सद्‌गुरुअे कह्यां, जे अवगाहन काज;
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज. १४.

रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या अेम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष. १५.

प्रत्यक्ष सद्‌गुरु-योगथी, स्वच्छंद ते रोकाय;
अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय. १६.

स्वच्छंद मत आग्रह तजी, वर्ते सद्‌गुरु लक्ष;
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष. १७.

मानादिक शत्रु महा, निजछंदे न मराय;
जातां सद्‌गुरु शरणमां, अल्प प्रयासे जाय. १८.

जे सद्‌गुरु उपदेशथी, पाम्यो केवळज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान १९.

अेवो मार्ग विनय तणो भाख्यो श्री वीतराग;
मूळ हेतु अे मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य २०.

असद्‌गुरु अे विनयनो, लाभ लहे जो कांई;
महा मोहनीय कर्मथी, बूडे भवजळ मांहि. २१.

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे अेह विचार;
होय मतार्थी जीव ते, अवळो ले निर्धार. २२.
होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष;
तेह मतार्थी लक्षणो, अहीं कह्यां निर्पक्ष. २३.

मतार्थी लक्षण

बाह्यत्याग पण ज्ञान नहीं, ते माने गुरु सत्य;
अथवा निज कुळधर्मना, ते गुरुमांज ममत्व. २४.

जे जिनदेहप्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकी रहे निज बुद्धि. २५.

प्रत्यक्ष सद्‌गुरुयोगमां, वर्ते दृष्टि विमुख;
असद्‌गुरुने दृढ करे, निजमानार्थे मुख्य २६.

देवादि गति भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निजमतवेषनो, आग्रह मुक्तिनिदान २७.

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत-अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान. २८.

अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्‌व्यवहारने, साधन रहित थाय. २९.

ज्ञानदशा पाम्यो नहीं, साधनदशा न कांई;
पामे तेनो संग जे, ते बूडे भवमांही ३०.

अ पण जीव मतार्थमां, निज मानादि काज;
पामे नहि परमार्थने, अन्-अधिकारीमां ज. ३१.

नहि कषाय उपशांतता, नहि अंतर वैराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, अे मतार्थी दुर्भाग्य ३२.

लक्षण कह्यां मतार्थीनां, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थीनां, आत्म अर्थ सुखसाज ३३.

आत्मार्थी लक्षण

आत्मज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय,
बाकी कुळगुरुकल्पना, आत्मार्थी नहि जोय. ३४.

प्रत्यक्ष सद्‌गुरुप्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग अेकत्वथी, वर्ते आज्ञाधार. ३५

अेक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार संमत. ३६

अेम विचारी अंतरे, शोधे सद्‌गुरु योग;
काम अेक आत्मार्थनुं, बीजो नहि मनरोग. ३७

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद प्राणीदया, त्यां आत्मार्थ निवास. ३८.

दशा न अेवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहि जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतर रोग ३९

आवे ज्यां अेवी दशा, सद्‌गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय. ४०.

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निजज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण ४१.

ऊपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरुशिष्य संवादथी, भाखुं षट्‌पद आंही. ४२.

षट्‌पदनामकथन.

'आत्मा छे', 'ते नित्य छे', 'छे कर्ता निजकर्म,;
'छे भोक्ता' वळी 'मोक्ष छे', मोक्ष उपाय सुधर्म. ४३.

षट्‌स्थानक संक्षेपमां, षट्‌दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीअे अेह. ४४.

शंका-शिष्य उवाचः-

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप. ४५.

अथवा देहज आत्मा, अथवा इंद्रिय प्राण;
मिथ्या जुदो मानवो, नहीं जुदु अंधाण ४६.

वळी जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहि केम?
जणाय यो ते होय तो, घट पट आदि जेम. ४७.

माटे छे नहि आत्मा, मिथ्या मोक्ष उपाय;
अे अंतर शंकातणो, समजावो सदुपाय ४८

(१) समाधान-सद्गुरु उवाचः-

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान. ४९

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असि ने म्यान. ५०.

जे दृष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप. ५१.

छे इंद्रिय प्रत्येकने, निज निज विषयनुं ज्ञान;
पांच इन्द्रीना विषयनुं, पण आत्माने भान. ५२.

देह न जाणे तेहने, जाणे न इंद्रिय प्राण;
आत्मानी सत्तावडे, तेह प्रवर्ते जाण. ५३.

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगटरूप चतन्यमय, अे अंधाण सदाय. ५४.

घट, पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहि, कहिये केवुं ज्ञान? ५५.

परम बुद्धि कृष देहमां, स्थूळ देह मति अल्प;
देह होय जो आत्मा, घटे न आम विकल्प ५६

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
अेकपणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वयभाव. ५७.

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज अेह अमाप. ५८

(२) शंका–शिष्य उवाचः–

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर कर्ये विचार. ५९.

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहि अविनाश;
देहयोगथी उपजे, देहवियोगे नाश. ६०.

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
अे अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय. ६१.

(२) समाधान–सद्गुरु उवाचः–

देह मात्र संयोग छे, वळी जड रूपी दृश्य;
चेतननां उत्पत्ति लय, कोना अनुभव वश्य? ६२.

जेना अनुभव वश्य अे उत्पन्न-लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जुदा विना, थाय न केमे भान. ६३.

जे संयोगो देखीअे, ते ते अनुभव दृश्य;
ऊपजे नहि :संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष. ६४.

जडथी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड थाय;
अेवो अनुभव कोईने, क्यारे कदी न थाय. ६५.

कोई संयोगोथी नहीं, जेनो उत्पत्ति थाय;
नाश न तेनो कोईमां, तेथी नित्य सदाय. ६६

क्रोधादि तरतम्यता, सर्पादिकनी मांय;
पूर्व जन्म संस्कार ते, जीवनित्यता त्यांय. ६७

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय;
बाळादि वय त्रण्यनुं, ज्ञान अेकने थाय. ६८

अथवा ज्ञान क्षणिकनुं, जे जाणी वदनार;
वदनारो ते क्षणिक नहि, कर अनुभव निर्धार. ६९

क्यारे कोई वस्तुनो केवळ होय न नाश;
चेतन पामे नाश तो, केमां भळे तपास. ७०

(३) शंका–शिष्य उवाचः–

कर्त्ता जीव न कर्मनो, कर्मज कर्ता कर्म;
अथवा सहज स्वभाव कां, कर्म जीवनो धर्म. ७१

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बंध;
अथवा ईश्वर प्रेरणा, तेथी जीव अबंध. ७२

माटे मोक्ष उपायनो, कोइ न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्त्तापणुं, कां नहि, कां नहि जाय. ७३

(३) समाधान–सद्गुरु उवाचः–

होय न चेतन प्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म;
जडस्वभाव नहि प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म. ७४

जो चेतन करतुं नथी, थतां नथी तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहि, तेमज नहि जीवधर्म. ७५

केवळ होत असंग जो, भासत तने न केम?
असंग छे परमार्थथी, पण निज भाने तेम. ७६

कर्त्ता ईश्वर कोई नहि, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोषप्रभाव. ७७.

चेतन जो निजभानमां, कर्त्ता आप स्वभाव;
वर्ते नहि निजभानमां, कर्त्ता कर्म-प्रभाव. ७८.

(४) शंका-शिष्य उवाचः-

जीव कर्म कर्त्ता कहो, पण भोक्ता नहि सोय;
शुं समजे जड कर्म के, फळ परिणामी होय. ७९.

फळदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय;
अेम कह्ये ईश्वरतणुं, ईश्वरपणुं ज जाय. ८०.

ईश्वर सिद्ध थया विना, जगत् नियम नहि होय;
पछी शुभाशुभ कर्मनां, भोग्यस्थान नहि कोय. ८१.

(४) समाधान-सद्गुरु उवाचः-

भावकर्म निजकल्पना, माटे चेतनरूप;
जीववीर्यनी स्फूरणा, ग्रहण करे जडधूप. ८२.

झेर सुधा समजे नहीं, जीव खाय फळ थाय;
अेम शुभाशुभ कर्मनुं, भोक्तापणुं जणाय. ८३.

अेक रांक ने अेक नृप, अे आदि जे भेद;
कारण विना न कार्य ते, अेज शुभाशुभ वेद्य ८४.

फळदाता ईश्वरतणी, अेमां नथी जरुर;
कर्म स्वभावे परिणामे, थया भोगथी दूर. ८५.

ते ते भोग्य विशेषनां स्थानक द्रव्य स्वभाव;
गहन वात छे शिष्य आ, कही संक्षेपे साव. ८६.

(५) शंका-शिष्य उवाचः-

कर्ता भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहि मोक्ष;
वीत्यो काळ अनंत पण, वर्तमान छे दोष. ८७.

शुभ करे फळ भोगवे, देवादि गतिमांय;
अशुभ करे नर्कादि फळ, कर्मरहित न क्यांय. ८८.

(५) समाधान-सद्गुरु उवाचः-

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्ति सफळता, माटे मोक्ष सुजाण. ८९

वीत्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदतां, ऊपजे मोक्ष स्वभाव. ९०.

देहादि संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वत पदे, निज अनंत सुख भोग. ९१.

(६) शंका-शिष्य उवाचः-

होय कदापि मोक्षपद, नहि अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनतनां, शाथी छेद्यां जाय? ९२.

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक,
तेमां मत साचो कयो, बने न अेह विवेक. ९३.

कई जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमां मोक्ष;
अेनो निश्चय ना बने, घणा भेद अे दोष. ९४.

तेथी अेम जणाय छे, मळे न मोक्ष उपाय;
जीवादि जाण्या तणो, शो उपकारज थाय? ९५.

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग;
समजुं मोक्ष उपाय तो, उदय उदय सद्भाग्य. ९६.

(६) समाधान–सद्गुरु उवाचः–

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीतः
थाशे मोक्षोपायनी, सहज प्रतीत अे रीत. ९७

कर्मभाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास;
अंधकार अज्ञान सम, नाशे ज्ञानप्रकाश. ९८

जे जे कारण बंधनां, तेह वंधनो पंथ;
ते कारण छेदक दशा, मोक्षपंथ भव–अंत. ९९

राग द्वेष अज्ञान अे, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ. १००

आत्मा सत् चैतन्यमय, सर्वाभास रहित;
जेथी केवळ पामीअे, मोक्षपंथ ते रीत. १०१

कर्म अनंत प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ;
तेमां मुख्ये मोहनीय, हणाय ते कहुं पाठ. १०२

कर्म मोहनीय भेद बे, दर्शन चारित्र नाम;
हणे वोध वीतरागता, अचूक उपाय आम. १०३

कर्मवंध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह;
प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, अेमां शो संदेह? १०४

छोडी मत दर्शनतणो, आग्रह तेम विकल्प;
कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प. १०५

षट्पदनां षट्प्रश्न तें, पूछयां करी विचार;
ते पदनी सर्वांगता. मोक्षमार्ग निर्धार. १०६

जाति वेषनो भेद नहि, कह्यो मार्ग जो होय;
साधे ते मुक्ति लहे, अेमां भेद न कोय. १०७

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष–अभिलाष;
भवे खेद अंतर दया, ते कहिये जिज्ञास. १०८

ते जिज्ञासु जीवने, थाय सद्‌गुरु बोध;
तो पामे समकितने, वर्ते अंतर शोध. १०९

मत दर्शन आग्रह तजी, वर्ते सद्‌गुरुलक्ष;
लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष, ११०

वर्ते निज स्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित. १११

वर्धमान समकित थई, टाळे मिथ्याभास;
उदय थाय चारित्रनो, वीतराग पद वास. ११२

केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान;
कहिये केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण. ११३

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय. ११४

छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्त्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, अेज धर्मनो मर्म. ११५

अेज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्षस्वरूप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप. ११६

शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम;
बीजुं कहीये केटलुं, कर विचार तो पाम. ११७

निश्चय सर्वे ज्ञानीनो, आवी अत्र शमाय;
धरी मौनता अेम कहि, सहजसमाधिमांय. ११८

शिष्यबोधबीजप्राप्ति

सद्गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान. ११९
भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप;
अजर अमर अविनाशि ने, देहातीत स्वरूप. १२०
कर्ता भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्ता त्यांय. १२१
अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारूप;
कर्ता भोक्ता तेहनो, निर्विकल्प स्वरूप. १२२
मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ. १२३
अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामरपर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार. १२४
शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुअे आपियो, वर्तुं चरणाधीन. १२५
आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन. १२६
षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारत्, अे उपकार अमाप. १२७

उपसंहार

दर्शन षटे समाय छे, आ षट् स्थानकमांही;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई. १२८
आत्मभ्रांति सम रोग नहि, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरुआज्ञा सम पथ्य नहि, औषध विचार ध्यान. १२९
जो ईच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदि नाम लई, छेदो नहि आत्मार्थ. १३०

निश्चयवाणी सांभळी, साधन तजवां नो'य;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय १३१

नय निश्चय अेकांतथी, आमां नथी कहेल;
अेकांते व्यवहार नहीं, बन्ने साथ रहेल. १३२

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहि सद्व्यवहार;
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहीं सार. १३३

आगळ ज्ञानी थई गया, वर्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहि कोय. १३४

सर्व जीव छे सिद्धसम, जे समजे ते थाय;
सद्गुरुआज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय. १३५

उपादाननुं नाम लई, अे जे तजे निमित्त;
पामे नहि सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित. १३६

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर छूटयो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह, १३७

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षुघट विषे, अेह सदाय सुजाग्य. १३८

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहीअे ज्ञानीदशा, बाकि कहीअे भ्रांत. १३९

सकळ जगत ते अेंठवत्, अथवा स्वप्नसमान;
ते कहीअे ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान. १४०

स्थानक पांच विचारीने, छठ्ठे वर्त्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमुं, अेमां नहि संदेह. १४१

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां हो! वंदन अगणित. १४२

श्री नडियाद, आ. वद १ गुरु, १९५२.

३४. भक्तिना छंदो

(१)

सहजात्मस्वरूप टाळो भवकूप, अखिल अनुपम बहुनामी;
प्रभु निष्कामी अंतरजामी, अविचळधामी हे! स्वामी.
जय जय जिनेंद्र, अखिल अजेंद्र, जय जिनचंद्र हे देवा;
हुं शरण तमारे. आव्यो द्वारे, चढजो व्हारे करुं सेवा;
सुखशांतिदाता, प्रभु प्रख्याता, दिलना दाता हे स्वामी. सहजा० १

जय मंगळकारी बहु उपकारी, आश तमारी दिल धरीअे;
अभयपद चहुं छुं, करगरी कहुं छुं शरणे रहुं छुं स्तुति करीअे;
आ लक्ष चोरासी खाणज खासी, जउं छुं त्रासी हे स्वामी. सहजा० २

नव जोशो कदापि, दोषो तथापि, कुमति कापी हे भ्राता;
मुक्तिपद दाता, प्रमुख मनाता, सन्मति दाता हे त्राता;
कृतिओ नव जोशो अतिशय दोषो सघळा खोशो हे स्वामी सहजा० ३

हुं पामर प्राणीनुं दुःख जाणी अंतर आणीने तारो;
घर धंधाधाणी शीर लई ताणी भटक्यो खाणी भव खारो:
मने रस्ते चडावो, कदी न डगावो, चित्त रखावो दुःखवामी सहजा० ४

उत्तम गति आपो, सद्धर्म स्थापो, किल्विष कापो हाथग्रही;
प्रकाशे प्रतापो, अखिल अमापो, भवदुःख कापो नाथ सही;
अवनीमां तमारो सौथी सारो जे शुभ धारो सुखधामी सहजा० ५

---

(२)

जय जगतत्राता, जगतभ्राता, जन्म हर जगदीश्वरा,
सुख सर्व कारण, धर्मधारण धीर वीर महेश्वरा;
अति कर्म कंदन, चित्त चंदन, चरण कमळे चित्त धरुं,
सहजात्मरूपी सेव्य गुरुने वंदना विधिअे करुं. १

आनंदसागर चंद्र, नागर-वृंद श्री सुखकंद छो,
भव फंद हारक, छंद धारक, सर्व सद्गुण चंद्र छो;
सुखकार छो भवपार नहीं कंई सार चित्तमां हुं धरुं. सहजा० २

विकराळ आ कळिकाळ केरी, फाळथी भय पामतो;
गुरु चरण केरा शरण आव्यो चित्तमां विश्रामतो;
गुरु पूरण प्रेमी कर धरे, शीर अेम आशा आचरुं. सहजा० ३

करी कोप चार कषाय बांधे, बंध आशा पाशनोः
अति मार मारे मार तेमां, कामनी अभिलाषनो;
छो निर्विकारी पास राखो, भक्ति हुं दिलमां धरुं. सहजा० ४

निज धाम चंचळ, वित्त चंचळ, चित्त चंचळ सर्वथी;
हित मित्र ने सुकलत्र चंचळ, जाय शुं मुखथी कथी;
स्थिर अेक सद्गुरु देव छो, अे टेक अंतर आदरुं. सहजा० ५

भवमंडपे करी प्रीत मायासेज सुंदर पाथरी;
त्यां नित्य सूतो गाढ निद्रा, मोहनी अति आचरी;
जाग्रत करी गुरु राजचंद्रे, बोधदान कर्युं शरु. सहजा० ६

जयकार श्री गुरुदेवनो, जन जगतमांही गजावजो,
शुभ भक्तना जे धर्म, ते अति प्रेम साथ बजावजो;
गुरु धर्मधारक, कर्मवारक, ध्यानमां नित्ये धरुं. सहजा० ७

---

(३)

दयाळु दीनानाथ अज्ञानहारी, खरा चित्तथी ध्यानमांही विहारी;
घणा शिष्यना आप संतापहारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. १

कर्यो क्रोध तो क्रोधने मारवाने, धर्यो लोभ तो ध्यानने धारवाने;
महा मोहहारी निजानंदधारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. २

सदा निर्विकारी महा ब्रह्मचारी, न प्होंचे स्तुतिमां मति कांई मारी;
निराधार आ बाल माटे विचारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ३
कदी नाथ सामुं न जोशो अमारा, तथापि अमे छीअे सदाये तमारा;
हवे आप ओ बाप! तारो विचारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ४
क्षमा, धैर्य, औदार्यना जन्मसिंधु! सदा लोकथी दीनना आप बंधु;
न शक्ति कशा काममांहि अमारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ५
गुणी ज्ञानवंता विवेकी विचारो, मने आशरो अेक भावे तमारो;
दयाळु हवे प्रार्थना ल्यो अमारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ६

---

(४)

जडबुद्धि जीव संतविना शुद्ध मारग कोण बतावे? अे देशी.

अहो! राजचंद्र देव, रात दिवस मने रहेजो रटण तमारुं,
तुमे पतितपावन छो स्वामी,
हुं तो लोभी लंपट ने कामी,
ते तो जाणो छो अंतरजामी. अहो! राज० १

नथी जप तप साधन कांई कर्युं,
नथी चरणकमळमां चित्त धर्युं,
मन रेंट तणी पेर जाय फर्युं, अहो! राज० २

मने मोहकटक लाग्युं पूंठे,
नित्य घेरीने मुजने लूंटे,
तमे छोडावो प्रभु तो छूटे. अहो! राज० ३

अहो! भानु समान प्रगट मणि,
मारा अनंत दोष काढो धणी,
क्षण दृष्टि करो मुज रंक भणी. अहो! राज० ४

प्रभु करुणासागर आप अहो!
मुज पामरनी प्रभु वांह्य ग्रहो,
तुज सेवा मुने सदाय रहो. अहो! राज० ५

ज्ञान दर्शन चरण क्षायक जाणी,
प्रभु सहज स्वभाव प्रगट मणि,
आपो मने देव हो रंक गणी. अहो! राज० ६

दिव्य ज्ञान कळा प्रभु अकळ अहो!
मुज पामरथी न कळाय अहो!
तुज मुद्रा देखी प्रतीत भयो. अहो! राज० ७

तुमे मोक्षमार्ग उज्ज्वळ कियो,
कुळ मताग्रहादि छेद दियो,
अहो! भव्यने कारण देह लियो. अहो! राज० ८

अहो! विषय कषाय अभाव कियो,
प्रभु सहज स्वभावे धर्म लियो,
निरउपाधिपद सहज ग्रह्यो. अहो! राज० ९

परम शीतळ अनंत दया तुममें,
प्रभु स्याद्‌वादशैली तुम घटमें,
तुज चरणकमळ सेवा द्यो मुजने. अहो! राज० १०

तुम ज्ञानकळा अखंड प्रगटी,
हुं पामर गुण शुं कहुं कथी?
जैन शैली पामुं हुं तुम थकी. अहो! राज० ११

प्रभु चार गतिमां हु भटक्यो,
हवे स्वामी तुज चरणे आव्यो,
मुनदास गुलाम छे तुम जायो. अहो! राज० १२

---

३५. स्तवनो

१ श्री ऋषभदेव स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग मारु

करम परीक्षा करण कुमर चल्यो रे-अे देशी.

ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, ओर न चाहुं रे कंत;
रीझ्यो साहेब संग न परिहरे रे, भागे सादि-अनंत ऋषभ० १
प्रीत सगाई जगमां सहु करे रे, प्रीत सगाई न कोय;
प्रीत सगाई रे निरुपाधिक कही रे, सोपाधिक धन खोय. ऋषभ० २
कोई कंत कारण [1]काष्टभक्षण करेरे, मिलशुं कंतने धाय;
अे मेळो नवि [2]कहिये संभवेरे, मेळो ठाम न ठाय. ऋषभ० ३
कोई पतिरंजन अति घणुं तप करे रे, पतिरंजन तन ताप;
अे पतिरंजन में नव चित्त धर्युं रे. रंजन [3]धातु मिलाप. ऋषभ० ४
कोई कहे लीलारे अलख अलख तणी रे, लख पूरे मन आश;
दोषरहितने लीला नवि घटे रे, लीला दोषविलास. ऋषभ० ५
चित्तप्रसन्ने रे पूजनफल कह्युं रे, पूजा अखंडित अेह;
कपटरहित थई आतम अरपणा रे. आनंदघनपद रेह. ऋषभ० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

निद्रडी वेरण वुई रही—अे देशी.

ऋषभ जिणंदशुं प्रीतडी किम कीजे हो कहो चतुर, विचार,
प्रभुजी जई अलगा वस्या, तिहां किणे नवि हो को वचन-
उच्चार. ऋषभ० १

---

१ काष्टमां बळी मरे. २ कदिये. ३ प्रकृति.

कागळ पण पहोंचे नहि, नवि पहोंचे हो तिहां को परधान;
जे पहोंचे ते तुम समो, नवि भाखे हो कोनुं [1]व्यवधान.
ऋषभ० २

प्रीति करे ते रागीआ, जिनवरजी हो तुम तो वीतराग;
प्रीतडी जेह अरागीथी, भेळववी हो ते लोकोत्तर मार्ग.
ऋषभ० ३

प्रीति अनादिनी विषभरी, ते रीते हो करवा मुज भाव;
करवी [2]निर्विष प्रीतडी, किण भांते हो कहो वने बनाव.
ऋषभ० ४

प्रीति अनंती पर थकी, जे तोडे हो ते जोडे अेह;
[3]परमपुरुपथी रागता, अेकत्वता हो दाखी गुण गेह.
ऋषभ० ५

प्रभुजीने अवलंबतां, निज प्रभुता हो प्रगटे गुणराश;
देवचंद्रनी सेवना, आपे मुज हो अविचळ सुखवास.
ऋषभ० ६

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन

महाविदेह क्षेत्र सोहामणो–अे देशी.

जगजीवन जगवा'लहो, मरुदेवीनो नंद लाल रे;
मुख दीठे सुख ऊपजे, दर्शने अतिहि आनंद. ला० ज० १
आंखडी अंबुजपांखडी, अष्टमी शशीसम भाल लाल रे;
वदन ते शारद चांदलो, वाणी अतिहि रसाल. ला० ज० २

---

१ हकीकत २ रागरूप विष रहित. ३ परमात्माथी.

लक्षण अंगे विराजतां, अडहिय सहस उदार लाल रे;
रेखा कर चरणादिके, अभ्यंतर नहि पार. ला० ज० ३

इंद्र, चंद्र, रवि गिरि तणा, गुण[1] लइ घडियुं अंग लाल रे;
भाग्य किहां थकी आवियुं, अचरिज एह उत्तंग. ला० ज० ४

गुण सघळा अंगे कर्या, दूर कर्या सवि दोष लालरे;
वाचक यशविजये थुण्यो, देजो सुखनो पोष. ला० ज० ५.

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन.

बाळपणे आपण ससनेही, रमता नवनव वेषे;
आज तुमे पाम्या प्रभुताई, अमे तो संसार-निवेशे.
हो प्रभुजी ! ओलंभडे मत खीजो. १

जो तुम ध्यातां शिवसुख लहीओ, तो तुमने केइ ध्यावे;[2]
पण भव-स्थिति परिपाक थया विण, कोई न मुक्ति जावे.
हो प्रभुजी ! ओ० २.

सिद्धनिवास लहे भविसिद्धि,[3] तेमां शो पाड तमारो ?
तो उपकार तमारो लहीओ, अभव्यसिद्धने[4] तारो.
हो प्रभुजी ! ओ० ३

नाणरयण पामी ओकांते, थइ बेठा मेवासी;
ते मांहेलो ओक अंश जो आपो, ते वाते साबाशी.
हो प्रभुजी ! ओ० ४

---

१. रूप, सौम्यता, प्रताप अने धैर्य. २. आसपास—चोमेर. ३. भव्य जीवो.
४. अभव्योने.

अक्षय पद देतां भविजनने, संकीर्णता नवि थाय;
शिवपद देवा जो समरथ छो, तो जश लेतां शुं जाय?
हो प्रभुजी! ओ० ५

सेवागुणरंज्या भविजनने, जो तुम करो वडभागी;
तो तमे स्वामी केम कहावो, निर्मम ने निरागी.
हो प्रभुजी! ओ० ६

नाभिनंदन जगवंदन प्यारो, जयगुरु जगजयकारी;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, वृषभलंछन बलिहारी.
हो प्रभुजी! ओ० ७

---

२. श्री अजितनाथस्वामी.

राग आशावरी.

मारुं मन मोह्युं रे श्री विमलाचलेरे—अे देशी.

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन.

पंथडो निहाळुंरे बीजा जिन तणोरे, अजित अजित गुणधाम;
जे तें जीत्यारे तेणे हुं जितियोरे, पुरुष किश्युं मुज नाम?
पंथडो० १

चरम नयण करी मारग जोवतांरे, भूल्यो सयल संसार;
जेणे नयणे करी मारग जोईअे रे, नयण ते दिव्य विचार.
पंथडो० २

पुरुषपरंपर अनुभव जोवतांरे, अंधोअंध पलाय;
वस्तु विचारे रे जो आगमे करीरे, चरण धरण नहीं ठाय.
पंथडो० ३

तर्कविचारे रे वादपरंपरा रे, पार न पहोंचे कोय;
अभिमत वस्तु वस्तुगते कहे रे, ते विरला जग जोय.

पंथडो० ४

वस्तु विचारे रे दिव्य नयणतणो रे, विरह पड्यो निरधार;
तरतम जोगेरे तरतम वासनारे, वासित बोध आधार.

पंथडो० ५

*काळलब्धि लही पंथ निहाळशुं रे, अे आशा अवलंबः
अे जन जीवेरे जिनजी जाणजो रे, आनंदघनमत अंब.

पंथडो० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

देखो गति दैवनीरे—अे देशी.

ज्ञानादिक गुणसंपदा रे, तुज अनंत अपार;
ते सांभळतां ऊपनीरे, रुचि तेणे पार उतार.
अजीत जिन तारजो रे, तारजो दीनदयाल. अ० १

जे जे कारण जेहनुं रे, सामग्री संयोग;
मळतां कारज नीपजेरे, कर्ता तणे प्रयोग. अ० २

कार्यसिद्धि कर्ता वशु रे, लहि कारण संयोग;
निज पदकारक प्रभु मिल्यारे, होय १निमित्तह भोग. अ० ३

अजकुलगत केशरी लहेरे, निजपद सिंह निहाळ;
तिम प्रभुभक्ते भवि लहेरे, आतमशक्ति संभाळ अ० ४

कारणपद कर्तापणे रे, करी आरोप अभेद;
निज पद अर्थी प्रभु थकीरे, करे अनेक उमेद. अ० ५

अेहवा परमातम प्रभुरे, परमानंद स्वरूप;
स्याद्वाद सत्ता रसीरे, अमल अखंड अनूप. अ० ६

* भवस्थिति परिपाक. १ निमित्तना

आरोपित सुख-भ्रम टल्योरे, भास्यो अव्याबाध;
समर्युं अभिलाषीपणुंरे, कर्ता साधन साध्य. अ० ७

ग्राहकता स्वामित्वतारे, व्यापक भोक्ता भाव;
कारणता कारज दशारे, सकल ग्रह्युं निजभाव. अ० ८

श्रद्धा भासन रमणतारे, दानादिक परिणाम;
सकल थया सत्तारसीरे, जिनवर-दरिसण पाम. अ० ९

तिणे निर्यामक माहणोरे, वैद्य गोप आधार;
देवचंद्र सुख सागरुरे, भाव धरम दातार अ० १०

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

निद्रडी वेरण होई रही—अे देशी.

अजित जिणंदशुं प्रीतडी, मुज न गमे हो बीजानो संगके;
मालती फूले मोहीओ, किम बेसे हो बावल तरु भृंग के.
अजित० १

गंगाजलमां जे रम्या, किम*छिल्लर हो रति पामे+मराळ के;
सरोवर जलधर जल विना, नवि चाहे हो जग चातक बाळ के.
अजित० २

कोकिल कलकूजित करे, पामी मंजरी हो पंजरी सहकारके;
ओछां तरुवर नवि गमे, गिरुआशुं हो होये गुणनो प्यारके.
अजित० ३

कमलिनी दिनकर-कर ग्रहे, वली कुमुदिनी हो धरे चंद्रशुं प्रीतके;
गोरी[1] गिरीश[2], गिरिधर[3] विना, नवि चाहे हो कमला[4].
निज चित्तके. अजित० ४

---

*छाछरुं पाणी. +हंस. १ पार्वती. २ शंकर. ३ हरि—विष्णु. ४ लक्ष्मी.

तिम प्रभुशुं मुज मन रम्युं, वीजाशु हो नवि आवे दाय के,
श्रीनयविजय सुगुरुतणो, वाचक जस हो नित नित
गुण गाय के. अजित० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन.

मोतीडानी–देशी.

अजित अजित जिन अंतरजामी,
अरज करुं छुं प्रभु शिर नामी;
साहिबा ससनेही सुगुणजी,
वातलडी कहुं केही–साहिबा० १
आपण वाळपणाना स्वदेशी,
तो हवे केम थाओ छो विदेशी? साहिबा०
पुण्य अधिक तुमे हुआ जिणंदा,
आदि अनादि अमे तो वंदा–साहिबा० २
ताहरे आजे मणाइ छे शानी?
तुंहीज लीलावंत, तुं ज्ञानीः साहिबा०
तुज विण अन्यने को नथी ध्याता,
तो जो तुं छे लोकविख्याता–साहिबा० ३
अेकने आदर अेकने अनादर,
अेम केम घटे तुजने करुणाकर; साहिबा०
दक्षिण वाम नयन बिहुं सरखी
कुण ओछुं कोण अधिकुं परखी[1]–साहिबा० ४
स्वामिता मुजथी न राखो स्वामी.
शी सेवकमां जुओ छो खामी? साहिबा०
जे न लहे सन्मान स्वामीनो,
तो तेने कहे सहुको कमीनो[2]–साहिबा० ५

---

१ परख. २ हलको, दुर्भागी.

उपादान आतम सहीरे, पुष्टालंबन देव; जिन०
उपादान कारणपणेरे, प्रगट करे प्रभु सेव. जिन० पू० ३
कार्य गुण कारण पणेरे, कारण कार्य अनूप; जिन०
सकल सिद्धता ताहरीरे, माहरे साधनरूप. जिन० पू० ४
अेकवार प्रभुवंदनारे, आगम रीते थाय; जिन०
कारण सत्ये कार्यनीरे, सिद्धि प्रतीत कराय. जिन० पू० ५
प्रभुपणे प्रभु ओळखीरे, अमल विमल गुण गेह; जिन०
साध्यदृष्टि साधकपणेरे, वंदे धन्य नर तेह. जिन० पू० ६
जन्म कृतारथ तेहनोरे, दिवस सफळ पण तास; जिन०
जगत शरण जिनचरणनेरे वंदे धरिय उल्लास. जिन० पू० ७
निज सत्ता निज भावथीरे, गुण अनंतनुं ठाण; जिन०
देवचंद्र जिनराजजीरे, शुद्ध सिद्ध सुखखाण. जिन० पू० ८

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

मन मधुकर मोही रह्यो—अे देशी.

संभव जिनवर विनती, अवधारो गुण ज्ञातारे;
खामी नहीं मुज खिजमते, कदीय होशो फल दातारे. सं० १
कर जोडी ऊभो रहुं, रातदिवस तुम ध्यानोरे;
जो मनमां आणो नहीं, तो शुं कहीअे छानोरे. सं० २
खोट खजाने को नहीं, दीजीअे वांछित दानोरे;
करुणानजर प्रभुजी तणी, वाधे सेवक वानोरे. सं० ३
काळ लब्धि मुज [1]मति गणो, भाव लब्धि तुम हाथेरे;
लडथडतुं पण गजबच्चुं, गाजे [2]गयवर साथेरे. सं० ४
देशो तो तुमही भला, बीजा तो नवि याचुंरे;
वाचक यश कहे सांइशुं, फळशे अे मुज साचुंरे. सं० ५

---

1. मा. 2. मोटो हाथी

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

आघा आम पधारो पूज्य—अे देशी.

समकित दाता समकित आपो, मन मागे थई मीठुं;
छती वस्तु देतां शुं शोचो, मीठुं जे सहुअे दीठुं,
प्यारा प्राण थकी छो राज, संभव जिनजी. मुजने० १
अेम मत जाणो जे आपे लहीअे, ते लाध्युं शुं लेवुं;
पण परमारथ प्रीछी आपे, तेहिज कहीअे देवुं. प्यारा० २
अर्थी हुं, तुं अर्थसमर्पक, इम मत करजो हांसुं;
प्रगट हतुं तुजने पण पहेलां, अे हांसानुं पासुं. प्यारा० ३
परम पुरुष, तुमे प्रथम भजीने, पाम्या इम प्रभुताई;
तेणे रूपे तुमने अमे भजीअे, तेणे तुम हाथ वडाई. प्यारा० ४
तमे स्वामी हुं सेवाकामी, मुजरे स्वामी निवाजे;
नहि तो हठ मांडी मागंतां, कीणविध सेवक लाजे. प्यारा० ५
ज्योते ज्योति मीले मन प्रीछे, कुण लहेशे कुण भजशे;
साची भक्ति ते हंसतणी परे, खीर-नीर[1] नय करशे. प्यारा० ६
ओलग कीधी ते लेखे आवी, चरणभेट प्रभु दीधी;
रूप विबुधनो मोहन प्रभणे, रसना पावन कीधी. प्यारा० ७

---

४. श्री अभिनंदन स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग धन्याश्री—सिंधुओ.

आज निहजोरे दीसे नाहलो—अे देशी.

अभिनंदन जिन दरिशण तरसीअे, दरिशण दुर्लभ देव;
मत मत भेदेरे जो जइ पूछीअे, सहु थापे अहमेव. अभि० १

---

१ क्षीर-नीरनो न्याय करशे-अेने जुदुं पाडशे.

सामान्ये करी दरिशण दोहिलुं, निर्णय सकल विशेष;
मदमें घेर्योरे अंधो केम करे, रविशशि रूप विलेख. अभि० २

हेतु विवादे हो चित्त धरी जोइअे, अति दुर्गम नयवाद;
आगमवादे हो गुरुगम को नहीं, अे सबलो विषवाद अभि० ३

घाति डुंगर आडा अति घणा, तुज दरिशण जगनाथ;
धीठाइ करी मारग संचरुं, सेंगू[1]! कोइ न साथ. अभि० ४

दरिशण दरिशण रटतो जो फरुं, तो रण रोझ समान;
जेहने पिपासा हो अमृतपाननी, किम भांजे विषपान. अभि० ५

[2]तरस न आवे हो मरण-जीवन तणो, सीझे जो दरिशण काज;
दरिशण दुर्लभ सुलभ कृपा थकी, आनंदघन महाराज. अभि० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन.

ब्रह्मचर्य पद पूजिये—अे देशी.

क्युं जाणुं क्युं बनी आवशे, अभिनंदन रस रीति हो मित्त;
पुद्गलअनुभव-त्यागथी, करवी जसु परतीत हो मित्त. क्युं० १

परमातम परमेश्वरु, वस्तुगते ते अलिप्त हो मित्त;
द्रव्ये द्रव्य मिले नहीं, भावे ते अन्य अव्याप्त हो मित्त. क्युं० २

शुद्ध स्वरूप सनातनो, निर्मल जे निःसंग हो मित्त;
आत्मविभूति परिणम्यो, न करे ते परसंग हो मित्त. क्युं० ३

पण जाणुं आगमबळे, मिलवुं तुम प्रभु साथ हो मित्त.
प्रभु तो स्वसंपत्तिमयी, शुद्ध स्वरूपनो नाथ हो मित्त. क्युं० ४

---

१ मार्गदर्शक भोमियो. २ त्रास.

परपरिणामिकता अछे, जे तुज पुद्गलजोग हो मित्त;
जड[1] चल[2] जगनी अंठनो, न घटे तुजने भोग हो मित्त. क्युं० ५

शुद्ध निमित्ती प्रभु ग्रहो, करी अशुद्ध पर हेय हो मित्त;
आत्मालंबी गुणलयी, सहु साधकनो ध्येय हो मित्त. क्युं० ६

जिम जिनवर आलंबने, वधे सधे अेक तान हो मित्त;
तिम तिम आत्मालंबनी ग्रहे स्वरूप निदान हो मित्त. क्युं० ७

स्वस्वरूप अेकत्वता, साधे पूर्णानंद हो मित्त;
रमे, भोगवे आतमा, रत्नत्रयी गुणवृंद हो मित्त. क्युं० ८

अभिनंदन अवलंबने, परमानंदविलास हो मित्त;
देवचंद्र प्रभु-सेवना, करी अनुभव अभ्यास हो मित्त. क्युं० ९

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

सुणजो हो प्रभु–अे देशी.

दीठी हो प्रभु, दीठी जगगुरु तुज,
मूरति हो प्रभु, मूरति मोहन वेलडीजी;
मीठी हो प्रभु, मीठी ताहरी वाण,
लागे हो प्रभु, लागे जेसी सेलडीजी. १

जाणुं हो प्रभु जाणुं जन्म कयत्थ,[3]
जो हुं हो प्रभु, जो हुं तुम साथे मिल्योजी;
सुरमणि हो प्रभु, सुरमणि पाम्यो हत्थ,
आंगणे हो प्रभु, आंगणे मुज सुरतरु फल्योजी. २

जाग्या हो प्रभु, जाग्या पुण्य अंकुर,
माग्या हो प्रभु [4]मुहमाग्या पासा ढल्याजी,

---

१ स्थावर. २ त्रस. ३ कृतार्थ. ४ सुख, मोंमाग्या

वूठया हो प्रभु, वूठया अमीरस मेह,
नाठा हो प्रभु, नाठा अशुभ शुभ दिन वल्याजी. ३
भूख्यां हो प्रभु, भूख्यां मल्यां घृतपूर,
तरस्यां हो प्रभु, तरस्यां दिव्य उदक मिल्यांजी;
थाक्यां हो प्रभु, थाक्यां मिल्यां सुखपाल,
चाहतां हो प्रभु, चाहतां सज्जन हेजे हल्याजी. ४
दीवो हो प्रभु, दीवो निशा वन गेह,
साखी हो प्रभु, साखी[1] थले[2], नल नौका[3] मलीजी;
कलियुगे हो प्रभु, कलियुगे दुल्लहो मुज,
दरिशण हो प्रभु, दरिशण लह्युं आशा फळीजी. ५
वाचक हो प्रभु, वाचक यश तुम दास,
विनवे हो प्रभु, विनवे अभिनंदन सुणोजी;
[4]कइयें हो प्रभु, कइयें म देशो छेह,
देजो हो प्रभु, देजो सुख दरिशण तणोजी. ६

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

आछेलालनीं देशी.

अकल कळा अविरुद्ध, ध्यान धरे प्रतिबुद्ध,
आछेलाल अभिनंदन जिनचंदनाजी;
रोमांचित थई देह, प्रगटयो पूरण नेह,
आ० चंद्र ज्युं वन अरविंदनाजी. १
अेक खीण मन रंग, परमपुरुषने संग,
आ० प्राप्ति होवे सो पामीअेजी;
सुगुण-सलूणी गोठ जिम साकर भरी पोठ,
आ० विण दामे विवसाइअेजी. २

---

१ आम्रवृक्ष. २ मरुभूमिमां. ३ पाठांतरः साथी हो प्रभु साथी थले जळ ना मिलीजी. ४ पाठांतरः कहीअे, कदिये

स्वामी, गुणमणि तुज, निवसो मनडे मुज,
आ० पण कंइये खटके नहिजी;
जिम रज नयणे विलग्ग, नीर झरे निरवग्ग,
आ० पण प्रतिबिंब रहे संसहीजी. ३

में जाच्या कंइ लक्ष, तारक भोले प्रत्यक्ष,
आ० पण को साच नाव्यो वगेजी;
मुज बहुमैत्री देख, प्रभु कां मूको उवेख,
आ० आतुर जन बहु ओलगेजी. ४

जग जोतां जगनाथ, जिमतिम आव्या छो हाथ,
आ० पण हवे रखे कुमया[1] करोजी;
बीजा स्वारथी देव, तुं परमारथ हेव,
आ० पाम्यो हवे हुं पटंतरोजी. ६

तें तार्या कंइ क्रोड, तो मुजथी शी होड,
आ० में अेवडो शो अलेहणोजी[2]?
मुज अरदास अनंत-भवनी छे भगवंत,
आ० जाणने शुं कहेवुं घणुंजी. ६

सेवा-फळ द्यो आज, भोळवो कां महाराज,
आ० भूख न भांगे भामणेजी;
रूपविबुध सुपसाय, मोहन अे जिनराय,
आ० भूख्यो जमाहे घणोजी. ७

---

१ अवकृपा. २ मारुं अेटलु वधुं अलेणुं शुं के करोडोने तार्या ने मने तारता नथी ?

५. श्री सुमतिनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग वसंत तथा केदारो

सुमतिचरणकज आतमअरपणा,
दरपण जिम अविकार सुज्ञानी;
मतितरपण वहु सम्मत जाणीअे,
परिसरपण सुविचार सुज्ञानी, सुमति० १

त्रिविध सकल तनुधरगत आतमा,
बहिरातम धुरि भेद, सुज्ञानी;
बीजो अंतर आतम तीसरो,
परमातम अविच्छेद, सु० सुमति० २

आतमबुद्धे हो कायादिके ग्रह्यो,
बहिरातम अघरूप, सुज्ञानी;
कायादिकनो हो साखीधर रह्यो,
अंतर आतमरूप, सु० सुमति० ३

ज्ञानानंदे हो पूरण पावनो,
वर्जित सकळ उपाधि, सुज्ञानी;
अतींद्रिय गुणगणमणिआगरु,
अेम परमातम साध, सु० सुमति० ४

बहिरातम तजी अंतर आतमा-
रूप थइ थिर भाव सुज्ञानी;
परमातमनुं हो आतम भाववुं,
आतमअर्पण-दाव, सु० सुमति० ५

आतम-अर्पण वस्तु विचारतां,
भरम टळे मतिदोष, सुज्ञानी;
परम पदारथ संपत्ति संपजे,
आनंदघन रस पोष, सु० सुमति० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

देशी केडखानी

अहो श्री सुमति जिन, शुद्धता ताहरी,
स्वगुणपर्याय परिणामरामी;
नित्यता अेकता अस्तिता इतरयुत,
भोग्य भोगी थको प्रभु अकामी. अहो० १

उपजे व्यय लहे, तहवि तेहवो रहे,
गुण प्रमुख वहुलता तहवि पिंडी;
आतमभावे रहे अपरता नवि ग्रहे,
लोकप्रदेशमित पण अखंडी. अहो० २

कार्य कारणपणे परिणमे तहवि ध्रुव,
कार्यभेदे करे पण अभेदी;
कर्तृता परिणमे नव्यता नवि रमे,
सकल वेत्ता थको पण अवेदी. अहो० ३

शुद्धता बुद्धता देव परमात्मता,
सहज निजभाव भोगी अयोगी;
स्वपर उपयोगी तादात्म्य सत्तारसी,
शक्ति प्रयुंजतो न प्रयोगी. अहो० ४

वस्तु निज परिणते सर्व परिणामकी,
अेटले कोई प्रभुता न पामे;
करे जाणे रमे अनुभवे ते प्रभु,
तत्त्व स्वामित्व शुचि तत्त्व-धामे. अहो० ५

जीव नवि पुग्गली, नैव पुग्गल कदा,
पुग्गलाधार नहि तासरंगी;
परतणो ईश नहीं अपर अैश्वर्यता,
वस्तुधर्मे कदा न परसंगी. अहो० ६

संग्रहे नहीं, आपे नहीं परभणी,
नवि करे आदरे न पर राखे;
शुद्ध स्याद्वाद निज भाव भोगी जिके,
तेह परभावने केम चाखे! अहो० ७

ताहरी शुद्धता भास आश्चर्यथी,
ऊपजे रुचि तेणे तत्त्व ईहे;
तत्त्वरंगी थयो दोषथी ऊभग्यो,
दोष त्याग्ये ढले तत्त्व लीहे. अहो० ८

शुद्ध मार्गे वध्यो साध्य साधन सध्यो,
स्वामी प्रतिछंदे सत्ता आराधे;
आत्मनिष्पत्ति तिम साधना नवि टके,
वस्तु उत्सर्ग आतम समाधे. अहो० ९

माहरी शुद्ध सत्तातणी पूर्णता,
तेहनो हेतु प्रभु तुंहि साचो;
देवचंद्रे स्तव्यो मुनिगणे अनुभव्यो,
तत्त्व भक्ते भविक सकल राचो. अहो० १०

यशोविजयजी कृत स्तवन.

झांझरिया मुनिवर—अे देशी.

सुमतिनाथ गुणशुं मिलीजी, वाधे मुज मन प्रीति,
तेलबिंदु जिम विस्तरेजी, जलमांहे भली रीति;
सोभागी जिनशुं लाग्यो अविहड रंग. १

सज्जनशुं जे प्रीतडीजी, छानी ते न रखाय;
परिमल कस्तुरी तणोजी, महीमांहे महकाय. सोभागी० २

आंगळीओ नवि मेरु ढंकाये, छाबडिये रवितेज;
अंजलिमां जिम गंग न माये, मुज मन तिम प्रभुहेज. सोभागी० ३.

हुओ छीपे नहि अधर[1] अरुण[2] जिम, खातां पान सुरंग;
पीवत भरभर प्रभुगुण प्याला तिम मुज प्रेम अभंग. सोभागी० ४.

ढांकी इक्षु[3] पराळशु[4], न रहे लहि विस्तार;
वाचक यश कहे प्रभुतणोजी, तिम मुज प्रेमप्रकार. सोभागी० ५.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

वारी हुं उदयपुर तणे–अे देशी

प्रभुजीशुं बांधी प्रीतडी, अे तो जीवन जगदाधार सनेही;
साचो ते साहिब सांभरे, खीण मांहे कोटीकवार सनेही,
वारी हुं सुमति जिणंदने १.

प्रभु थोडाबोलो ने निपुण घणो, अे तो काज अनंत करनार सनेही;
ओलग जेहनी जेवडी, फळ तेहवो तस देनार, स० वा० २.

प्रभु अति धीरो लाजे भर्यो, जिम सिच्यो सुकृतमाळ सनेही;
अेकण करुणानी लहेरमां सुनिवाजे करे निहाल. स० वा० ३.

प्रभु भवस्थिति पाके भक्तने, कोई कहे कीनरे पसाय सनेही;
ऋतु विना कहो केम तरुवरे, फल पाकीने सुंदर थाय? स० वा० ४.

अति भूख्यो पण शुं करे, कांई बीहुं हाथे न जमाय, सनेही;
दासतणी उतावळे, प्रभु कीणविध रीझ्यो जाय? स० वा० ५.
प्रभु–लखित होय तो लाभीअे, मन मान्या तो महाराज सनेही;
फळ तो सेवाथी संपजे, विण खणेय न भांजे खाज, स० वा० ६.

प्रभु विसार्या नवि विसरो, सामो अधिक होवे छे नेह, सनेही;
मोहन कहे कवि रूपनो, मुज वहालो जिनवर अेह, स० वा० ७.

---

१ नीचलो होठ. २ लाल. ३ शेरडी. ४ घासथी.

६. पद्मप्रभ स्वामी.

आनंदघनजी कृत स्तवन

राग मारु तथा सिंधुओ.

चांदलीया संदेशो कहेजे माहरा कंथनेरे–अे देशी.

पद्मप्रभ जिन, तुज मुज आंतरु रे, किम भांजे भगवंत ?
कर्म विपाके हो कारण जोईनेरे, कोई कहे मतिमंत. पद्मप्रभ० १

*पयई ठिइ अणुभाग प्रदेशथीरे, मूल उत्तर बहु भेद;
घाती अघाती हो बंधोदय उदीरणारे, सत्ता कर्म विच्छेद. पद्मप्रभ० २

कनकोपलवत् पयडि-पुरुष[1] तणीरे, जोडी अनादि स्वभाव;
अन्य संजोगी जिहां लगे आतमारे, संसारी कहेवाय. पद्मप्रभ० ३

कारणजोगे हो वंधे वंधनेरे, कारण मुक्ति मुकाय;
आश्रव, संवर नाम अनुक्रमेरे, हेय उपादेय सुणाय. पद्मप्रभ० ४

युंजन करणे हो अंतर तुज पड्योरे, गुण करणे करी भंग;
ग्रंथ उक्ते करी पंडितजन कह्योरे, अंतर भंग सुअंग. पद्मप्रभ० ५

तुज मुज अंतर अंतर भांजशेरे, वाजसे मंगल तूर;
जीवसरोवर अतिशय वाधशेरे, आनंदघनरसपूर. पद्मप्रभ० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

हुं तुज आगळ शुं कहुं केशरिया लाल—अे देशी.

श्री पद्मप्रभ जिन गुणनिधिरे, लाल, जगतारक जगदीशरे, वाल्हेसर,
जिन-उपगार थकी लहेरे लाल, भविजन सिद्धि जगीशरे. वा० १

तुज दरिशण मुज वालहुंरे लाल, दरिशण शुद्ध पवित्तरे; वा०
दरिशण शब्दनये करेरे लाल, संग्रह अेवंभूतरे. वा० तु० २

---

* प्रकृति, स्थिति, अनुभाग. १ कर्म प्रकृति अने जीव.

बीजे वृक्ष अनंततारे लाल, पसरे भूजलयोगरे; वा०
तिम मुज आतमसंपदारे लाल, प्रगटे प्रभु संयोगरे वा० तु० ३
जगतजंतु कारज रुचिरे लाल, साधे उदये भाणरे; वा०
चिदानंद सुविलासतारे लाल, वाधे जिनवर झाणरे वा० तु० ४
लब्धि सिद्धि मंत्राक्षरेरे लाल, ऊपजे साधन संगरे. वा०
सहज अध्यातम तत्त्वतारे लाल, प्रगटे तत्त्वी रंगरे. वा० तु० ५
लोह धातु कंचन हुवेरे लाल, पारसफरसन पामिरे. वा०
प्रगटे अध्यातमदशारे लाल, व्यक्तगुणी-गुणग्रामरे वा० तु० ६
आतमसिद्धि कारज भणीरे लाल, सहज नियामक हेतुरे; वा०
नामादिक जिनराजनांरे लाल, भवसागरमांहे सेतुरे. वा० तु० ७
स्थंभन इंद्रिययोगनोरे लाल, रक्त वरण गुण रायरे; वा०
देवचंद्र वृंदे स्तव्योरे लाल, आप अवर्ण अकायरे. वा० तु० ८

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

पद्मप्रभ जिन जइ अलगा वस्या. जिहांथी नावे लेखोजी;
कागळ ने मशि जिहां नवि संपजे, न चले वाट विशेषोजी.
सुगुण सनेहारे कदी य न विसरे. १
इहांथी तिहां जई कोई आवे नहीं, जेह कहे संदेशोजी;
जेहनुं मिलवुं दोहिलुं, तेहशुं-नेह ते आप-किलेशोजी. सु० २
वीतरागशुं राग ते अेक पखो, कीजे कवण प्रकारोजी;
घोडो दोडे रे साहेब वाजमां[1], मन नाणे[2] असवारोजी. सु० ३
साची भक्तिरे भावन रस कह्यो, रस होय तिहां दोय रीझेजी;
होडाहोडेरे बिहु रसरीझथी, मनना मनोरथ सीझे—. सु० ४
पण गुणवंतारे गोठे गाजिये, मोटा ते विश्रामजी;
वाचक यश कहे अेहज आशरे, सुख लहुं ठामोठामजी. सु० ५

---

१ लगाम अनुसारः पाठान्तर काजमां. २. न लावे.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

ओलगडी घणी एक कर हो ओलग हो—ओ देशी.

परम रस भीनो महारो, निपुण नगीनो माहरो, साहिबो;
प्रभु मोरा पद्म प्रभु प्राणाधार हो, ज्योतिरमा आलिंगीने,
प्रभु मोरा अछक छक्यो दिनरात हो ओलग पण नवि सांभळे,
प्रभु मोरा तो श्यो दरिशण वान हो. प० नि० १
निरभय पद पाम्या पछे, प्र० जाणीओ नवि होवे नेह हो;
ते नेह जाणे आगळे, प्र० अलगा ते निःसनेहहो. प० नि० २
पद लेतां तो लह्या विभु, प्र० पण निज निज द्रव्य कहाय हो;
अमे सुद्रव्य सुगुण घणुं, प्र० सहितो तिणे शरमाय हो. प० नि० ३
तिहां रह्या करुणा नयनथी, प्र० जोतां शुं ओछुं थाय हो?
जिहां तिहां जिनलावण्यता, प्र० देहली-दीपक न्याय हो.प०नि० ४
जो प्रभुता अमे पामता, प्र० कहेवुं न पडे तो ओम हो;
जो देशो तो जाणुं अमे, दरिसण दलिद्रता केम हो? प० नि० ५
हाथे तो नावी शक्यो, प्र० न करो कोईनो विश्वास हो;
पण भोळवीओ जो भक्तिथी, प्र० कहेजो तो शाबाश हो. प० नि० ६
कमळलंछन कीधी मया, प्र० गुनाह करी बगसीस हो;
रूप विबुधनो मोहन भणी, प्र० पूरजो सकल जगीश हो प० नि० ७

---

७. श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

राग सारंग तथा मल्हार, ललनानी—ओ देशी.

श्री सुपास जिन वंदिये, सुखसंपत्तिनो हेतु ललना;
शांत सुधारस जलनिधि, भवसागर मांहे सेतु ललना.श्री सु० १
सात महाभय टालतो, सप्तम जिनवर देव; ल०
सावधान मनसा करी, धारो जिनपद सेव. ल० श्री सु० २

शिवशंकर जगदीश्वरु, चिदानंद भगवान; ल०
जिनअरिहा तीर्थंकरु ज्योति सरूप असमान. ल० श्री सु० ३

अलख निरंजन वच्छलु, सकल जंतु-विशराम; ल०
अभयदान दाता सदा, पूरण आतमराम. ल० श्री सु० ४

वीतराग मद कल्पना, रति अरति भय शोग; ल०
निद्रा तंद्रा दुरदशा, रहित अवाधित योग. ल० श्री सु० ५

परम पुरुप परमातमा, परमेश्वर परधान; ल०
परम पदारथ परमेष्ठि, परमदेव परमान्न. ल० श्री सु० ६

विधि विरंची विश्वंभरु, हृषीकेश जगनाथ; ल०
अघहर अघमोचन घणी, मुक्तिपरमपद साथ. ल० श्री सु० ७

अेम अनेक अभिधा धरे, अनुभवगम्य विचार ल०
जेह जाणे तेहने करे, आनंदघन अवतार. ल० श्री सु० ८

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

हे सुंदर! तप सरिखो जग को नहीं–अे देशी.

श्री सुपास आनंदमें, गुण अनंतनो कंद हो; जिनजी०
ज्ञानानंदे पूरणो, पवित्र चारित्रानंद हो. जि० सुपास० १

संरक्षण विण नाथ छो, द्रव्य विना धनवंत हो; जि०
कर्तापद किरिया विना, संत अजेय अनंत हो. जि० श्री सु० २

अगम अगोचर अमर तुं, अन्यय ऋद्धिसमूह हो; जि०
वर्ण गंधरस फरसविणु, निज भोक्ता गुणव्यूह हो. जि० श्री सु० ३

अक्षय दान अचिंतना, लाभ अयत्ने भोग हो. जि०
वीर्य शक्ति अप्रयासता, शुद्ध स्वगुण-उपभोग हो. जि० श्री सु० ४

अकांतिक आत्यंतिको, सहज अकृत स्वाधीन हो; जि०
निरुपचरित निर्द्वंद्व सुख अन्य अहेतुक[1] पीन हो. जि० श्री सु० ५

अेक प्रदेशे ताहरे, अव्याबाध समाय हो; जि०
तसु पर्याय अविभागता, सर्वाकाश न माय हो. जि० श्री सु० ६

अेम अनंत गुणनो धणी, गुण-गणनो आनंद हो जि०
भोग-रमण आस्वादयुत प्रभु तुं परमानंद हो. जि० श्री सु० ७

अव्याबाध रुचि थई, साधे अव्याबाध हो; जि०
देवचंद्र पद ते लहे परमानंद समाध हो. जि० श्री सु० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

लाछलदे मात मलार—अे देशी.

श्री सुपार्श्व जिनराज. तुं त्रिभुवनशिरताज;
आज हो छाजेरे ठकुराई, प्रभु तुज पद तणीजी. १

दिव्य ध्वनि सुर फूल, चामर छत्र अमूल;
आज हो राजेरे भामंडल गाजे दुंदुभिजी. २

अतिशय सहजना चार, कर्म खप्याथी अग्यार;
आज हो कीधारे ओगणीशे, सुरगण भासुरेजी. ३

वाणीगुण पांत्रीश, प्रतिहारज जगदीश;
आजहो राजेरे दीवाजे, छाजे आठशुंजी. ४

सिंहासन अशोक, बेठा मोहे लोक;
आज हो स्वामीरे शिवगामी, वाचकयशथुण्योजी. ५

---

1. पुष्ट, २ स्वभाविक

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

झीणा मारुनी करहलडी–अे देशी.

वहाला मेह बपियडा, अहिकुलने मृगकुलने,
तिम वळी नादे वाह्या हो राज,
मधुकरने नवमल्लिका, तिम मुजने घणी वहाली,
सातमा जिननी सेवा हो राज. १

अन्यउत्थिक [1]सुर छे घणा, पण मुज मनडुं तेहथी,
नावे अेकण रागे हो राज;
राच्यो हुं रूपातीतथी, कारण मनमान्यानुं,
शुं कांइ आपो हाथे हो राज. सा० २

मूळनी भक्ते रीझशे, नहि तो अवरनी रीते,
क्यारे पण नवि खीजे हो राज;
ओलगडी मोंघी थशे, कंबल होवे भारी,
जिमजिम जलथी भींजे हो राज. सा० ३

मनथी निवाजस नहि करे, तो कर ग्रहीने लीजे,
आवशे ते लेखे हो राज;
मोटाने कहेवुं कीश्युं; पगदोडी अनुचरनी,
अंतरजामी देखे हो राज. सा० ४

अेहथी शुं अधिकोय छे, आवी मनडे वसीओ,
साचो सुगुण सनेही हो राज;
जे वश होशे आपने, तेहने माग्युं देतां,
अजर[2] रहे कहो केही हो राज. सा० ५

---

1. अन्यतीर्थी हरिहारादिक देवो. २ निर्धन.

अति परचो विरचे नहि नित नित नवलो नवलो,
प्रभुजी मुजथी भासे हो राज;
अे प्रभुता अे निपुणता, परमपुरुष जे जेहवी,
किहांथी कोइ पासे हो राज. सा० ६

भीनो परम महारसे, माहरो नाथ नगीनो,
तेहने ते कुण निंदे हो राज;
समकित दृढता कारणे, रूपविबुधनो मोहन,
स्वामी सुपासने वंदे हो राज. सा० ७

---

८. चंद्रप्रभ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग केदारो तथा गोडी.

कुमरी रोवे आक्रंद करे, मुने कोइ मुकावे–अे देशी.

देखण दे रे सखि, मुने देखण दे, चंद्रप्रभ मुखचंद, सखि०
उपशम रसनो कंद स० सेवे सुर नर इंद. सखि०
गत कलिमल दुःख द्वंद्व सखि. मुने० १

सुहम निगोदे न देखियो सखि० बादर अतिहि विशेष स०
पुढवी आउ न लेखियो स० तेउ वाउ न लेश स० मु० २

वनस्पति अति घण दिहा स० दीठो नहीं य दीदार. स०
बिति-चउरिंदी जल लिहा स० गति सन्नि पण धार. स० मु० ३

सुर तिरि निरय निवासमां स० मनुज अनारज साथ. स०
अपज्जता प्रतिभासमां स० चतुर न चढियो हाथ. स० मु० ४

अेम अनेक थल जाणिये स० दरिसण विण जिनदेव: स०
आगमथी मति आणिये स० कीजे निर्मल सेव स० मु० ५
निर्मल साधु भगति लही स० योग अवंचक होय; स०
किरिया अवंचक तिम सही स० फल अवंचक जोय. स० मु० ६
प्रेरक अवसर जिनवरु स० मोहनीय क्षय जाय; स०
कामितपूरण सुरतरु स० आनंदघन प्रभु प्राय. स० मु० ७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

श्री श्रेयांस जिन अंतरजामी—अे देशी.

श्री चंद्रप्रभ जिनवर-सेवा, हेवाअे जे हलियाजी;
आतमगुण अनुभवथी मलिया, ते भव-भयथी टलियाजी.
श्री चंद्रप्रभ० १

द्रव्यसेव वंदन नमनादिक, अर्चन वली गुण ग्रामोजी;
भाव अभेद थवानी इहा, परभावे निष्कामोजी. श्री० २

भावसेव अपवादे नैगम, प्रभु-गुणने संकल्पेजी,
संग्रह सत्ता तुल्यारोपे, भेदाभेद विकल्पेजी. श्री० ३

व्यवहारे बहुमान ज्ञान निज, चरणे जिन-गुण रमणाजी;
प्रभु-गुण आलंबी परिणामे, ऋजु पद ध्यान स्मरणाजी. श्री० ४

शब्दे शुकल ध्यानारोहण, समभिरूढ गुण दशमेजी;
बीअे शुकल अविकल्प अेकत्वे, अेवंभूत ते अममेजी. श्री० ५

उत्सर्ग समकित गुण प्रगट्यो, नैगम प्रभुता अंशेजी;
संग्रह आतम सत्तालंबी, मुनिपद भाव प्रशंसेजी. श्री० ६

ऋजुसूत्रे जे श्रेणी पदस्थे, आतम-शक्ति प्रकाशेजी;
यथाख्यात पद शब्द स्वरूपे, शुद्ध धर्म उल्लासेजी. श्री० ७

अति परचो विरचे नहि नित नित नवलो नवलो,
प्रभुजी मुजथी भासे हो राज;
अे प्रभुता अे निपुणता, परमपुरुष जे जेहवी,
किहांथी कोइ पासे हो राज. सा० ६

भीनो परम महारसे, माहरो नाथ नगीनो,
तेहने ते कुण निंदे हो राज;
समकित दृढता कारणे, रूपविबुधनो मोहन,
स्वामी सुपासने वंदे हो राज. सा० ७

---

८. चंद्रप्रभ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग केदारो तथा गोडी.

कुमरी रोवे आक्रंद करे, मुने कोइ मुकावे—अे देशी.

देखण दे रे सखि, मुने देखण दे, चंद्रप्रभ मुखचंद, सखि०
उपशम रसनो कंद स० सेवे सुर नर इंद. सखि०
गत कलिमल दुःख द्वंद्व सखि. मुने० १

सुहम निगोदे न देखियो सखि० बादर अतिहि विशेष स०
पुढवी आउ न लेखियो स० तेउ वाउ न लेश स० मु० २

वनस्पति अति घण दिहा स० दीठो नहीं य दीदार. स०
बिति-चउरिंदी जल लिहा स० गति सन्नि पण धार. स० मु० ३

सुर तिरि निरय निवासमां स० मनुज अनारज साथ. स०
अपज्जता प्रतिभासमां स० चतुर न चढियो हाथ. स० मु० ४

એમ અનેક થલ જાણિયે સ૦ દરિસણ વિણ જિનદેવ; સ૦
આગમથી મતિ આણિયે સ૦ કીજે નિર્મલ સેવ સ૦ મુ૦ ૫
નિર્મલ સાધુ ભગતિ લહી સ૦ યોગ અવંચક હોય; સ૦
કિરિયા અવંચક તિમ સહી સ૦ ફલ અવંચક જોય. સ૦ મુ૦ ૬
પ્રેરક અવસર જિનવરુ સ૦ મોહનીય ક્ષય જાય; સ૦
કામિતપૂરણ સુરતરુ સ૦ આનંદઘન પ્રભુ પ્રાય. સ૦ મુ૦ ૭

શ્રી દેવચંદ્રજી કૃત સ્તવન.

શ્રી શ્રેયાંસ જિન અંતરજામી—એ દેશી.

શ્રી ચંદ્રપ્રભ જિનવર-સેવા, હેવાએ જે હલિયાજી;
આતમગુણ અનુભવથી મલિયા, તે ભવ-ભયથી ટલિયાજી.
શ્રી ચંદ્રપ્રભ૦ ૧

દ્રવ્યસેવ વંદન નમનાદિક, અર્ચન વલી ગુણ ગ્રામોજી;
ભાવ અભેદ થવાની ઇહા, પરભાવે નિષ્કામોજી. શ્રી૦ ૨

ભાવસેવ અપવાદે નૈગમ, પ્રભુ-ગુણને સંકલ્પેજી,
સંગ્રહ સત્તા તુલ્યારોપે, ભેદાભેદ વિકલ્પેજી. શ્રી૦ ૩

વ્યવહારે બહુમાન જ્ઞાન નિજ, ચરણે જિન ગુણ રમણાજી;
પ્રભુ-ગુણ આલંબી પરિણામે, ઋજુ પદ ધ્યાન સમરણાજી. શ્રી૦ ૪

શબ્દે શુક્લ ધ્યાનારોહણ, સમભિરૂઢ ગુણ દશમેજી;
બીએ શુક્લ અવિકલ્પ એકત્વે, એવંભૂત તે અમમેજી. શ્રી૦ ૫

ઉત્સર્ગે સમકિત ગુણ પ્રગટ્યો, નૈગમ પ્રભુતા અંશેજી;
સંગ્રહ આતમ સત્તાલંબી, મુનિપદ ભાવ પ્રશંસેજી. શ્રી૦ ૬

ઋજુસૂત્રે જે શ્રેણી પદસ્થે, આત્મ-શક્તિ પ્રકાશેજી;
યથાખ્યાત પદ શબ્દ સ્વરૂપે, શુદ્ધ ધર્મ ઉલ્લાસેજી. શ્રી૦ ૭

भाव सयोगी अयोगी शैलेशे, अंतिम दुग नय जाणोजी;
साधनताअे निज गुणव्यक्ति, तेह सेवना वखाणोजी. श्री० ८
कारण भाव ते अपवादे, कार्यरूप उत्सर्गेजी;
आत्मभाव ते भाव द्रव्य पद, बाह्य प्रवृत्ति निसर्गेजी. श्री० ९
कारण भाव परंपर सेवन, प्रगटे कारज भावोजी;
कारज सिद्धे कारणता व्यय, शुचि परिणामिक भावोजी. श्री० १०
परम गुणी सेवन तन्मयता, निश्चय ध्याने ध्यावेजी;
शुद्धातम अनुभव आस्वादी, देवचंद्र पद पावेजी. श्री० ११

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

धनरा ढोल–अे देशी.

चंद्रप्रभ जिन साहेबारे, तुमे छो चतुर सुजाण, मनना मान्या;
सेवा जाणो दासनीरे, देशो फळ निर्वाण. मनना मान्या.
आवो आवोरे चतुर सुखभोगी, कीजे वात अेकांत अभोगी;
गुण गोठे प्रगटे प्रेम, मनना मान्या १
ओछुंअधिकुं पण कहेरे, आसंगायत[1] जेह; म०
आपे फल जे अणकहेरे, गिरुओ साहेब तेह. म० २
दीन कह्या विण दानथीरे, दातानी वाधे माम; म०
जल दीअे चातक खीजवीरे, मेघ हुओ तिणे श्याम म० ३
'पीउ पीउ' करी तुमने जपुंरे, हुं चातक तुमे मेह; म०
अेक लहेरमां दुःख हरोरे, वाधे बमणो नेह. म० ४
मोडुं–वहेलुं आपवुं रे, तो शी ढील कराय? म०
वाचक यश कहे जगधणी रे, तुम तूठे सुख थाय. म० ५

---

१. रागी, प्रेमी.

श्री मोहनविजयनी कृत स्तवन.

नंद सलूणा नंदनोरे लो-ओ देशी.

श्री शंकर चंद्रप्रभुरे लो, तुं ध्याता जगनो विभुरे लो;
तिणे हुं ओलगे आवीओरे लो तुमे पण मुज मन भावीओरे लो. १
दीधी चरणनी चाकरीरे लो, हुं सेवुं हरखे करीरे लो;*
साहिब सामुं निहाळजोरे लो, भवसमुद्रथी तारजोरे लो. २
अगणितगुण गणवा तणीरे लो, मुज मन होंस धरे घणीरे लो;
जिम नभने पाम्या पखीरे लो, दाखे बाळक करथी लखीरे लो. ३
जो जिन तुं छे पांशरोरे लो, करमतणो शो आशरोरे लो;
जो तुमे राखशो गोदमांरे लो. तो किम जाशुं निगोदमांरे लो. ४
जब ताहरी करुणा थइरे लो, कुमति कुगति दुरे गइरे लो;
अध्यातमरवि उगियोरे लो, पाप तिमिर कीहां पूगियोरे लो. ५
तुज मूरति माया जीसीरे लो, उर्वशी थइ उरे वसीरे लो;
रखे प्रभु टाळो अेक घडीरे लो, नजरवादळनी छांयडीरे लो. ६
ताहरी भक्ति भली बनीरे लो, जिम ओषधि संजीवनीरे लो;
तन मन आनंद उपनोरे लो, कहे मोहन कवि रूपनोरे लो. ७

---

९. श्री सुविधिनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग केदारो, अेम धन्नो धणने पर चावे-ओ देशी.

सुविधि जिणेसर पाय नमीने, शुभ करणी अेम कीजेरे;
अति गुणो ऊलट अंग धरीने, प्रह ऊठी पूजीजेरे. सुविधि० १
द्रव्य भाव शुचि भाव धरीने, हरखे देहरे जइअेरे;
दह[1] तिग पण[2] अहिगम साचवतां, अेकमना धुरि थइअेरे. सु० २

---

* पाठान्तरः-तुमे पण मुजने मया करीरे लो. १ दशत्रिक. २ पांच अभिगम

कुसुम अक्षत वर वास सुगंधो, धूप दीप मन साखीरे;
अंग पूजा पण भेद सुणी अेम, गुरुमुख आगम भाखीरे. सु० ३
अेहनुं फल दोय भेद सुणीजे, अनंतर ने परंपररे;
आणापालण चित्तप्रसन्नी, मुगति सुगति सुर मंदिररे. सु० ४
फूल अक्षत वर धूप पइवो, गंध नैवेद्य फल जल भरीरे;
अंग अग्र पूजा मळी अडविध, भावे भविक शुभगति वरीरे, सु० ५
सत्तर भेद अेकवीस प्रकारे. अठोत्तर[1] शत भेदेरे;
भाव पूजा बहुविधि निरधारी, दोहग दुर्गति छेदेरे; सु० ६
तुरिय[2] भेद पडिवत्ति[3] पूजा, उपशम खीण सयोगीरे;
चउहा पूजा इम उत्तरझयणे,[4] भाखी केवल भोगीरे. सु० ७
अेम पूजा बहुभेद सुणीने, सुखदायक शुभ करणी रे;
भविक जीव करशे ते लेशे, आनंदघनपद धरणी रे. सु० ८

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

थारा महेला उपर मेह, झबुके बीजली हो लाल–अे देशी.

दीठो सुविधि जिणंद, समाधिरसे भर्यो हो लाल, स० १
भास्युं आतमस्वरूप, अनादिनो विसर्यो हो लाल. अ०
सकल विभाव उपाधि, थकी मन ओसर्यो हो लाल, थ०
सत्ता साधन मार्ग, भणी अे संचर्यो हो लाल, भ० १
तुम प्रभु जाणंग रिति, सरव जग देखता हो लाल, स०
निज सत्ताअे शुद्ध, सहुने लेखता हो लाल, स०
पर परिणति अद्वेष, पणे उवेखता हो लाल, प०
भोग्य पणे निज शक्ति, अनंत गवेषता हो लाल. अ० २

---

१ अष्टोत्तरी–१०८ प्रकारी. २ चोथो. ३ प्रतिपत्ति, अंगीकार.
४ उत्तराध्ययनसूत्रमां.

दानादिक निज भाव, हता जे परवशा हो लाल ह०
ते निज सन्मुख भाव, ग्रही लही तुज दशा हो लाल. ग्र०
प्रभुनो अद्‌भुत योग, स्वरूपतणी रसा हो लाल. स्व०
वासे भासे तास. जास गुण तुज जिसा हो लाल. जा० ३

मोहादिकनी घूमि, अनादिनी ऊतरे हो लाल, अ०
अमल अखंड अलिप्त, स्वभावज सांभरे हो लाल, स्व०
तत्त्व-रमण शुचि ध्यान, भणी जे आदरे हो लाल, भ०
ते समतारस धाम, स्वामी मुद्रा वरे हो लाल. स्वा० ४

प्रभु छो त्रिभुवननाथ, दास हुं ताहरो हो लाल, दा०
करुणानिधि अभिलाष, अछे मुज अे खरो हो लाल. अ०
आतम वस्तु स्वभाव, सदा मुज सांभरो हो लाल, स०
भासन वासन अेह. चरण ध्याने धरो हो लाल. च० ५

प्रभुमुद्राने योग, प्रभु प्रभुता लखे हो लाल, प्र०
द्रव्य तणे साधर्म्य, स्वसंपत्ति ओळखे हो लाल. स्व०
ओळखतां बहुमान, सहित रुचि पण वधे हो लाल, सु०
रूचि-अनुयायी वीर्य, चरणधारा सधे हो लाल. च० ६

क्षायोपशमिक गुण सर्व, थया तुज गुण रसी हो लाल, थ०
सत्ता साधन शक्ति, व्यक्तता उल्लसी हो लाल, व्य०
हवे संपूरण सिद्ध, तणी शी वार छे हो लाल, त०
देवचंद्र जिनराज, जगत आधार छे हो लाल. ज० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

सुण मेरी सजनी रजनी न जावेरे–अे देशी.

लघु पण हुं तुम मन नवि मावुं रे, जगगुरु तुमने दिलमां लावुं रे;
कुणने अे दीजे साबाशीरे? कहो श्री सुविधि जिणंद विमासीरे. लघु० १
मुज मन-अणुमांहे भक्ति छे झाझीरे, तेह दरीनो[1] तुं छे माजीरे;[2]
योगी पण जे वात न जाणेरे, तेह अचरिज कुणथी हुओ टाणेरे. लघु० २

---

१ नानुं वहाण, २ टंडेल (कप्तान); आ बंगाली भाषाना शब्दो छे, संस्कृत भाषामां तो 'दरी'नो अर्थ गुफा थाय छे.

अथवा थिरमांही अथिर न मावेरे, मोटो गज दर्पणमां आवे रे;
जेहने तेजे[3] बुद्धि प्रकाशीरे, तेहने दीजे सावाशीरे. लघु० ३

उर्ध्वमूळ तरुवर अध शाखारे, छंदपुराणे अेहवी छे भाखारे;
अचरिज वाळे अचदिज कीधुंरे, भक्ते सेवक कारज सीधुंरे. लघु० ४

लाड करी जे बाळक बोलेरे, मात पिता मन अमियने तोलेरे;
श्रीनयविजयविबुधनो शिषोरे, यश कहे इम जाणो जगदीशोरे. लघु०५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

अरज सुणो अेक सुविधि जिणेसर,
परम कृपानिधि तुमे परमेसर;
साहिबा सुज्ञानी, जोवो तो,
वात छे मान्यानी;
कहेवाओ पंचम चरणना धारी,
किम आदरी अश्वनी असवारी? सा० १

छो त्यागी शिववास वसो छो,
दृढरथसुत रथे किम बेसो छो? सा०
आंगीप्रमुख परिग्रहमां पडशो,
हरिहरादिकने किणविध नडशो? सा० २

धुरथी सकल संसार निवार्यो,
किम फरी देवद्रव्यादिक धार्यो? सा०
तजी संजमने थाशो गृहवासी,
कुण आशातना तजशे चोराशी? सा० ३

समकित मिथ्या मतमां निरंतर,
इम किम भांजशे प्रभुजी अंतर? सा०

---

३ जेना प्रभावथी.

लोक तो देखशे तेहवुं कहेशे,
इम जिनता तुम किणविध रहेशे? सा० ४
पण हवे शास्त्रगते मति पहोंची,
तेहथी में जोयुं ऊंडुं आलोची; सा०
इम कीधे तुम प्रभुताई न घटे,
सामुं इम अनुभव गुण प्रगटे. सा० ५
हय-गय यद्यपि तुं आरोपाअे,
तो पण सिद्धपणुं न लोपाअे; सा०
जिम मुगटादिक भूषण कहाअे,
पण कंचननी कंचनता न जाअे. सा० ६
भक्तनी* करणी दोष न तुमने,
अघटित कहेवुं अयुक्त ते अमने; सा०
लोपाअे नहि तुं कोईथी स्वामी.
मोहन विजय कहे शिर नामी. सा० ७

---

१०. श्री शीतलनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग धन्यासरी गोडी

मंगलिक माला गुणह विशाला—अे देशी

शीतल जिनपति ललित त्रिभंगी, विविध भंगी मन मोहेरे;
करुणा कोमलता तीक्ष्णता, उदासीनता सोहेरे. शी० १
सर्वजंतु हितकरणी करुणा, कर्मविदारण तीक्षणरे;
हानादानरहित परिणामी, उदासीनता वीक्षणरे. शी० २

* ए वधी भक्तजनोनी करणी छे, एमां तमने कंई दोषप्राप्ति थती नथी.

परदुःख छेदन ईच्छा करुणा, तीक्षण परदुःख रीझेरे;
उदासीनता उभय विलक्षण, अेक ठामे केम सीझेरे. शी० ३
अभयदान ते मलक्षय करुणा, तीक्षणता गुण भावेरे;
प्रेरणविण कृत उदासीनता, इम विरोध मति नावेरे. शी० ४
शक्ति व्यक्ति, त्रिभुवन प्रभुता, निर्ग्रंथता संयोगेरे;
योगी भोगी, वक्ता मौनी, अनुपयोगी उपयोगेरे. शी० ५
इत्यादिक बहुभंग त्रिभंगी, चमत्कार चित्त देतीरे;
अचरिजकारी चित्रविचित्रा, आनंदघन पद लेतीरे. शी० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

आदर जीव क्षमा गुण आदर–अे देशी.

शीतल जिनपति प्रभुता प्रभुनी, मुजथी कहिय न जायजी;
अनंतता निर्मलता पूर्णता, ज्ञान विना न जणायजी. शी० १
चरम जलधि जल मिणे[1] अंजलि, गति जीपे अतिवायजी;
सर्व आकाश ओलंघे चरणे, पण प्रभुता न गणायजी. शी० २
सर्व द्रव्य प्रदेश अनंता, तेहथी गुण पर्यायजी;
तास वर्गथी अनंत गुणुं प्रभु, केवलज्ञान कहायजी. शी० ३
केवल दर्शन अेम अनंतुं, ग्रहे सामान्य स्वभावजी;
स्वपर अनंतथी चरण अनंतुं, सरमण संवर भावजी. शी० ४
द्रव्य क्षेत्र ने काळ भाव गुण, राजनीति अे चारजी;
त्रास विना जड चेतन प्रभुनी, कोई न लोपे [2]कारजी. शी० ५
शुद्धाशय थिर प्रभु उपयोगे, जे समरे तुज नामजी;
अव्याबाध अनंतुं पामे, परम अमृत सुखधामजी. शी० ६
आणा ईश्वरता निर्भयता, निर्वांछकता रूपजी;
भाव स्वाधीन ते अव्यय रीते, इम अनंत गुणभूपजी. शी० ७

---

१ मापे. २ आज्ञा.

अव्यावाध सुच निर्मल ते तो करणज्ञाने न जणायजी;
तेहज अेहनो जाणंग भोक्ता, जे तुम सम गुणरायजी. शी० ८

अेम अनंत दानादिक निज गुण वचनातीत पडुंरजी;*
वासन भासन भावे दुर्लभ, प्राप्ति तो अति दूरजी. शी० ९

सकल प्रत्यक्षपणे त्रिभुवन-गुरु, जाणुं तुज गुणग्रामजी;
वीजुं कांइ न मागु स्वामी; अेहिज छे मुज कामजी. शी० १०

अेम अनंत प्रभुता सद्दहतां, अर्चे जे प्रभुरूपजी;
देवचंद्र प्रभुता ते पामे, परमानंद स्वरूपजी. शी० ११

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

श्री शीतलजिन भेटिये, करी भक्ते चोक्खुं चित्त हो;
तेहथी कहो छानुं किश्युं, जेहने सोंप्यां तन मन वित्त हो. श्री० १

दायक नामे छे घणा, पण तुं सायर[1] ते कूप हो;
ते वहु खजवा[2] तगतगे, तुं दिनकर[3] तेजस्वरूप हो श्री० २.

मोटो जाणी आदर्यो दालिद्र भांजो जगतात हो;
तुं करुणावंत शिरोमणि, हुं करुणापात्र विख्यात हो. श्री० ३.

अंतरजामी सवि लहो, अम मननी जे छे वात हो;
मा आगळ मोसाळना, शा वरणवा अवदात[4] हो. श्री० ४.

जाणो तो ताणो किश्युं ? सेवा-फल दीजे देव हो.
वाचक यश कहे ढीलनी, अे न गमे मुज मन टेव हो. श्री० ५.

---

* मोटा. १ सागर, २ आगिया, ३ सूर्य ४ वृत्तांत, हकीकत.

परदुःख छेदन ईच्छा करुणा, तीक्षण परदुःख रीझेरे;
उदासीनता उभय विलक्षण, अेक ठामे केम सीझेरे. शी० ३
अभयदान ते मलक्षय करुणा, तीक्षणता गुण भावेरे;
प्रेरणविण कृत उदासीनता, इम विरोध मति नावेरे. शी० ४
शक्ति व्यक्ति, त्रिभुवन प्रभुता, निर्ग्रंथता संयोगेरे;
योगी भोगी, वक्ता मौनी, अनुपयोगी उपयोगेरे. शी० ५
इत्यादिक बहुभंग त्रिभंगी, चमत्कार चित्त देतीरे;
अचरिजकारी चित्रविचित्रा, आनंदघन पद लेतीरे. शी० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

आदर जीव क्षमा गुण आदर–अे देशी.

शीतल जिनपति प्रभुता प्रभुनी, मुजथी कहिय न जायजी;
अनंतता निर्मलता पूर्णता, ज्ञान विना न जणायजी. शी० १
चरम जलधि जल मिणे[1] अंजलि, गति जीपे अतिवायजी;
सर्व आकाश ओलंघे चरणे, पण प्रभुता न गणायजी. शी० २
सर्व द्रव्य प्रदेश अनंता, तेहथी गुण पर्यायजी;
तास वर्गथी अनंत गुणुं प्रभु, केवलज्ञान कहायजी. शी० ३
केवल दर्शन अेम अनंतु, ग्रहे सामान्य स्वभावजी;
स्वपर अनंतथी चरण अनंतुं, सरमण संवर भावजी. शी० ४
द्रव्य क्षेत्र ने काळ भाव गुण, राजनीति अे चारजी;
त्रास विना जड चेतन प्रभुनी, कोई न लोपे [2]कारजी. शी० ५
शुद्धाशय थिर प्रभु उपयोगे, जे समरे तुज नामजी;
अव्याबाध अनंतु पामे, परम अमृत सुखधामजी. शी० ६
आणा ईश्वरता निर्भयता, निर्वांछकता रूपजी;
भाव स्वाधीन ते अव्यय रीते, इम अनंत गुणभूपजी. शी० ७

---

१ मापे. २ आज्ञा.

अव्याबाध सुख निर्मल ते तो करणज्ञाने न जणायजी;
तेहज अेहनो जाणंग भोक्ता, जे तुम सम गुणरायजी. श्री० ८

अेम अनंत दानादिक निज गुण वचनातीत पडुंरजी;*
वासन भासन भावे दुर्लभ, प्राप्ति तो अति दूरजी. श्री० ९

सकल प्रत्यक्षपणे त्रिभुवन-गुरु, जाणुं तुज गुणग्रामजी;
बीजुं कांइ न मागु स्वामी; अेहिज छे मुज कामजी. श्री० १०

अेम अनंत प्रभुता सद्दहतां, अर्चे जे प्रभुरूपजी;
देवचंद्र प्रभुता ते पामे, परमानंद स्वरूपजी. श्री० ११

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

श्री शीतलजिन भेटिये, करी भक्ते चोक्खुं चित्त हो;
तेहथी कहो छानुं किश्युं, जेहने सोंप्यां तन मन वित्त हो. श्री० १

दायक नामे छे घणा, पण तुं सायर[1] ते कूप हो;
ते बहु खजवा[2] तगतगे, तुं दिनकर[3] तेजस्वरूप हो श्री० २

मोटो जाणी आदर्यो दालिद्र भांजो जगतात हो;
तुं करुणावंत शिरोमणि, हुं करुणापात्र विख्यात हो. श्री० ३

अंतरजामी सवि लहो, अम मननी जे छे वात हो;
मा आगळ मोसाळना, शा वरणवा अवदात[4] हो. श्री० ४

जाणो तो ताणो किश्युं? सेवा-फल दीजे देव हो.
वाचक यश कहे ढीलनी, अे न गमे मुज मन टेव हो. श्री० ५

---

* मोटा. १ सागर, २ आगिया, ३ सूर्य ४ वृत्तांत, हकीकत.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

घोडी तो आइ यारा देशमां—अे देशी.

शीतळ जिनवर सेवना, साहेबजी !
शीतळ जिम शशीबिंब हो ससनेही;
मूरति मारे मन वसी, सा०
सापुरीसाशुं गोठडी सा० मोटो ते आलालुंब हो. स० १
खीण अेक मुजने न विसरे, सा० हुं तुम पगनी खेह हो; स०
देव अवरने शुं करुं, सा० भेट थई भगवंत हो. स० २
तुमे छो मुगट त्रिहुं लोकना, सा० हुं तुम पगनी खेह हो स०
तुमे छो सघन ऋतु मेहुलो, सा० हुं पच्छिम दिशि त्रेह हो. स० ३
निरागी प्रभु रीझवुं, सा० ते गुण नहि मुजमांही हो; स०
गुरु गुरुता साहमुं जुअे, सा० गुरुता ते मूके नांही हो, स० ४
मोटासेती वरोबरी, सा० सेवक किणविध थाय हो; स०
आसंगो किम कीजीअे, सा० तिहां रह्या आलुंभाय हो स० ५
जगगुरु, करुणा कीजीअे, सा० न लख्यो आभार विचार हो; स०
मुजने राज, निवाजशो, सा० तो कुण वारणहार हो? स० ६
ओलग अनुभव भावथी, सा० जाणो जाण सुजाणहो; स०
मोहन कहे कवि रूपनो, सा० जिनजी जीवन-प्राण हो. स० ७

---

११. श्री श्रेयांसनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

राग गोडी. अहो मतवाले साजना—अे देशी.

श्री श्रेयांसजिन अंतरजामी, आतमरामी नामीरे;
अध्यातम मत पूरण पामी, सहज मुगति गतिगामी रे. श्री श्रे० १

सयल संसारी इंद्रियरामी, मुनिगुण आतमरामी रे;
मुख्यपणे जे आतमरामी, ते केवल निष्कामीरे. श्री श्रे० २
निज स्वरूप जे किरिया साधे, तेह अध्यातम लहीअेरे;
जे किरिया करि चउगति साधे. ते न अध्यातम कहीअेरे. श्री श्रे० ३
नाम अध्यातम, ठवण अध्यातम, द्रव्य अध्यातम छंडो रे;
भाव अध्यातम निज गुण साधे, तो तेहशुं रढ मंडोरे. श्री श्रे० ४
शब्द अध्यातम अरथ सुणीने, निर्विकल्प आदरजोरे;
शब्द अध्यातम भजना जाणी, हाण-ग्रहणमति धरजोरे. श्री श्रे० ५
अध्यातम जे वस्तुविचारी, बीजा जाण लबासीरे;
वस्तु गते जे वस्तु प्रकाशे, आनंदघनमतवासीरे श्री श्रे० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

प्राणी वाणी जिनतणी–अे देशी.

श्री श्रेयांस प्रभु तणो, अति अद्भुत सहजानंदरे;
गुण अेक विध त्रिक परिणम्यो, अेम गुण अनंतनो वृंदरे.
मुनिचंद जिणंद अमंद दिणंद परे, नित्य दीपतो सुखकंदरे. १
निज ज्ञाने करी ज्ञेयनो, ज्ञायक ज्ञाता पद ईशरे;
देखे निज दर्शन करी, निज दृश्य सामान्य जगीशरे. मु० २
निज रम्ये रमण करो, प्रभु चारित्रे रमता रामरे;
भोग्य अनंतने भोगवो, भोगे तेणे भोक्ता स्वामरे. मु० ३
देय दान नीत दीजते, अति दाता प्रभु स्वयमेवरे;
पात्र तुम्हे निज शक्तिना, ग्राहक व्यापकमय देवरे. मु० ४
पारिणामिक कारज तणो, कर्ता गुण करणे नाथरे;
अक्रिय अक्षय स्थितिमयी, निःकलंक अनंती आथरे[1]. मु० ५

---

1 लक्ष्मी.

पारिणामिक सत्ता तणो, अविर्भाव* विलास निवासरे;
सहज अकृत्रिम अपराश्रयी, निर्विकल्प ने निःप्रयासरे. मु० ६

प्रभुप्रभुता संभारतां, गातां करतां गुणग्रामरे;
सेवक साधनता वरे, निज संवर परिणति पामरे. मु० ७

प्रगट तत्त्वता ध्यावतां, निज तत्त्वनो ध्याता थायरे;
तत्त्वरमण एकाग्रता, पूरण तत्त्वे एह समायरे. मु० ८

प्रभु दीठे मुज सांभरे, परमातम पूर्णानंदरे;
देवचंद्र जिनराजना, नित्य वंदो पय अरविंदरे. मु० ९

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

कर्म न छूटेरे प्राणिया—अे देशी.

तुमे बहुमैत्रीरे साहेबा, मारे तो मन अेक;
तुम विण बीजोरे नवि गमे, अे मुज मोटीरे टेक.
श्री श्रेयांस कृपा करो. १

मन राखो तुमे सवितणां, पण किहां अेक मळी जाओ;
ललचावो लख लोकने, साथी [१]सहज न थाओ. श्री० २

राग भरे जन मन रहो, पण तिहुं काल वैराग;
चित्त तुमारोरे समुद्रनो, कोइ न पामेरे ताग. श्री० ३

अेवा शुं चित्त मेळव्युं, मेळव्युं पहेलां न कांइ;
सेवक निपट[२] अबुझ[३] छे, निर्वहेशो[४] तुमे सांइ. श्री० ४

निरागी शुं रे किम मिले, पण मळवानो अेकांत;
वाचक यश कहे मुज मिल्यो, भक्ते[५] कामण तंत. श्री० ५

---

* प्रगट भाग. १ साथे रहेनार, २ अत्यंत, ३ अजाण, ४ निभावशो, ५ भक्तिवडे.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

कंकणनी देशी.

श्रेयांस जिन सुणो साहिवारे, जिनजी !
दासतणी अरदास, दिलडे वसी रह्यो;
दूर रह्या जाणुं नहींरे, जिन० प्रभु तुमारे पास. दि० १
हरिमृगने ज्युं मधुरतारे, जिन० मोरने पींछकलाप; दि०
दूर रह्या जाणुं नहीं रे जिन० प्रभु तुमारे पास. दि० २
जल थळ महियल जोवतांरे, जि० चिंतामणि चढ्यो हाथ; दि०
ऊणप शी हवे माहरेरे जि० निरख्यो नयणे नाथ. दि० ३
चरणे तेहने विलगीअे रे, जि० जेहथी सीझे काम; दि०
फोगट शुं फेरो तिहां रे, जि० पूछे नहि पण नाम. दि० ४
कुडो कलियुग छोडीनेरे, जि० आप रह्या अेकांत; दि०
आपोपुं राखे घणारे, जि० पर राखे ते संत. दि० ५
देव घणा में देखियारे, जि० आडंवर पटराय; दि०
निगम नहि पण सोडथीरे, जि० आघा पसारे पाय. दि० ६
सेवकने जो निवाजीअेरे जि० तो तिहां स्थाने जाय; दि०
निपट निरागी होवतांरे, जि० स्वामीपणुं किम थाय. दि० ७
में तो तुमने आदर्यो रे, जि० भावे तुं जाण म जाण; दि०
रूपविजय कविरायनोरे, जि० मोहन वचन प्रमाण. दि० ८

---

१२. श्री वासुपूज्य स्वामी.

राग गोडी तथा परजीयो
तुंगियागिरि शिखरे सोहे—अे देशी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

वासुपूज्य जिन त्रिभुवन स्वामी, घननामी परिणामीरे;
निराकार साकार सचेतन, करम करम फल कामीरे. वासु. १

निराकार अभेद संग्राहक, भेद ग्राहक साकारो रे;
दर्शन ज्ञान दुभेद चेतना, वस्तुग्रहण व्यापारोरे. वासु० २
कर्ता परिणामी परिणामो, कर्म जे जीवे करियेरे;
अेक अनेक रूप नय वादे, नियते नर अनुसरियेरे. वासु० ३
दुःखसुख रूप करम फल जाणो, निश्चय अेक आनंदोरे;
चेतनता परिणाम न चूके, चेतन कहे जिनचंदोरे. वासु० ४
परिणामी चेतन परिणामो, ज्ञान करम फल भावीरे;
ज्ञान करम फल चेतन कहीअे, लेजो तेह मनावीरे. वासु० ५
आतमज्ञानी श्रमण कहावे, वीजा तो द्रव्यलिंगीरे;
वस्तुगते जे वस्तु प्रकाशे, आनंदघन मति संगीरे. वासु० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

पंथडो निहाळुंरे बीजा जिन तणोरे-अे देशी.

पूजना तो कीजेरे बारमा जिनतणीरे, जसु प्रगटयो पूज्य स्वभाव;
परकृत पूजारे जे ईच्छे नहिरे, साधक कारज दाव. पूजना० १
द्रव्यथी पूजारे कारण भावनुंरे, भाव प्रशस्त ने शुद्ध;
परम इष्ट वल्लभ त्रिभुवनधणीरे, वासुपूज्य स्वयंबुद्ध. पू० २
अतिशय महिमारे अति उपगारतारे निर्मल प्रभुगुण राग;
सुरमणि सुरघट सुरतरु तुच्छ ते रे, जिनरागी महाभाग. पू० ३
दर्शन ज्ञानादिक गुण आत्मनारे, प्रभु प्रभुता लयलीन;
शुद्धस्वरूपी रूपे तन्मयीरे, तसु आस्वादन पीन. पू० ४
शुद्ध तत्त्वरसरंगी चेतनारे, पामे आत्मस्वभाव,
आत्मालंबी निज गुण साधतांरे, प्रगटे पूज्य स्वभाव. पू० ५

आप अकर्ता सेवाथी हुवेरे, सेवक पूरण सिद्धि;
निज धन न दिये पण आश्रित लहेरे, अक्षय अक्षर रिद्धि. पू० ६

जिनवर पूजारे ते निज पूजनारे प्रगटे अन्वय शक्ति;
परमानंद विलासी अनुभवे रे, देवचंद्र पद व्यक्ति. पू० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन

स्वामी तुमे कांइ कामण कीधुं, चितडुं अमारुं चोरी लीधुं,
साहेवा वासुपूज्य जिणंदा, मोहना वासुपूज्य जिणंदा;
अमे पण तुमशुं कामण करशुं, भक्ति ग्रही मन घरमां धरशुं. सा० १

मन घरमां धरिया घरशोभा, देखत नित्य रहेशो थिर थोभा;
मन वैकुंठ अकुंठित भक्ते, योगी भाखे अनुभव युक्ते. सा० २

क्लेशे वासित मन संसार, कलेश रहित मन ते भवपार;
जो विशुद्ध मन घर तुमे आव्या, प्रभु तो अमे नवनिधि
ऋद्धि पाम्या. सा० ३

सात राज अलगा जइ बेठा, पण भक्ते अम मनमां पेठा;
अलगाने वलग्या जे रहेवुं, ते भाणा खडखड दुःख सहेवुं. सा० ४

ध्यायक ध्येय ध्यान गुण अेके, भेद छेद करशुं हवे टेके;
खीर नीर परे तुमशुं मलशुं, वाचक यश कहे हेजे हलशुं. सा० ५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

चुंदडी न भीजे हो साहिवाजी प्रेमनी–अे देशी

प्रभुजीशुं लागी हो पूरण प्रीतडी,

जीवन-प्राणआधार, गिरुआ जिनजी हो राज !
साहिब सुणजो हो माहरी विनति, दरिसण देजो हो,
दिलभरी श्यामजी, अहो ! जगगुरु सिरदार. गि० सा० १

चाहीने दीजे हो चरणनी चाकरी,
द्यो अनुभव अम साज; गि०
इम नवि कीजे हो साहिबाजी सांभळो,
कांइ सेवकने शिवराज. गि० सा० २

चूपशुं छाना हो साहिबा न बेसीअे,
कांइ शोभा न लहेशो कोय; गि०
दास उद्धारो हो साहिबाजी आपनो,
ज्युं होवे सुजश सवाय गि० सा० ३

अरुण जो ऊगे हो साहिबाजी अंबरे,
नाशे तिमिर अंधार; गि०
अवर देव हो साहिबाजी किंकरा,
मिलियो तुं देव मुने सार. गि० सा० ४

अवर न चाहुं हो साहिबाजी तुम छते,
जिम चातक जळधार; गि०
खटपद भीनो हो साहिबाजी प्रेमशुं,
तिम हुं हृदयमझार गि० सा० ५

सातराजने हो साहिबाजी अंते जइ वस्या,
शुं करीअे तुम प्रीत; गि०
निपट निरागी हो जिनवर तुं सही,
अे तुम खोटी रीत. गि० सा० ६

दिलनी जे वातो हो किणने दाखवुं ?
श्री वासुपूज्य जिनराय; गि०
खोण अेक आवी हो पंडेजी सांभळो,
कांई मोहन आवे दाय गि० सा० ७

---

१३. श्री विमलनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग मल्हार : इडर आंवा आंवलीरे–अे देशी.

दुःख दोहग दूरे टळयां रे, सुख संपदशुं भेट;
धिंग धणी माथे किया रे, कुण गंजे नर खेट,
विमल जिन, दीठां लोयण आज, मारां सीध्यां वांछित काज.
विमल जिन दीठां० १
चरण-कमल कमला[1] वसे रे, निर्मल थिर पद देख;
समल अथिर पद परिहरी रे, पंकज पामर पेख. वि० दी० २
मुज मन तुज पद पंकजे रे, लीनो गुण मकरंद;
रंक गणे मंदरधरा[2] रे, इंद्र चंद नागिंद. वि० दी० ३
साहिब, समरथ तुं धणी रे, पाम्यो परम उदार;
मन-विशरामी वालहो रे, आतमचो[3] आधार. वि० दी० ४
दरिसण दीठे जिनतणुं रे, संशय न रहे वेध;
दिनकर करभर पसरंतां रे, अंधकार प्रतिषेध. वि० दी० ५
अमियभरी मूरति रची रे, उपमा न घटे कोय;
शांत सुधारस झीलती रे, निरखत तृप्ति न होय. वि० दी० ६
अेक अरज सेवक तणी रे, अवधारो जिनदेव,
कृपा करी मुज दीजीअे रे, आनंदघन पद सेव. वि० दी० ७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

दास अरदास शी पेरे करेजी–अे देशी.

विमलजिन, विमलता ताहरीजी, अवर बीजे न कहाय;
लघु नदी जिम तिम लंघियेजी, स्वयंभूरमण न तराय. वि० १

---

1 लक्ष्मी. 2 मेरु-सुवर्णाचल भूमि. 3 आतमानो

सयल पुढवी गिरि जल तरुजी, कोई तोले एक हथ्थ;
तेह पण तुज गुणगण भणीजी, भाखवा नहीं समरथ. वि० २
सर्व पुद्गल नभ धर्मनाजी, तेम अधर्म प्रदेश;
तास गुणधर्म पज्जव सहुजी तुज गुण एक तणो लेश. वि० ३
एम निज भाव अनंतनीजी, अस्तिता केटली थाय;
नास्तिता स्वपरपद अस्तिताजी, तुज समकाल समाय. वि० ४
ताहरा शुद्ध स्वभावनेजी, आदरे धरी वहुमान;
तेहने तेहीज नीपजेजी, ए कोइ अद्भुत तान. वि० ५
तुम प्रभु तुम तारक विभुजी, तुम समो अवर न कोय;
तुम दरिसण थकी हुं तर्योजी शुद्ध आलंबन होय. वि० ६
प्रभु तणी विमलता ओळखीजी, जे करे थिर मन सेव;
देवचंद्र पद ते लहेजी, विमल आनंद स्वयमेव. वि० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन

नमोरे नमो श्री शत्रुंजय गिरिवर–ए देशी.

सेवो भवियां विमल जिणेसर, दुलहा सज्जन-संगाजी;
एवा प्रभुनुं दरिशन लेवुं, ते आलसमां गंगाजी. सेवो० १
अवसर पामी आलस करशे, ते मूरखमां पहेलोजी;
भूख्याने जेम घेबर देतां, हाथ न मांडे घेलोजी. से० २
भव अनंतमां दर्शन दीठुं, प्रभु एहवा देखाडेजी;
विकट ग्रंथि जे पोळ प्रोळियो, कर्म विवर उघाडेजी. से० ३
तत्त्वप्रीतिकर पाणी पाए, विमलालोके आंजीजी–
लोयण, गुरु परमान्न दिए तब, भ्रम नांखे सवि भांजीजी. से० ४
भ्रम भाग्यो तव प्रभुशुं प्रेमे वात करुं मन खोलीजी;
सरल तणे जे हइडे आवे, तेह जणावे बोलीजी. से० ५
श्रीनयविजय विबुध पय सेवक, वाचक यश कहे साचुंजी;
कोडि कपट जो कोई दिखावे, तोहि प्रभु विण नवि राचुंजी. से० ६

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

ते तरीआ भाइ ते तरीआ–अे देशी.

विमलजिनंदशुं ज्ञानविनोदी, मुखछवी शशी अवहेलेजी;
सुरवर निरखी रूप अनुपम, हजी ये निमेष न मेलेजी वि० १
विष्णु वराह थइ धरे वसुधा, अेहवुं कोइक कहे छेजी;
तो वराह लंछन मिषे प्रभुने, चरण शरणे रहे छे जी. वि० २
लीला अकळ ललित पुरुषोत्तम, शिववधू रस भीनोजी;
वेधक स्वामीथी मिलवुं सोहलुं, जे कोइ टाळे कीनोजी. वि० ३
प्रसन्न थइ जगनाथ पधार्या, मनमंदिर मुज सुधर्योजी;
हुं नट नवल विविध गति जाणुं खिण अेक तो लहो मुजरोजी. वि० ४
चोराशी लख वेश हुं आणुं, कर्म प्रतीत प्रमाणेजी;
अनुभव दान दीओ तो वारु, चेतन कहो मयाणेजी. वि० ५
जे प्रभु-भक्ति विमुख नर जगमें, ते भ्रम भूल्या भटकेजी,
सगत तेह न विगत लहीअे, पूजादिकथी चटकेजी वि० ६
कीजे प्रसाद उचित ठकुराइ, स्वामी अखय खजानोजी;
रूपविबुधनो मोहन पभणे, सेवक-विनति मानोजी वि० ७

---

१४. अनंतनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

धार तरवारनी सोहली दोहली,
चोदमा जिन तणी चरण-सेवा;
धार पर नाचता देख बाजीगरा,
सेवना-धार पर न रहे देवा. धार० १
अेक कहे सेवीअे विविध किरिया करी,
फल अनेकांत लोचन न देखे;
फल अनेकांत किरिया करी बापडा,
रडवडे चार गतिमां अलेखे. धार० २

गच्छना भेद बहु नयण निहाळतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे;
उदर-भरणादि निज काज करता थका,
मोह नडिया कलिकाल राजे. धार० ३
वचन निरपेक्ष व्यवहार जूठो कह्यो,
वचन सापेक्ष व्यवहार साचो;
वचन निरपेक्ष व्यवहार संसार फळ,
सांभळी आदरी कांई राचो. धार० ४
देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो किम रहे,
किम रहे शुद्ध श्रद्धा न आणो;
शुद्ध श्रद्धान विणु सर्व किरिया करी,
छारपर लीपणुं तेह जाणो. धार० ५
पाप नहीं कोइ उत्सूत्र भाषण जिस्यो,
धर्म नहीं कोइ जग सूत्र सरिखो;
सूत्र अनुसार जे भविक किरिया करे,
तेहनुं शुद्ध चारित्र परीखो धार० ६
अेह उपदेशना सार संक्षेपथी,
जे नरा चित्तमें नित्य ध्यावे;
ते नरा दिव्य बहु काळ सुख अनुभवी,
नियत आनंदघन राज पावे. धार० ७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

दीठी हो प्रभु दीठी जगगुरु तुझ-अे देशी

मूरति हो प्रभु, मूरति अनंत जिणंद,
ताहरी हो प्रभु, ताहरी मुज नयणे वसीजी;
समता हो प्रभु, समता रसनो कंद,
सहेजे हो प्रभु, सहेजे अनुभव रस लसीजी. १

भवदव हो प्रभु, भवदवतापित जीव,
　　तेहने ही प्रभु, तेहने अमृतघन समीजी;
मिथ्या हो प्रभु, मिथ्याविषनी खीव,[1]
　　हरवा हो प्रभु, हरवा जांगुलि[2] मन रमीजी. २
भाव हो प्रभु, भाव चिंतामणि अेह;
　　आतम हो प्रभु, आतम संपत्ति आपवाजी;
अेहिज हो प्रभु, अेहिज शिवसुखगेह,
　　तत्त्व हो प्रभु, तत्त्वालंबन थापवाजी. ३
जाये हो प्रभु, जाये आश्रवचाल,
　　दीठे हो प्रभु, दीठे संवरता वधेजी,
रत्न हो प्रभु, रत्नत्रयी गुणमाल,
　　अध्यातम हो प्रभु, अध्यातमसाधन सधेजी ४
मीठी हो प्रभु, मीठी सूरत तुज,
　　दीठी हो प्रभु, दीठी रुचिबहुमानथीजी;
तुज गुण हो प्रभु तुज गुण भासन युक्त,
　　सेवे हो प्रभु, सेवे तसु भवभय नथीजी. ५
नामे हो प्रभु, नामे अद्भुत रंग,
　　ठवणा हो, प्रभु-ठवणा दीठे उल्लसेजी;
गुणआस्वाद हो प्रभु, गुणआस्वाद अभंग,
　　तन्मय हो प्रभु, तन्मयताअे जे धसेजी. ६
गुण अनंत हो प्रभु, गुण अनंतनो वृंद,
　　नाथ हो प्रभु, नाथ अनंतने आदरेजी;
देवचंद्र हो प्रभु, देवचंद्रने आनंद,
　　परम हो प्रभु, परम महोदय ते वरेजी. ७

---

१. मूर्छा. २. सर्प-विषहरण मंत्र.

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन

साहेलडियां-अे देशी.

श्री अनंत जिनशुं करो, साहेलडियां,
चोळ मजीठनो रंग रे ! गुणवेलडियां;
साचो रंग ते धर्मनो, साहेलडियां,
बीजो रंग पतंग रे ! गुणवेलडियां. १

धर्म रंग जीरण नहीं सा० देह ते जीरण थाय रे; गु०
सोनुं ते विणसे नहीं सा० घाट-घडामण जाय रे गु० २
तांबुं जे रसवेधियुं सा० ते होय जाचुं[1] हेम रे; गु०
फरी त्रांबु ते नवि हुअे सा० अेवो जगगुरु प्रेम रे. गु० ३
उत्तम गुण-अनुरागथी सा० लहीअे उत्तम ठाम रे, गु०
उत्तम निज महिमा वधे सा० दीपे उत्तम धाम रे गु० ४
उदक बिंदु सायर भल्यो सा० जिम होय अक्षय अभंग रे; गु०
वाचक यश कहे प्रभु-गुणे सा० तिम मुज प्रेम-प्रसंग रे गु० ५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

वीर सुणो मोरी विनति-अे देशी.

अनंत जिणंदशुं विनति, में तो कीधी हो त्रिकरणथी आज;
मिलतां निज साहेब भणी, कुण आणे हो मूरख मन लाज. अ० १
मुख पंकज मन मधुकरु, रह्यो लुब्धो हो गुणज्ञाने लीन;
हरिहर आवळ फूल ज्यों, ते देखयां हो केम चित्त होवे प्रीण?[2] अ० २
भव फरियो दरियो तर्यो, पण कोइ हो अनुसरियो न द्वीप;
हवे मन-प्रवहण माहरुं, तुम पद भेटे हो में राख्युं छीप. अ० ३
अंतरजामी मिले थके, फळे माहरो हो सही करीने भाग्य;
हवे वाही[3] जावा तणो, नथी प्रभुजी हो कोइ इहां लाग. अ० ४

---

१ खरेखरुं, साचुं २ प्रीतिवाळुं. ३ ठगी जवा.

पल्लव ग्रही दृढ लेइशुं, नहि मेळो[1] हो ज्यारे तमे मीट;
आतम अवरेजो थइ, कीम उवेटे हो करारी छीट. अ० ५

नायक निज निवाजीअे, हवे लाजीअे हो करतां रसलूंट;
अध्यातम पद आपवा, कंइ नहि पडे हो खजाने खूट अ० ६

जिम तुमे तर्या तिम तारजो, शुं वेसे हो तुमने कांई दाम?
नहीं तारो तो मुजने, किम तुमचुं[2] हो तारक कहेशो नाम. अ० ७

हुं तो निज रूपस्थथी, रहुं होई हो अहर्निश अनुकूळ;
चरण तजी जइअे कीहां? छे माहरी हो वातलडीनो मूल. अ० ८

अष्टापद पद किम करे, अन्य तीरथ हो जाशे जिम हेड;
मोहन कहे कवि रूपनो, विना उपशम हो नहि मूकुं केड. अ० ९

२

आदि पुरुष अे आदिज अे–देशी

अनंत जिणंद अवधारीअे. सेवकनी अरदास जिनजी;
अनंत अनंत गुण तुम तणा, सांभरे सासोसास. जि० अ० १
सुरमणि सम तुम सेवना, पामीअे पुण्य पडूर; जि०
किम प्रमादतणे वशे, मूकुं अधखीण दूर. जि० अ० २
भक्तिजुक्ति मनमें वसो मनरंजन महाराज; जि०
सेवकनी तुमने अछे, वांह्य ग्रह्यानी लाज. जि० अ० ३
शुं मीठा धीठा दीअे, तेहनो नहीं हुं दास; जि०
साथे सेवक संभवी, कीजे ज्ञानप्रकाश. जि० अ० ४
जाणने शुं कहेवुं वणुं, अेक वचन मेळाप; जि०
मोहन कहे कवि रूपनो, भक्ति मधुर जिम द्राख जि० अ० ५

---

१ मेळवो. २ तमारुं.

१५. श्री धर्मनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग गोडी सारंग, देशी रसियानी.

धर्म जिनेसर गाउं रंगशुं, भंग म पडशो हो प्रीत; जिनेसर.
बीजो मन मंदिर आणुं नहीं, अे अम कुलवट रीत. जि० ध० १
धरम धरम करतो जग सहु फिरे, धरम न जाणे हो मर्म; जि०
धरम जिनेसर चरण ग्रह्या पछी, कोइ न बांधे हो कर्म. जि० ध० २
प्रवचन अंजन जो सद्गुरु करे, देखे परम निधान; जि०
हृदय नयण निहाळे जगधणी, महिमा मेरु समान. जि० ध० ३
दोडत दोडत दोडत दोडियो, जेती मननी रे दोड; जि०
प्रेम प्रतीत विचारो ढूंकडी, गुरुगम लेजो रे जोड. जि० ध० ४
अेकपखा केम प्रीति वरे पडे, उभय मिल्या हुअे संधि. जि०
हुं रागी हुं मोहे फंदियो, तुं निरागी निरबंध. जि० ध० ५
परम निधान प्रगट मुख आगळे, जगत उल्लंघी हो जाय; जि०
ज्योति विना जुओ जगदीशनी, अंधोअंध पलाय. जि० ध० ६
निर्मल गुण मणि रोहण भूधरा, मुनिजन मानस हंस; जि०
धन्य ते नगरी धन्य वेला घडी, मातपिता कुल वंश. जि० ध० ७
मन मधुकर वर करजोडी कहे, पदकज[1] निकट निवास; जि०
घननामी आनंदघन सांभळो, अे सेवक अरदास. जि० ध० ८

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

धर्म जगनाथनो धर्म शुचि गाइअे,
आपणो आतमा तेहवो भावियें;
जाति जसु अेकता तेह पलटे नहीं,
शुद्ध गुण पज्जवा वस्तु सत्तामयी. १

---

१. चरणकमळ.

नित्य निरवयव वळी अेक अक्रियपणे
सर्व गत तेह सामान्य भावे भणे;
तेहथी इतर सावयव विशेषता,
व्यक्ति भेदे पडे जेहनी भेदता. २

अेकता पिंडने नित्य अविनाशता,
अस्ति निज ऋद्धिथी कार्यगत भेदता;
भाव श्रुत गम्य अभिलाप्य अनंतता;
भव्य पर्यायनी जे परावर्तिता. ३

क्षेत्र गुण भाव अविभाग अनेकता,
नाश उत्पाद अनित्य परनास्तिता;
क्षेत्र व्याप्यत्व अभेद अवक्तव्यता
वस्तु ते रूपथी नियत अभव्यता ४

धर्म प्रागभावता सकळ गुण शुद्धता,
भोग्यता कर्तृता रमण परिणामता;
शुद्ध स्वप्रदेशता तत्त्व चैतन्यता,
व्याप्य-व्यापक तथा ग्राह्य ग्राहक गता. ५

संग परिहारथी स्वामी निज पद लह्युं
शुद्ध आत्मिक आनंद पद संग्रह्युं;
जहवि[1] परभावथी हुं भवोदधि वस्यो,
परतणो संग संसारताअे ग्रस्यो. ६

तहवि[2] सत्तागुणे जीव अे निर्मलो,
अन्य संश्लेष जिम स्फटिक नवि शामलो;
जे परोपाधिथी दुष्ट परिणति ग्रही,
भाव तादात्म्यमां माहरुं ते नहीं. ७

---

१ यद्यपि, २ तथापि

हांरे प्रभु, लागी मुजने ताहरी माया जोर जो,
अळगा रे रहेवाथी होय ओसांगलो रे लो;
हांरे कुण जाणे अंतरगतिनी विण महाराज जो,
हेजे रे हसी बोलो छंडी आमळो रे लो. ५

हांरे तारे मुखने मटके अटक्युं मारुं मन जो,
आंखलडी अणियाळी कामणगारडी रे लो;
हांरे मारां नयणां लंपट जोवे खिणखिण तुज जो,
राते रे प्रभुरूपे न रहे वारिया रे लो. ६

हांरे कवि रूपविबुधनो मोहन करे अरदास जो,
गिरुआथी मन आणी ऊलट अति घणो रे लो. ७

१६. श्री शांतिनाथ स्वामी

राग मल्हार. चतुर चोमासुं पडिक्कमी–अे देशी

शांति जिन, अेक मुज विनति, सुणो त्रिभुवनराय रे;
शांतिस्वरूप किम जाणीअे, कहो मने किम परखाय रे. शां० १

धन्य तुं आतम जेहने, अेहवो प्रश्न अवकाश रे;
धीरज मन धरी सांभळो, कहुं शांति प्रतिभास रे. शां० २

भाव अविशुद्ध सुविशुद्ध जे, कह्या जिनवर देव रे;
ते तेम अवितथ्थ सद्दहे, प्रथम अे शांतिपद सेव रे. शां० ३

आगमधर गुरु समकिती, क्रिया संवर सार रे,
संप्रदायी अवंचक सदा, शुचि अनुभव आधार रे. शां० ४

शुद्ध आलंबन आदरे, तजी अवर जंजाल रे;
तामसी वृत्ति सवि परिहरी, भजे सात्त्विकी शाल रे. शां० ५

फल विसंवाद जेहमां नहीं, शब्द ते अर्थ संबंधी रे;
सकल नयवाद व्यापी रह्यो, ते शिवसाधन संधि रे. शां० ६
विधि प्रतिषेध करी आतमा, पदारथ अविरोध रे;
ग्रहण विधि महाजने परिग्रह्यो, ईस्यो आगमे बोध रे. शां० ७
दुष्टजन-संगति परिहरी, भजे सुगुरु संतान रे,
जोग सामर्थ्य चित्त भाव जे, धरे मुक्ति निदान रे. शां० ८
मान अपमान चित्त सम गणे, सम गणे कनक पाषाण रे;
वंदक निंदक सम गणे, ईश्यो होये तुं जाण रे. शां० ९
सर्व जगजंतुने सम गणे, सम गणे तृण मणि भाव रे;
मुक्ति, संसार बेहु सम गणे, मुणे भवजलनिधि नाव रे. शां० १
आपणो आतमभाव जे, अेक चेतन आधार रे;
अवर सवि साथ संयोगथी, अेह निज परिकर सार रे. शां० १
प्रभुमुखथी अेम सांभळी, कहे आतमराम रे;
ताहरे दरिशने निस्तर्यो, मुज सिद्धां सवि काम रे. शां० १
अहो! अहो! हुं मुजने कहुं, नमो मुज नमो मुज रे;
अमित फल दान दातारनी, जेहनी भेट थई तुज रे. शां० १
शांतिस्वरूप संक्षेपथी कह्यो निज पररूप रे;
आगममांहे विस्तर घणो, कह्यो शांति जिनभूप रे. शां० १
शांति स्वरूप अेम भावशे, धरी शुद्ध प्रणिधान रे;
आनंदघन पद पामशे, ते लहेशे बहुमान रे शां० १

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

माला किहा छे रे-देशी

जगत दिवाकर जगत कृपानिधि,
वाहला मारा समवसरणमां बेठा रे;
चउमुख चउविह धर्म प्रकाशे, ते में नयणे दीठा रे.

भविक जन हरखो रे, निरखी शांति जिणंद भ०
उपशम रसनो कंद, नहि इण सरिखोरे-अे आंकणी. १

प्रातिहारज अतिशय शोभा वा० ते तो कहिय न जावे रे;
घूक[1] वालकथी रविकरभरनुं, वर्णन केणीपरे थावे रे. भ० २

वाणी गुण पांत्रीस अनोपम वा० अविसंवाद सरूपे रे;
भवदुःखवारण शिवसुखकारण, शुद्धो धर्म प्ररूपे रे भ० ३

दक्षिण पश्चिम उत्तर दिशि मुख वा०ठवणा जिन उपगारी रे;
तसु आलंबन लहिय अनेक, तिहां थया समकितधारी रे. भ० ४

षट् नय कारजरूपे ठवणा वा० सग नय कारण ठाणी रे;
निमित्त समान थापना जिनजी, अे आगमनी वाणी रे भ० ५

साधक तिन निक्षेपा मुख्य वा० जे विण भाव न लहिये रे;
उपकारी दुग भाष्ये भाख्या, भाव वंदकनो ग्रहीअे रे भ० ६

ठवणा समवसरणे जिन सेंती वा० जो अभेदता वाधी रे;
अे आतमना स्व-स्वभाव गुण, व्यक्त योग्यता साधी रे. भ० ७

भलु थयुं में प्रभुगुण गाया वा० रसनानो फळ लीधो रे;
देवचंद्र कहे मारा मननो, सकल मनोरथ सीधो रे. भ० ८

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

रह्यो आवास दुवार-अे देशी

धन्य दिन वेला, धन्य घडी तेह,
अचिरारो नंदन जिन जदि भेटशुंजी;
लहिशुं रे सुख देखी मुखचंद,
विरह व्यथानां दुःख सवि मेटशुंजी. १

---

1. घुवड.

जाण्यो रे जेणे तुज गुण लेश,
बीजा रे रस तेहने मन नवि गमेजी;
चाख्यो रे जेणे अमी लवलेश,
बाकसबुकस तस न रुचे किमेजी. २
तुज समकितरसस्वादनो जाण,
पाप कुभक्ते बहु दिन सेवियुंजी;
सेवे जो कर्मने योगे तोहि,
वांछे ते समकित अमृत धुरि लिख्युंजी. ३
ताहरुं ध्यान ते समकितरूप,
तेहीज ज्ञान ने चारित्र तेज छे जी;
तेहथी रे जाये सघलां पाप,
ध्याता रे ध्येयस्वरूप होये पछेजी. ४
देखी रे अद्भुत ताहरुं रूप,
अचरिज भविक अरूपी पद वरेजी!
ताहरी गति तुं जाणे हो देव,
स्मरण भजन ते वाचक यश करेजी. ५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

सोळमा श्री जिनराज ओळग सुणो अमतणी ललना,
भगतथी अेवडी केम करो छो भोळामणी ललना;
चरणे विळग्यो जेह आवीने थइ खरो ल०
निपट तेहथी कोण राखे रस आंतरो ल० १
में तुज कारण स्वामी उवेख्या सुर घणा ल०
माहरी दिशाथी में तो न राखी कांइ मणा ल०
तो तुमे मुजथी केम अपूठा[1] थइ रहो ल०
चूक होवे जो कोइ सुखे मुखथी कहो ल० २

---

1 विमुख.

तुजथी अवर न कोय अधिक जगति तळे ल०
जेहथी चित्तनी वृत्ति अेकांगी जइ मळे ल०
दिजे दरिशन वार घणी न लगावीअे ल०
वातलडी अति मीठी ते किम विरमावीअे? ल० ३

तुं जो जळ तो हुं कमळ, कमळ तो हुं वासना ल०
वासना तो हुं भ्रमर न मूकुं आसना ल०
तुं छोडे पण हुं केम छोडुं? तुज भणी ल०
लोकोत्तर कोइ प्रीत आवी तुजथी बनी ल० ४

धुरथी ज्ञाने समकित दइने भोळव्यो ल०
हवे केम जाउं खोटे दिलासे ओळव्यो? ल०
जाणो खासो दास विमासो छो किशुं? ल०

अमे पण खोजमत मांही के खोटा किम थशुं? ल० ५
बीजी खोटी वाते अमे राचुं नहीं ल०
में तुज आगळ माहरी मनवाळी कही ल०
पूरण राखो प्रेम विमासो शुं तमे? ल०
अवसर लहो अेकांत विनवीअे छीअे अमे ल० ६

अंतरजामी स्वामी अचिरानंदना ल०
शांतिकरण श्री शांतिजी मानजो वंदना ल०
तुज स्तवनाथी तनमन आनंद उपन्यो ल०
कहे मोहन मन रंग सुपंडित रूपनो ल० ७

२

राग सारंग

शांतिजिणंद महाराज, जगतगुरु, शांतिजिणंद महाराज;
अचिरानंदन भविमनरंजन, गुणनिधि गरीबनिवाज. ज० १

गर्भ थकी जिणे ईति[1] निवारी, हरखित सुरनर कोडी;
जन्म थये चोसठ इंद्रादिक, पद प्रणमे करजोडी. ज० २

मृगलंछन भविक तुष[2] गंजन, कंचनवान शरीर;
पंचम नाणी पंचम चक्री, सोळसमो जिन धीर. ज० ३

रत्नजडित भूषण अति सुंदर, आंगी अंग उदार;
अति उछरंग भगति नौतन गति, उपशम रस दातार. ज० ४
करुणानिधि भगवान कृपा कर, अनुभव उदित आवास;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, दीजे ज्ञानविलास. ज० ५

---

१७. श्री कुंथुनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग गुर्जरी

अंबर दे हो मोरारी, हमारा–अे देशी

कुंथुजिन मनडुं किमही न बाजे, हो कुं०
जिमजिम जतन करीने राखुं, तिमतिम अळगुं भाजे हो. कुं० १
रजनी वासर वसती उज्जड, गयण पायाले जाय;
साप खाय ने मुखडुं थोथुं[3] अेह, उखाणो न्याय हो. कुं० २
मुक्तितणा अभिलाषी तपिया, ज्ञान ने ध्यान अभ्यासे;
वयरिडुं कांइ अेहवुं चिंते, नाखे अवळे पासे हो कुं० ३
आगम आगमधरने हाथे, नावे किणविध आंकुं;
किहां कणे जो हठ करी हटकु तो, व्याळतणी परे वांकु हो. कुं० ४
जो ठग कहुं तो ठगतुं न देखुं, शाहुकार पण नांही;
सर्व मांही ने सहुथी अळगुं, अे अचरिज मन मांही हो. कुं० ५

---

१ सात प्रकारनी ईति–उपद्रव. २ राग. ३ खाली.

जे जे कहुं ते कान न धारे, आप मते रहे कालो;
सुरनर पंडितजन समजावे, समजे न माहरो सालो[1] हो. कु० ६

मैं जाण्युं अे लिंग नपुंसक, सकल मरदने ठेले;
बीजी वाते समर्थ छे नर, अेहने कोई न जेले हो. कु० ७

मन साध्युं तेणे सघळुं साध्युं, अेह वात नहि खोटी;
अेम कहे साध्युं ते नवि मानुं, अे कही वात छे मोटी हो, कु० ८

मनडुं दुराराध्य तें वश आण्युं, आगमथी मति आणुं;
आनंदघन प्रभु माहरुं आणो, तो साचुं करी जाणुं हो. कु० ९

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

चरम जिनेसरु—अे देशी

समवसरण बेसी करी रे, बारह परिषद्मांहे;
वस्तुस्वरूप प्रकाशता रे, करुणाकर जगनाहो रे, कुंथुजिनेसरु. १

निर्मल तुज मुख वाणी रे, जे श्रवणे सुणे;
तेहिज गुणमणि खाणी रे कु०

गुण पर्यांय अनंततारे, वळी स्वभाव अगाह;
नय गम भंग निक्षेपना रे, हेयादेय प्रवाहो रे. कु० २

कुंथुनाथ प्रभु देशनारे, साधन साधक सिद्धि;
गौण मुख्यता वचनमांरे, ज्ञान ते सकल समृद्धि रे. कु० ३

वस्तु अनंत स्वभाव छे रे, अनंत कथक तसु नाम;
ग्राहक अवसर बोधथी रे, कहेवे अर्पित कामो रे. कु० ४

---

१ कुमति स्त्रीनो भाइ.

शेष अनर्पित धर्मने रे, सापेक्ष श्रद्धाबोध;
उभय रहित भासन हुवे रे, प्रगटे केवल बोध रे. कुं० ५
छति परिणति गुणवर्तना रे, भासन भोग आनंद;
समकाळे प्रभु ताहरे रे, रम्य रमण गुण वृंदो रे. कुं० ६
निज भावे सी अस्तितता रे, परनास्तितत्व स्वभाव;
अस्तिपणे ते नास्तितता रे, सीय[1] ते उभय स्वभावो रे. कुं० ७
अस्तिभाव जे आपणो रे, रुचि वैराग्य समेत;
प्रभु सन्मुख वंदन करी रे, मागीश आतम हेत रे. कुं० ८
अस्ति स्वभाव रुचि थई रे, ध्यातो अस्ति स्वभाव;
देवचंद्र पद ते लहे रे, परमानंद जमावो रे. कुं० ९

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

साहेलां हे-ए देशी

साहेलां हे कुंथु जिनेश्वर देव, रत्नदीपक अति दीपतो हो लाल;
सा० मुज मन मंदिर मांही, आवे जो अखिल जीपतो हो लाल. १
सा० मिटे तो मोहअंधार, अनुभवतेजे जळहळे हो लाल;
सा० धूमकषाय न रेख, चरण चित्रामण नवि चले हो लाल. २
सा० पात्र करे नहि हेठ, सूरज तेजे नवि छिपे हो लाल;
सा० सर्व तेजनुं तेज पहेलांथी वाधे पछे हो लाल. ३
सा० जेह न मरुतने गम्य चंचलता जे नवि लहे हो लाल;
सा० जेह सदा छे रम्य, पुष्ट गुणे नवि कृश रहे हो लाल. ४
सा० पुद्गल तेल न खेप;[2] जेह न शुद्ध दशा[3] दहे हो लाल;
सा० श्री नयविजय सुशिष्य; वाचक यश इणिपेरे कहे हो लाल. ५

---

१ कथंचित् २ क्षेपन करवापणुं ३ दीवेट, अवस्था.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

चंदनकी कटकी भरी–अे देशी

कुंथु जिणंद करुणा करो; जाणी पोतानो दास; साहिबा मोरा;
शुं जाणी अलगा रह्या? जाण्युं के आवशे पास. सा० १
अजब रंगीला प्यारा, अकळ अलक्ष्मी न्यारा;
परम ससनेही माहरी विनति. अे आंकणी.
अंतरजामी वालहा, जोवो मीट मिलाय; सा०
खिण म हसो खिणमां हसो; इम प्रीतनिवाहो किम थाय? सा० अ० २
रूपी ह्वो तो पालव ग्रहुं, अरूपीने शुं कहेवाय; सा०
कान मांडया विना वारता, कहोनेजी केम बकाय? सा० अ० ३
देव घणा दुनियामांय छे, पण दीलमेळो नवि थाय; सा०
जिण गामे जावुं नहीं, ते वाट कहो शुं पुछाय? सा० अ० ४
मुज मन अंतर्मुहूर्तनो, में ग्रह्यो चपलता दाव; सा०
प्रीति समे तो जुओ कहो, अेतो स्वामी स्वभाव. सा० अ० ५
अंतर श्यो मळिया पछे नवी मळीअे प्रभु मूल; सा०
कुमया किम करवी घटे, जे थयो निज अनुकूळ? सा० अ० ६
जागी हवे अनुभवदशा, लागी प्रभुशुं प्रीत; सा०
रूपविजय कविरायनो, कहे मोहन रसरीत. सा० अ० ७

२

जादवपति तोरण आव्या–अे देशी

मुज अरज सुणो मुज प्यारा,
साची भक्तिथी किम रहो न्यारारे;
सनेही मोरा, कुंथु जिणंद करुणा करो. १

हुं तो तुम दरिसणनो अरथी,
घटे किम 'करि शके करथी' रे ? स०
थई गिरुआ अेम जे विमासो,
ते तो मुजने होय छे तमासो रे. स० कु० २
ललचावीने जे कीजे.
किम दासने चित्त पतीजे ? रे स०
पंद मोटे कहावो मोटा;
जिण तिण वाते न हुवे खोटा रे. स० कु० ३
मुज भाव महेलमें आवो,
उपशम रस प्यालो चखावो रे; स०
सेवकनो तो मन रीझे,
सेवक कारज सीझे रे. स० कु० ४
मनमेळु थई मन न मेळो,
ग्रहे आवि मत अवहेलो रे; स०
तुमे जाणो छो अे करुं लीला,
पण अरथी सद्दहे के रीसाला रे. स० कु० ५
प्रभुचरण सरोरुह रहेवुं,
फळ प्राप्ति लहेणुं देवुं रे; स०
कवि रूप विबुध जयकारी,
कहे मोहन जिन बलिहारी रे. स० कु० ६

---

१८. श्री अरनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग परजः ऋषभनो वंश रयणायरु–अे देशी

धरम परम अरनाथनो, केम जाणुं भगवंतरे रे;
स्वपर समय समजावीअे, महिमावंत महंत रे. धरम० १

शुद्धातम अनुभव सदा, स्वसमय अेह विलास रे;
परवडी छांयडी जेह पडे, ते परसमय निवास रे. ध० २

तारा नक्षत्र ग्रह चंदनी, ज्योति दिनेश मझार रे;
दर्शन ज्ञान चरण थकी, शक्ति निजातम धार रे. ध० ३

भारी पीळो चीकणो, कनक अनेक तरंग रे;
पर्यायदृष्टि न दीजीअे, अेकज कनक अभंग रे. ध० ४

दरशन ज्ञान चरण थकी, अलख सरूप अनेक रे;
निर्विकल्प रस पीजीअे, शुद्ध निरंजन अेक रे. ध० ५

परमारथ पंथ जे कहे, ते रंजे अेक तंत रे;
व्यवहारे लख जे रहे, तेहना भेद अनंत रे. ध० ६

व्यवहारे लखे दोहिला कांई न आवे हाथ रे;
शुद्ध नय थापना सेवतां, नवि रहे दुविधा साथ रे. ध० ७

अेकपखी लखी प्रीतिनी, तुम साथे जगनाथ रे;
कृपा करीने राखजो, चरण तळे ग्रही हाथ रे. ध० ८

चक्री धरम तीरथतणो, तीरथ फल ततसार[1] रे;
तीरथ सेवे ते लहे, आनंदघन निरधार रे. ध० ९

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

रामचंद्रके वागमें चंपो मोरी रह्यो रे—देशी

प्रणमो श्रीअरनाथ, शिवपुर साथ खरो री;
त्रिभुवन जन आधार, भवनिस्तार करो री. १

---

१. तत्त्वसार.

कर्ता कारण योग, कारज सिद्धि लहे री;
कारण चार अनुप, कार्यार्थी तेह ग्रहे री. २

जे कारण ते कार्य, थाये पूर्ण पदे री;
उपादान ते हेतु, माटी घट ते वदे री. ३

उपादानथी भिन्न जे विण कार्य न थाये;
न हुवे कारजरूप, कर्ताने व्यवसाये. ४

कारण तेह निमित्त, चक्रादिक घट भावे;
कार्य तथा समवाय, कारण नियतने दावे. ५

वस्तु अभेद स्वरूप, कार्यपणुं न ग्रहे री;
ते असाधारण हेतु कुंभे स्थास लहे री. ६

जेहनो नवि व्यापार, भिन्न नियत बहु भावी;
भूमि काल आकाश, घट कारण सद्‌भावी. ७

अेह अपेक्षा हेतु, आगम मांही कह्यो री;
कारण पद उत्पन्न, कार्य थये न लह्यो री. ८

कर्ता आतम द्रव्य, कारज सिद्धिपणो री;
निज सत्तागत धर्म, ते उपादान गणो री. ९

योग समाधि विधान, असाधारण तेह वदे री;
विधि आचरणा भक्ति, जेणे निज कार्य सधे री. १०

नरगति पढम संघयण, तेह अपेक्षा जाणो;
निमित्ताश्रित उपादान, तेहने लेखे आणो. ११

निमित्त हेतु जिनराज, समता अमृत खाणी;
प्रभु अवलंबन सिद्धि, नियमा अेह वखाणी. १२

पुष्ट हेतु अरनाथ, तेहने गुणथी हळीअे;
रीझ भक्ति बहुमान, भोग ध्यानथी मलीअे. १३

मोटाने उत्संग, बेठाने शी चिंता;
तिम प्रभु चरण पसाय, सेवक थया निचिंता. १४

अरप्रभु प्रभुता रंग अंतर शक्ति विकासी;
देवचंद्रने आनंद, अक्षय भोग विलासी. १५

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

आसणरा योगी–अे देशी

श्री अरजिन भवजलनो तारु, मुज मन लागे वारुरे;
मन मोहन स्वामी.
बांह्य ग्रही अे भवजल तारे*, आणे शिवपुर आरे रे मन० १

तप जप मोह महा तोफाने, नाव न चाले माने रे; मन०
पण नवि भय मुज हाथोहाथे, तारे ते छे साथे रे. मन० २

भगतने स्वर्ग स्वर्गथी अधिकुं, ज्ञानीने फल देइ रे; मन०
काया कष्ट विना फल लहीअे, मनमां ध्यान धरेई रे. मन० ३

जे उपाय बहुविधनी रचना, योगमाया ते जाणो रे; मन०
शुद्ध द्रव्य गुण पर्याय ध्याने, शिव दिये प्रभु सपराणो रे मन० ४

प्रभुपद वळग्या ते रह्या ताजा, अळगा अंग न साजा रे; मन०
वाचक यश कहे अवर न ध्याउं, अे प्रभुना गुण गाउं रे. मन० ५

---

* पाठांतरः भविजन तारे.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

भटीआणीनी देशी.

अरनाथ अविनाशी, हो सुविलासी, खासी चाकरी,
कांई चाहुं अमे निशदिश;
अंतराय ने रागे हो अनुरागे किणपरे कीजीअे,
कांई शुभ भावे सुजगीश. अ० १

सिद्ध स्वरूपी स्वामी हो गुणधामी अलख अगोचरु,
कांई दीठा विण दिदार;
किम प्रतीजे कीजे हो किम लीजे फळ सेवा तणुं,
कांई दीसे न प्राण-आधार. अ० २

ज्ञान विना कुण पेखे हो संखेपे सूत्रे सांभळयो,
कांई अथवा प्रतिमा रूप;
सामे जो संपेखुं हो प्रभु देखुं दिलभर लोयणे,
कांइ तो मनमें हूवे चूप. अ० ३

जगनायक जिनराया हो मन भाव्या मुज आवी मळ्या,
कांई महेर करी महाराज;
सेवक तो ससनेही हो निःसनेही प्रभु किम कीजीअे,
कांइ इस कोइ वहीअेरे लाज अ० ४

भक्ति गुणे भरमावी हो समजावी प्रभुजीने भोळवी,
कांई देखुं हृदय मोझार;
तो कहेजो साबाशी हो प्रभु भासी जाणी सेवता,
कांई अे अमचो अेक तार अ० ५

पाणी खीरने मेळे हो कीण खेले अकांत होई रहुं,
काई नहीं रे मिलननो जोग;
जो प्रभु देखुं नयणे हो कही वयणे समजावुं सही,
कांई ते न मिले संजोग. अ० ६
मनमेळु किम रीझे हो शुं कीजे अंतराय अेवडो,
कांई निपट नहेजा नाथ;
सातराजने अंते हो कोण पाखे ते आवीने मळुं,
कांई विकट तुमारोजी पाथ. अ० ७
ओळग अे अनुभवनी हो मुज मननी वार्ता सांभळी,
कांई कीजे आजे निवाज;
रूप विबुधनो मोहन हो मनमोहन सांभळ विनति,
कांई दीजे शिवपुर राज. अ० ८

---

१९. श्री मल्लिनाथस्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग—काफी

सेवक किम अवगणिये हो मल्लिजिन, अेह अब शोभा सारी;
अवर जेहने आदर अति दीअे, तेहने मूल निवारी. हो म० १
ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं, ते लीधुं तमे ताणी;
जुओ अज्ञान दशा रीसावी जातां काण न आणी. हो म० २
निद्रा सुपन जागर उजागरता [1]तुरिय अवस्था आवी;
निद्रा सुपन दशा रीसाणी, जाणी न नाथ मनावी. हो म० ३
समकित साथे सगाई कीधी, सपरिवारशुं गाढी;
मिथ्यामति अपराधण जाणी, घरथी बाहिर वाढी. हो म० ४

---

1. चोथी.

हास्य अरति रति शोक दूगंछा, भय पामर करसाली;
[1]नोकषाय श्रेणी गज चढतां, श्वान तणी गति झाली. हो म० ५
राग द्वेष अविरतिनी परिणति, अे चरण मोहना योद्धा;
वीतराग परिणति परिणमतां, ऊठी नाठा बोद्धा. हो म० ६
वेदोदय कामा परिणामा, काम्य करम सहु त्यागी;
निष्कामी करुणारस सागर, अनंत चतुष्क पद पागी. हो म० ७
दान विघन वारी सहु जनने, अभय दान पद दाता;
लाभ विघन जग विघन निवारक, परम लाभ रस माता. हो म० ८
वीर्य विघन पंडित वीर्यें हणी, पूरण पदवी योगी;
भोगोपभोग दोय विघन निवारी, पूरण भोग सुभोगी. हो म० ९
अे अढार दूषण वर्जित तनु, मुनिजन वृंदे गाया;
अविरति रूपक दोष निरुपण निर्दूषण मन भाया. हो म० १०
ईण विध परखी मन विशरामी जिनवरगुण जे गावे;
दीनबंधुनी महरे नजरथी, आनंदघन पद पावे. हो म० ११

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

देखी कामनी दोय–अे देशी.

मल्लिनाथ जगनाथ चरणयुग ध्याईअे रे, च०
शुद्धातम प्रागूभाव, परम पद पाइअे रे; प०
साधक कारक षट्क, करे गुण साधना रे. क०
तेहिज शुद्ध स्वरूप, थाये निराबाधना रे. था० १
कर्ता आतमद्रव्य, कारज निज सिद्धता रे, का०
उपादान परिणाम, प्रयुक्त ते करणता रे; प्र०
आतम संपद् दान, तेह संप्रदानता रे. ते०
दाता पात्र ने देय, त्रिभाव अभेदता रे. त्रि० २

---

1. कषिनी आली–पंक्ति, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद.

स्वपर विवेचन करण, तेह अपादानथी रे, ते०
सकल पर्याय आधार, संबंध आस्थानथी रे; सं०
बाधक कारक भाव, अनादि निवारवा रे, अ०
साधकना अवलंबी, तेह समारवा रे. ते० ३
शुद्ध पणे पर्याय, प्रवर्त्तन कार्यमें रे, प्र०
कर्त्तादिक परिणाम, ते आतम धर्ममें रे; ते०
चेतन चेतन भाव, करे समवेतमें[1] रे. क०
सादि अनंतो काल, रहे निज खेतमें रे. र० ४
पर कर्तव्य स्वभाव, करे तांलगी[2] करे रे, क०
शुद्धकार्य रुचि भास, थये नवि आदरे रे; थ०
शुद्धातम निज कार्य, रुचिकारक फिरे रे, रु०
तेहिज मूल स्वभाव, ग्रहे निज पद वरे रे. ग्र० ५
कारण कारजरूप अछे कारक दशा रे, अ०
वस्तु प्रगट पर्याय, अेह मनमें वश्या रे; अे०
पण शुद्ध स्वरूप ध्यान, ते चेतनता ग्रहे रे, ते०
तव निज साधक भाव, सकल कारक लहेरे. स० ६
माहरुं पूर्णानंद प्रगट करवा भणी रे, प्र०
पुष्टालंबन रूप, सेव प्रभुजी तणी रे; से०
देवचंद्र जिनचंद्र, भक्ति मनमें धरो रे, भ०
अव्याबाध अनंत, अक्षय पद आदरो रे. अ० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

नाभिरायां के बाग—अे देशी.

तुज मुज रीझनी रीत, अटपट अेह खरीरी;
लटपट नावे काम, खटपट भांज परीरी. १

---

1. समवाय संबंधमां २ त्यां सुधी.

मल्लिनाथ तुज रीझ, जन रीझे न हुअे री;
दोय रीझणनो उपाय, साह्मुं कां न जूअे री. २
दुराराध्य छे लोक, सहुने सम न *शशी री;
अेक दुहवाअे गाढ, जो अेक बोले हसी री ३
लोक लोकोत्तर वात, रीझ छे दोय जुइ री;
तात चक्र धुर[1] पूज्य, चिंता अेह हुइ री. ४
रीझववा अेक सांई[2], लोक ते वात करे री;
श्री नयविजय सुशिष्य, अेहिज चित्त धरे री. ५

श्री मोहनविजयनी कृत स्तवन.

थाहरा मोहला उपर मेह—अे देशी.

सुगुरु सुणी उपदेश ध्यायो दिलमें धरी हो लाल, ध्या०
कीधी भक्ति अनंत चवी चवी चातुरी हो लाल; च०
सेव्यो रे विश्वावीश उलट धरी उलस्यो हो लाल, उ०
दीठो नवी दिदार कां न कीन हीलस्यो हो लाल. कां० १
परमेश्वर शुं प्रीत कहो किम कीजीअे हो लाल, क०
नीमख न मेले मीट दोष कीण दीजीअे हो लाल; दो०
को न करे तकसीर सेवामां साहिबा हो लाल, से०
कीजे न छोकरवाद भगत भरमाववा हो लाल. भ० २
जाण्युं तमारुं जाण पुरुषे न पारखुं हो लाल, पु०
सुगुण निर्गुणनो राह करो शुं सारिखुं हो लाल; क०
दीधे दीलासे दीनदयाळ कहावशो हो लाल; द०
करुणारसभंडार विरुद किम पावशो हो लाल. वि० ३
शुं निपज्या तुमे सिद्ध सेवकने अवगणी हो लाल, से०
माखो अविहड प्रीत जावा द्यो भोळामणी हो लाल, जा०

---

* चन्द्र. १ प्रथम. २ स्वामी—प्रभु.

जो कोई राखे राग निराग न राखीअे हो लाल, नि०
गुण अवगुणनी वात करी प्रभु दाखीअे हो लाल. क० ४
अमचा[1] दोष हजार तिके[2] मत भाळजो हो लाल, ति०
तुमे छो चतुरसुजाण प्रीतम गुण पाळजो हो लाल; प्री०
मल्लिनाथ महाराज म राखो आंतरो हो लाल, म०
द्यो दरिसण दिलधार, मिटे ज्युं आंतरो हो लाल. मि० ५
मन मंदिर महाराज विराजो दिल मळी हो लाल, वि०
चंदातप जिम कमळ हृदय विकसे कळी हो लाल; हृ०
रूप विबुध सुपसाय करो अम रंग रळी हो लाल, क०
कहे मोहन कविराय सकळ आशा फळी हो लाल स० ६

---

२०. श्री मुनिसुव्रत स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग काफी, आघा आम पधारो पूज्य-अे देशी.

मुनिसुव्रत जिनराय, अेक मुज विनति निसुणो,
आ त म त त्त्व कयुं जा ण्युं ज ग त गु रु,
अे ह वि चा र मु ज क हि यो;
आ त म त त्त्व जा ण्या वि ण निर्मल,
चित्त समाधि नवि लहियो. मुनि० १
कोई अबंध आतमतत्त[3] माने, किरिया करतो दीसे;
क्रिया तणुं फल कहो कुण भोगवे, इम पूछ्युं चित्त रीसे. मु० २
जड चेतन अे आतम अेकज, स्थावर जंगम सरीखो;
दुःख सुख शंकर दूषण आवे, चित्त विचारी जो परिखो मु० ३

---

१ अमारा. २ तेमने. ३ आत्मतत्व.

अेक कहे नित्य ज आतम तत्त, आतम दरिसण लीनो;
कृत विनाश अकृतागम दूषण, नवि देखे मतिहीणो. मु० ४
सौगत मति रागी कहे वादी, क्षणिक अे आतम जाणो;
बंध-मोक्ष सुख-दुःख न घटे, अेह विचार मन आणो. मु० ५
भूत चतुष्क वर्जित आतम तत्त, सत्ता अलगी न घटे;
अंध शकट जो नजर न देखे, तो शुं कीजे शकटे. मु० ६
अेम अनेक वादि मत विभ्रम, संकट पडियो न लहे;
चित्त समाधि ते माटे पूछुं, तुम विण तत्त कोइ न कहे. मु० ७
वळतुं जगगुरु इणिपेरे भाखे, पक्षपात सब छंडी;
रागद्वेष मोह पख वर्जित, आतमशुं रढ मंडी. मु० ८
आतम ध्यान करे जो कोउ, सो फिर इणमें नावे;
वागजाळ बीजुं सहु जाणे, अेह तत्त्व चित्त लावे. मु० ९
जिणे विवेक धरी अे पख ग्रहियो, ते तत्तज्ञानी कहिये;
श्री मुनिसुव्रत कृपा करो तो आनंदघन पद लहिये. मु० १०

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

ओलगडी ओलगडी सुहेली हो श्री श्रेयांसनीरे-अे देशी.

ओगलडी तो कीजे श्री मुनिसुव्रत स्वामीनीरे
जेहथी निज पद सिद्धि;
केवल केवल ज्ञानादिक गुण उल्लसेरे,
लहीअे सहज समृद्धि. ओ० १
उपादान उपादान निज परिणति वस्तुनीरे,
पण कारण निमित्त आधीन;
पुष्ट अपुष्ट दुविध ते उपदिश्यो रे,
ग्राहक विधि आधीन. ओ० २

साध्य साध्य धर्म जे मांही हुवे रे,
ते निमित्त अति पुष्ट;
पुष्प पुष्प मांही तिलवासक वासना रे,
नवि प्रध्वंसक दुष्ट. ओ० ३

दंड दंड निमित्त अपुष्ट घडा तणो रे,
नवि घटता तसुमांही;
साधक साधक प्रध्वंसकता अछे रे,
तिणे नहि नियत प्रवाह. ओ० ४

षट्कारक षट्कारक ते कारण कार्यनां रे,
जे कारण स्वाधीन;
ते कर्ता ते कर्त्ता सहु कारक ते वसु रे,
कर्म ते कारण पीन. ओ० ५

कार्य कार्य संकल्पे कारक दशा रे,
छती सत्ता सद्भाव;
अथवा अथवा तुल्य धर्मने जोयवे रे,
साध्यारोपण दाव. ओ० ५

अतिशय अतिशय कारण कारक करणता रे,
निमित्त अने उपादान;
संप्रदान संप्रदान कारण पद भवनथी रे,
कारण व्यय अपादान. ओ० ७

भवन भवन व्यय विणु कारज नवि हुवे रे,
जिम द्दषदे न घटत्व;
शुद्धाधार शुद्धाधार स्वगुणनुं द्रव्य छे रे,
सत्ताधार सुतत्व. ओ० ८

आतम आतम कर्ता कारज सिद्धतारे,
तसु साधन जिनराज;
प्रभु दीठे प्रभु दीठे कारज रुचि उपजे रे,
प्रगटे आत्म समाज. ओ० ९
वंदन वंदन सेवन नमन वळी पूजना रे,
स्मरण स्तवन वळी ध्यान;
देवचंद्र देवचंद्र कीजे जिनराजनी रे,
प्रगटे पूर्ण निधान. ओ० १०

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

पांडव पांचे वंदता ए देशी.

मुनिसुव्रत जिन वंदतां, अति उल्लसित तन मन थाय रे;
वदन अनोपम निरखतां, मारां भवभवनां दुःख जाय रे;
मारां भवभवनां दुःख जाय, जगत गुरु जागतो सुखकंद रे,
सुखकंद अमंद आणंद, परम गुरु दीपतो. सु० १
निशि दिन सुतां जागतां, हईडाथी न रहे दूर रे;
जब उपगार संभारीअे, तब उपजे आनंद पूर रे,
त० ज० सु० २
प्रभु उपकार गुणे भर्या, मन अवगुण अेक न माय रे;
गुण गुण अनुबंधी हुआ, ते तो अक्षय भाव कहाय रे.
ते० ज० सु० ३
अक्षय पद दिये प्रेम जे, प्रभुनुं ते अनुभव रूप रे;
अक्षर स्वर गोचर नहीं, अे तो अकल अमाप अरूप रे.
अे० ज० सु० ४
अक्षर थोडा गुण घणा, सज्जनना ते न लिखाय रे;
वाचक यश कहे प्रेमथी, पण मनमांहे परखाय रे,
प० ज० सु० ५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

हो पीउ पंखीडा—ए देशी

हो प्रभु मुज प्यारा न्यारा थया केइ रीत जो,
ओळगुआने आलालुंभन ताहरो रे लो;
हो० भक्तवच्छल भगवंत जो,
आइ वसो मन मंदिर साहिब माहरे रे लो. १
हो० खीण न वीसरुं तुज जो,
तंबोळीना पत्र तणी पेरे फेरतो रे लो;
हो० लागी मुजने (ताहरी) माया जोरजो,
दीणयरवासी सुसाहिब तुमने हेरतो रे लो. २
हो० तुं निःसनेही जिनराय जो,
अेकपखी प्रीतलडी किणपरे राखीअे रे लो,
हो० अंतरगतिनी महाराज जो.
वातलडी विण साहिब केहने दाखीअे रे लो. ३
हो० अलख रूप थई आप जो,
जाइ वस्यो शिवमंदिर मांहे तुं जई रे लो;
हो० लाध्यो तुमारो भेद जो,
सूत्र सिद्धांतगतिने साहिब तुमे लही रे लो. ४
हो० जगजीवन जिनराय जो,
मुनिसुव्रत जिन मुजरो मानजो माहरा रे लो;
हो० पय प्रणमी जिनराज जो,
भव भव शरणो साहिव स्वामी ताहरो रे लो. ५
हो० राखशुं हृदय मोझार जो,
आपो शामळीआ द्यो पदवी ताहरी रे लो;
हो० रूपविजयनो शिष्य जो,
मोहनने मन लागी माया ताहरी रे लो. ६

२१. श्री नेमिनाथस्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग आशावरी

धन धन संप्रति साचो राजा–अे देशी

षट् दरिसण जिनअंग भणीजे, न्यासषडंग जो साधे रे;
नमि जिनवरना चरण उपासक, षट् दरिसण आराधे रे. षट्० १
जिन सुर पादप पाय वखाणुं, सांख्य जोग दोय भेदे रे;
आतमसत्ता विवरण करतां, लहो दुग अंग अखेदे रे. षट्० २
भेद अभेद सौगत मीमांसक, जिनवर दोय कर भारी रे;
लोकालोक अवलंबन भजीअे, गुरुगमथी अवधारी रे. षट्० ३
लोकायतिक कुख जिनवरनी, अंश विचारी जो कीजे रे;
तत्त्व विचार सुधारसधारा, गुरुगम विण केम पीजे रे? षट्० ४
जैन जिनेश्वर वर उत्तम अंग, अंतरंग बहिरंगे रे;
अक्षर न्यास धरा आराधक, आराधे धरी संगे रे षट्० ५
जिनवरमां सघळां दरिसण छे, दर्शने जिनवर भजना रे;
सागरमां सघळी तटिनी सही, तटिनीमां सागर भजना रे. षट्० ६
जिन स्वरूप थई जिन आराधे, ते सही जिनवर होवे रे;
भृंगी इलिकाने चटकावे, ते भृंगी जग जोवे रे. षट्० ७
चूर्णी भाष्य सूत्र निर्युक्ति, वृत्ति परंपर अनुभव रे;
समय पुरुषनां अंग कह्यां अे, जे छेदे ते दुर्भव रे. षट्० ८
मुद्रा बीज धारणा अक्षर, न्यास अरथ विनियोगे रे;
जे ध्यावे ते नवि वंचीजे क्रिया, अवंचक भोगे रे. षट्० ९
श्रुत अनुसार विचारी बोलुं, सुगुरु तथा विधि न मिले रे;
किरिया करी नवि साधी शकीअे, अे विषवाद चित्त सघळे रे. षट्०१०
ते माटे उभा कर जोडी, जिनवर आगल कहीअे रे,
समय चरण सेवा शुद्ध देजो, जेम आनंदघन लहीअे रे. षट्० ११

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

पिछोलारी पाल, उभा दोय राजवी रे–अे देशी

श्री नमि जिनवर सेव, घनाघन उनम्यो रे; घ०
दीठां मिथ्यारोर,[1] भाविक चित्तथी गम्यो[2] रे; भा०
शुचि आचरणा रीति, ते अभ्र वधे वडा रे, ते०
आतम परिणति शुद्ध, ते वीज झबुकडा रे ते० १

वाजे वाय सुवाय, ते पावन भावना रे, ते०
इंद्र धनुष त्रिक योग, ते भक्ति इकमनारे; ते०
निर्मळ प्रभु–स्तवघोष, ध्वनि घनगर्जना रे, ध्व०
तृष्णा ग्रीष्म काळ, तापनी तर्जना रे. ता० २

शुभ लेश्यानी आलि, ते बगपंक्ति बनी रे, ते०
श्रेणी सरोवर हंस, वसे शुचि गुण मुनि रे; व०
चउगति मारग बंध, भविक जन घर रह्या रे. भ०
चेतन समता संग, रंगमें उमह्या रं. र० ३

सम्यग्दृष्टि मोर, तिहां हरखे घणुं रे. ति०
देखी अद्भुत रूप, परम जिनवर तणुं रे; प०
प्रभुगुणनो उपदेश, ते जलधारा वही रे, ते०
धरम रुचि चित्त भूमि, मांहि निश्चल रही रे. मां० ४

चातक श्रवण समूह, करे तव पारणो रे. क०
अनुभव रस आस्वाद, सकल दुःख वारणो रे; स०
अशुभाचार निवारण, तृण अंकुरता रे. तृ०
विरतितणां परिणाम, ते बीजनी पूरतारे, ते० ५

पंच महाव्रत धान्य, तणां कर्षण वध्यां रे. त०
साध्यभाव निज थापी, साधनताअे सध्यां रे; सा०

1. मिथ्यात्वरुपी दुकाळ. 2. गयो.

क्षायिक दरिसण ज्ञान, चरण गुण उपन्या रे, च०
आदिक बहु गुण सस्य,[1] आतम घर नीपन्यारे. आ० ६
प्रभु दरिसण महामेह, तणे परवेशमें रे, त०
परमानंद सुभिक्ष, थया मुज देशमें रे; थ०
देवचंद्र जिनचंद्र, तणो अनुभव करो रे त०
सादि अनंतो काळ, आतमसुख अनुसरो रे, आ० ७

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

श्री नमि जिननी सेवा करतां, अलिय[2] विघन सवि दूर नासेजी;
अष्ट महा सिद्धि नवनिधि लीला, आवे बहु महमूर[3]पासेजी श्री०१
मयमत्ता[4] अंगण गज गाजे, राजे तेजी तुखार[5] ते चंगाजी;
बेटाबेटी बंधव जोडी, लहिये बहु अधिकार रंगाजी. श्री० २
वल्लभ संगम रंग लहीजे, अणवालहा होय दूर सहजेजी;
वांछा तणो विलंब न दूजो, कारज सीझे भूरि सहजेजी. श्री०३
चंद्रकिरण उज्जवल यश उलसे, सूरजतुल्य प्रतापी दीपेजी;
जे प्रभु भक्ति करे नित्य विनये, ते अरियण×बहु प्रतापी झीपेजी श्री०४
मंगलमाला[6] लच्छि विशाला[7] वाला बहुले प्रेम रंगेजी.
श्री नयविजय विबुध पय सेवक, कहे लहीअे सुख प्रेम अंगेजी. श्री०५

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

आसणरा रे योगी-अे देशी

आज नमि जिनराजने कहीअे,
मीठे वचने प्रभु मन लहीअे रे सुखकारी साहेबजी;
प्रभु छो नीपट निःसनेही नगीना,
तो हियडे छुं सेवक आधिना रे. सु० १

---

१ धान्य. २ खोटां. ३ संपत्तिना प्रकार. ४ मदोन्मत्त. ५ घोडा.
× शत्रु. ६ कल्याणनी श्रेणीओ. ७ विशाळ लक्ष्मी.

सुनजर करशो तो वरशो वडाइ,
शुं कहेशे प्रभुने लडाइ रे; सु०
तुमे अमने करशो मोटा,
कुण कहेशे प्रभु तुमे छोटा रे? सु० २
निःशंक थइ शुभ वचन कहेशो;
जग शोभा अधिकी लहेशो रे; सु०
अमे तो रह्या छिये तमने राची,
रखे आप रहो मन खांचीरे. सु० ३
अमे तो कीशुं अंतर नवी राखुं,
जे होवे हृदय कही दाखुं रे; सु०
गुणी जन आगळ गुण कहेवाये,
जे वारे प्रीत प्रमाणे थाये रे. सु० ४
विषधर[1] इशहृदये[2] लपटाणो,
तेहवो अमने मिळयो छे टाणो रे. सु०
निरवहेशो जो प्रीत अमारी,
कळि[3] कीरत थाशे तमारी रे. सु० ५
धुत्ताइ चित्तडे नवि धरशो,
कांइ अवळो विचार न करशो रे; सु०
जिमतिम करी सेवक जाणजो,
अवसर लही शुद्ध लहेजो रे. सु० ६
आ समे कहीअे छीअे तुमने,
प्रभु दीजे दिलासो अमने रे; सु०
मोहनविजय सदा मनरंगे,
चित्त लाग्यो प्रभुने संगे रे. सु० ७

---

१ सर्प. २ शंकरनी छाती उपर. ३ कळिकाळमां.

२२. श्री नेमिनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

राग मारुणी धणरा ढोला–अे देशी

अष्टभवांतर वालही रे, तुं मुज आतमराम, मनरावाला;
मुक्ति स्त्रीशुं आपणे रे, सगपण कोइ न काम. म०
घर आवो, हो! वालम, घर आवो, मारी आशाना विशराम; म०
रथ फेरो, हो! साजन, रथ फेरो, साजन मारा मनोरथ साथ. म०
नारी पखो शो नेहलो रे, साच कहे जगनाथ; म०
ईश्वर अर्धांगे धरी रे, तुं मुज झाले न हाथ. म०
पशुजननी करुणा करी रे, आणी हृदय विचार; म०
माणसनी करुणा नहि रे, अे कुण घर आचार. म०
प्रेम कल्पतरु छेदियो रे, धरियो जोग धतूर; म०
चतुराइरो कुण कहो रे, गुरु मलियो जगसूर. म०
मारुं तो अेमां क्युंही नहि रे, आप विचारो राज; म०
राजसभामां बेसतां रे, किसडी[1] वधसी लाज. म०
प्रेम करे जग जन सहु रे, निर्वाहि ते ओर; म०
प्रीत करीने छोडी दे रे, तेशुं न चाले जोर. म०
जो मनमां अेहवुं हतुं रे, निसपत[2] करत न जाण; म०
निसपत करीने छांडतां रे, माणस हुवे नुकशान. म०
देतां दान संवत्सरी रे, सहु लहे वंछित पोष; म०
सेवक वंछित नवि लहे रे, ते सेवकनो दोष म०
सखी कहे अे शामलो रे, हुं कहुं लक्षण सेत[3]; म०
इण लक्षण साची सखी रे, आप विचारो हेत. म० १

---

१ कोनी लाज वधशे. २ संबंध. ३ श्वेत.

रागीशुं रागी सहु रे, वैरागी स्यो राग; म०
राग विना किम दाखवो रे, मुक्ति सुंदरी माग? म० ११
अेक गुह्य घटतुं नथी रे, सघलोई जाणे लोक; म०
अनेकांतिक भोगवो रे, ब्रह्मचारीगत रोग. म० १२
जिण जोणि[1] तुमने जोउं रे, तिण जोणि जोवो राज; म०
अेकवार मुजने जुओ रे, तो सीझे मुज काज. म० १३
मोहदशा धरी भावना रे, चित्त लहे तत्त्वविचार; म०
वीतरागता आदरी रे, प्राणनाथ निरधार. म० १४
सेवक पण ते आदरे रे, तो रहे सेवक माम[2]; म०
आशय साथे चालीअे रे, अेहीज रुडुं काम. म० १५
त्रिविध योग धरी आदर्यो रे नेमिनाथ भरतार; म०
धारण पोषण तारणो रे, नवरस मुक्ताहार. म० १६
कारणरुपी प्रभु भज्यो रे गण्यो न काज अकाज; म०
कृपा करी मुज दीजीअे रे, आनंदघन पदराज. म० १७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

पद्मप्रभ जिन जई अलगा वश्या-अे देशी

नेमि जिणेसर निज कारज कर्युं, छांडयो सर्व विभावोजी;
आतमशक्ति सकल प्रगट करी, आस्वाद्यो निज भावोजी ने० १

राजुल नारी रे सारी मति धरी अवलंब्या अरिहंतोजी;
उत्तम संगे रे उत्तमता वधे, सधे आनंद अनंतोजी ने० २

धर्म अधर्म आकाश अचेतना, ते विजाति अग्राह्योजी;
पुद्गल ग्रहवे रे कर्म कलंकता, बाधे बाधक बाह्योजी. ने० ३

---

१ दृष्टि. २ लाज.

रागी संगेरे रागदशा वधे, थाये तिणे संसारोजी;
निरागीथी रे रागनुं जोडवुं, लहीअे भवनो पारोजी. ने०
अप्रशस्तता रे टालि प्रशस्तता करतां आश्रव नासेजी;
संवर वाधे रे साधे निर्जरा, आतमभाव प्रकाशेजी. ने०
नेमि प्रभु ध्याने रे अेकत्वता, निज तत्त्वे अेकतानोजी;
शुकल ध्याने रे साधी सुसिद्धता, लहिये मुक्ति निदानोजी. ने०
अगम अरूपी रे अलख अगोचरु, परमातम परमीशोजी;
देवचंद्र जिनवरनी सेवना करतां वाधे जगीशोजी. ने०

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

आटला दिन हु जाणतो रे हां–अे देशी

तोरणथी रथ फेरी गया रे हां,
पशुआं शिर देई दोष मेरे वालमा;
नव भव नेह निवारियो रे हां,
स्यो जोइ आव्या जोष. मे० तो० १
चंद्र कलंकी जेहथी रे हां
राम ने सीता वियोग; मे०
तेह कुरंगने[1] वयणडे[2] रे हां,
पति आवे कुण लोग. मे० तो० २
उतारी हुं चित्तथी रे हां,
मुक्ति धूतारी हेत; मे०
सिद्ध अनंते भोगवी रे हां,
तेहस्युं कवण संकेत. मे० तो० ३

---

१ हरणना. २ वचनथी.

प्रीत करंतां सोहिली रे हां,
निरवहेतां जंजाळ; मे०
जेहवो व्याल[1] खेलाववो रे हां,
जेहवी अगननी झाळ. मे० तो० ४

जो विवाह अवसरे दिओ रे हां,
हाथ उपर नवि हाथ; मे०
दीक्षा अवसर दीजीअे रे हां,
शिर उपर जगनाथ मे० तो ५

इम विलवती राजुल गइ रे हां,
नेमि कने व्रत लीध; मे०
वाचक यश कहे प्रणमिये रे हां,
अे दंपती दोय सिद्ध. मे० तो० ६

श्री मोहनविजयनी कृत स्तवन.

दक्षिण दोहिलो हो राज–अे देशी.

कां रथ वाळो हो राज, सामुं निहाळो हो राज,
प्रीत संभारो रे वाल्हा यदुकुळ सेहरा;
जीवन मीठा हो राज, मत होजो धीठा हो राज,
दीठा अळजे रे वहाला निवहो नेहरा. १

नवभव भज्जा हो राज, तीहां शी लज्जा हो राज?
तजत भज्जा रे कांसे रणका वाजीआ;
शीवादेवी जाया हो राज, मानी ल्यो माया हो राज.
कीमहिक पायारे वहाला मधुकर राजीआ. २

---

[1] सर्प.

सुणी हरणीनो हो राज, वचन कामिनीनो हो राज,
सही तो वीहनो रे वाहलो आघो आवतां;
कुरंग कहाणा हो राज, चूक न टाणा हो राज,
जाणो वहाला रे देखी वर्णविरंगता. ३
विण गुन्हे अटकी हो राज, छांडो मा छटकी हो राज,
कटकी न कीजे हो वाहला कीडी उपरे;
रोष निवारो हो राज, महेले पधारो हो राज,
कांइ विचारो वहाला डावुं जिमणुं. ४
अे शी हांसी हो राज, होय विखासी हो राज,
जुओ विमासी रे अतिशे रोष न कीजीअे;
आ चित्रशाळी हो राज, सेज सुंआळी हो राज,
वात हेताळी रे वहाला महारस पीजीअे. ५
मुक्ते वहिता हो राज, सामान्य वनिता हो राज,
तजी परिणीता रे वहाला कां तुमे आदरो?
तुमने जे भावे हो राज, कुण समजावे हो राज,
किम करी आवे रे ताण्यो कुंजर पाधरो? ६
वचने न भीनो हो राज, नेम नगीनो हो राज,
परम खजानो रे वहाला नाण अनुपनो;
व्रत शिव स्वामी हो राज, राजुल पामी हो राज,
कहे हित कामी रे मोहन रूप अनुपनो. ७

---

२३. श्री पार्श्वनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग सारंग रसीआनी देशी

ध्रुवपद रामी हो स्वामी माहरा, निःकामी गुणराय सुज्ञानी;
निज गुण कामी हो पामी तुं धणी, ध्रुव आरामी हो थाय. सु० ध्रु० १

सर्वव्यापी कहो सर्व जाणंगपणे, परपरिणमन सरूप; सु०
पररूपे करी तत्त्वपणुं नहीं, स्वसत्ता चिद्रूप. सु० ध्रु० २
ज्ञेय अनेके हो ज्ञान अनेकता, जलभाजन रवि जेम; सु०
द्रव्य अेकत्वपणे गुणअेकता, निजपद रमता हो खेम. सु० ध्रु० ३
परक्षेत्रे गत ज्ञेयने जाणवे, परक्षेत्रे थयुं ज्ञान; सु०
अस्तिपणुं निज क्षेत्रे तुमे कह्युं, निर्मलता गुण मान. सु० ध्रु० ४
ज्ञेय विनाशे हो ज्ञान विनश्वरु, काळप्रमाणे रे थाय; सु०
स्वकाळे करी स्वसत्ता सदा, ते पर रीते न जाय सु० ध्रु० ५
परभावे करी परता पामता, स्वसत्ता थिर ठाण; सु०
आत्म चतुष्कमयी परमां नहीं, तो किम सहुनो रे जाण. सु० ध्रु० ६
अगुरुलघु निज गुणने देखतां, द्रव्य सकल देखंत; सु०
साधारण गुणनी साधर्म्यता, दर्पण जलने दृष्टांत. सु० ध्रु० ७
श्री पारसजिन पारस रस समो, पण इहां पारस[1] नांहि, सु०
पूरणरसीओ हो निज गुण परसनो[2] आनंदघन मुज मांहि. सु० ध्रु० ८

२

शांतिजिन एक मुज विनंति–अे देशी.

पासजिन ताहरा रूपनुं, मुज प्रति भास केम होय रे,
तुज मुज सत्ता अेकता, अचल विमल अकल जोय रे. पास० १
मुज प्रवचन पक्षथी, निश्चय भेद न कोय रे;
व्यवहारे लखि देखीअे, भेद प्रतिभेद बहु लोय रे. पास० २
बंधु न मोक्ष नहीं निश्चये, व्यवहारे भज दोय रे;
अखंडित अबाधित सोय कदा, नित अबाधित सोय रे. पास० ३

१ पाषाणरूप पारस नहीं. २ आतमगुणरूप पारसनो.

अन्वय हेतु व्यतिरेकथी, अंतरो तुज मुज रूप रे;
अंतर मेटवा कारणे, आतमस्वरुप अनूप रे. पास० ४
आतमता परमातमता. शुद्ध नय भेद न अेक रे;
अवर आरोपित धर्म छे, तेहना भेद अनेक रे. पास० ५
धरमी धरमथी अेकता, कहे ते मुज रूप अभेद रे;
अेक सत्ता लखि अेकता, कहे ते मूढ मति खेद रे. पास० ६
आतम धर्म अनुसरी, रमे जे आतमराम रे;
आनंदघन पदवी लहे, परमातम तस नाम रे. पास० ७

३

प्रणमुं पद पंकज पार्श्वना, जस वासना अगम अनूप रे;
मोह्यो मन मधुकर जेहथी, पामे निज शुद्ध स्वरूप रे. प्रणमु० १
पंक कलंक शंका नहीं, नहीं खेदादिक दुःख दोपरे;
त्रिविध अवंचक जोगथी लहे अध्यातम सुख पोपरे. प्रणमुं० २
दुरंदशा दूरे टळे, भजे मुदिता मैत्रि भाव रे;
वरते नित्य चित्त मध्यस्थता, करुणामय शुद्ध स्वभाव रे. प्रणमुं० ३
निज स्वभाव स्थिर करी धरे, न करे पुद्गलनी खेंच रे;
साखी हुई वरते सदा, न कदी परभाव प्रपंच रे. प्रणमुं० ४
सहजदशा निश्चय जगे, उत्तम अनुभव रस रंग रे;
राचे नहीं परभावशुं, निजभावशुं रंग अभंग रे. प्रणमुं० ५
निजगुण सव निजमां लखे, न चखे परगुणनी रेख रे;
खीर नीर विवरो करे, अे अनुभव हंसशुं पेख रे. प्रणमुं० ६
निर्विकल्प ध्येय अनुभवे, अनुभव अनुभवनी प्रीत रे;
ओर न कबहुं लखी शके, आनंदघन प्रीत प्रतीत रे. प्रणमुं० ७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

कडखानी देशी

सहज गुण आगरो, स्वामी सुखसागरो,
 ज्ञान वयरागरो* प्रभु सवायो;
शुद्धता, अेकता, तीक्ष्णता भावथी,
 मोहरिपु जीती जय पडह वायो. स० १

वस्तु निज भाव, अविभास निकलंकता,
 परिणति वृत्तिता करी अभेदे;
भाव तादात्म्यता शक्ति उल्लासथी,
 संतति योगने तुं उच्छेदे. स० २

दोष गुण वस्तुनी, लखिय यथार्थता,
 लही उदासीनता अपर भावे;
ध्वंसि तज्जन्यता भाव कर्तापणुं,
 परम प्रभु तुं रम्यो निज स्वभावे. स० ३

शुभ अशुभ भाव, अविभास तहकीकता,
 शुभअशुभ भाव तिहां प्रभु न कीधो;
शुद्ध परिणामता, वीर्य कर्ता थई,
 परम अक्रियता अमृत पीधो. स० ४

शुद्धता प्रभु तणी आतमभावे रमे,
 परम परमात्मता तास थाये;
मिश्र भावे अछे त्रिगुणनी भिन्नता,
 त्रिगुण अेकत्व तुज चरण आये. स० ५

---

* वयरागरो=वज्राकर; ज्ञानरूप वज्र-रत्ननी खाण. खजानो; केवलज्ञान निधान.

उपशम रस भरी, सर्व जन शंकरी,
मूर्ति जिनराजनी आज भेटी;
कारणे कार्यनिष्पत्ति श्रद्धान छे,
तिणे भवभ्रमणनी भीड मेटी. स० ६

नयर खंभायते, पार्श्व प्रभु दर्शने,
विकसते हर्ष उत्साह वाध्यो;
हेतु अेकत्वता, रमण परिणामथी,
सिद्धि साधकपणो आज साध्यो. स० ७

आज कृतपुण्य धन्य दिह माहरो थयो,
आज नर जन्म में सफळ भाव्यो;
देवचंद्र स्वामी त्रेवीशमो वंदीओ,
भक्तिभर चित्त तुज गुण रमाव्यो स० ८

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन

देखी कामनी दोय–अे देशी.

वामानंदन जिनवर, मुनिमांहे वडो रे, के० मु०
जिम सुरमांहि सोहे, सुरपति परवडो रे; के० सु०
जिम गिरिमांहि सुराचल, मृगमांहे केसरी रे, के० मृ०
जिम चंदन तरुमांहि, सुभटमांहि मुरअरि रे. के० सु० १

नदीयमांहि जिम गंग, अनंग[1] सुरूपमां रे, के० अ०
फूलमांहि अरविंद[2], भरतपति भूपमां रे; के० भ०
अैरावत गज मांही, गरुड खगमां[3] यथा रे, के० ग०
तेजवंतमांहि भाण[4], वखाणमांहिजिन कथा रे. के० व० २

---

१ कामदेव. २ कमल. ३ पक्षी. ४ सूर्य.

मंत्रमांहि नवकार, रत्नमांहि सुरमणि रे, के० रत्न०
सागरमांहि स्वयंभूरमण शिरोमणि रे; के० रम०
शुक्ल ध्यान जिम ध्यानमां, अति निर्मलपणे रे, के० अ०
श्रीनय विजय विबुध पय, सेवक इम भणे रे. के० से० ३

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

कानुडो वेण वजावेरे, काळी नदीने कांठे-अे देशी.

वामानंदन हो प्राण थकी छो प्यारा,
नांही कीजे हो नयणथकी क्षण न्यारा;
पुरिसादाणी शामळ वरणो, शुद्ध समकितने भासे;
शुद्ध पुंज जिणे कीधो तेहने, उज्ज्वळ वरण प्रकाशे. वा० १
तुम चरणे विषधर पिण निरविष, दंसणे[1] थाये बिडोजा;[2]
जोतां अम शुद्ध स्वभाव कां न हुवे, अेह अमे ग्रह्या छोजा. वा० २
कमठराय मद किण गिणतिमां, मोहतणो मद जोतां;
ताहरी शक्ति अनंती आगळ, केई केई मर गया गोतां. वा० ३
तें जिम तार्यां तिम कुण तारे, कुण तारक कहुं अेहवो;
सायरमान ते सायर सरिखो, तिम तुं पिण तुं जेहवो. वा० ४
किमपि न वेसो तुमे करुणाकर, तेह मुज प्राप्ति अनंती;
जेम पडे कण कुंजरमुखथी, कीडी बहु धनवंती. वा० ५
अेक आवे अेक मोजां पावे, अेक करे ओळगडी;
निजगुण अनुभव देवा आगळ, पडखे नहीं तु बे घडी. वा० ६
जेहवी तुमथी माहरी माया, तेहवी तुमे पिण धरजो;
मोहनविजय कहे कवि रूपनो, परतक्ष करुणा करजो. वा० ७

---

१ दर्शनथी. २ इन्द्र.

---

२४. श्री महावीर स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग धनाश्री

वीरजीने चरणे लागुं वीरपणुं ते मागुं रे
मिथ्या मोहतिमिर भय भाग्युं, जीत नगारुं वाग्युं रे. वी० १
छउमथ्य वीर्य लेश्या संगे, अभिसंधिज मति अंगे रे;
सूक्ष्म स्थूल क्रियाने रंगे, योगी थयो उमंगे रे वी० २
असंख्य प्रदेशे वीर्य असंखे, योग असंखित कंखे रे;
पुद्गल गण तेणे ले सुविशेषे, यथाशक्ति मति लेखे रे. वी० ३
उत्कृष्टे वीर्यनिवेसे, योग क्रिया नवी पेसे रे;
योग तणी ध्रुवताने लेशे, आतमशक्ति न खेसे रे. वी० ४
काम वीर्य वशे जेम भोगी, तेम आतम थयो भोगी रे;
शूरपणे आतम उपयोगी, थाय तेहणे अयोगी रे. वी० ५
वीरपणुं ते आतम ठाणे, जाण्युं तुमची वाणे रे;
ध्यान विन्नाणे शक्ति प्रमाणे निज ध्रुवपद पहिचाणे रे. वी० ६
आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणतिने भागे रे;
अक्षय दर्शन ज्ञान वैरागे, आनंदघन प्रभु जागे रे. वी० ७

२

पंथडो निहाळुंरे बीजा जिनतणो रे—अे देशी.

चरम जिणेसर विगत स्वरूपनुंरे, भावुं केम स्वरूप;
साकारी विण ध्यान न संभवेरे, अे अविकार अरूप चरम० १
आप स्वरूपे आतममां रमे रे, तेहना धुर बे भेद;
असंख्य उक्कोसे साकारी पदे रे, निराकारी निरभेद. चरम० २

मंत्रमांहि नवकार, रत्नमांहि सुरमणि रे, के० रत्न०
सागरमांहि स्वयंभूरमण शिरोमणि रे; के० रम०
शुक्ल ध्यान जिम ध्यानमां, अति निर्मलपणे रे, के० अ०
श्रीनय विजय विबुध पय, सेवक इम भणे रे. के० से० ३

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

कानुडो वेण वजावेरे, काळी नदीने कांठे-अे देशी.

वामानंदन हो प्राण थकी छो प्यारा,
नांही कीजे हो नयणथकी क्षण न्यारा;
पुरिसादाणी शामळ वरणो, शुद्ध समकितने भासे;
शुद्ध पुंज जिणे कीधो तेहने, उज्ज्वळ वरण प्रकाशे. वा० १
तुम चरणे विषधर पिण निरविष, दंसणे[1] थाये बिडोजा;[2]
जोतां अम शुद्ध स्वभाव कां न हुवे, अेह अमे ग्रह्या छोजा. वा० २
कमठराय मद किण गिणतिमां, मोहतणो मद जोतां;
ताहरी शक्ति अनंती आगळ, केई केई मर गया गोतां. वा० ३
तें जिम तार्या तिम कुण तारे, कुण तारक कहुं अेहवो;
सायरमान ते सायर सरिखो, तिम तुं पिण तुं जेहवो. वा० ४
किमपि न बेसो तुमे करुणाकर, तेह मुज प्राप्ति अनंती;
जेम पडे कण कुंजरमुखथी, कीडी बहु धनवंती. वा० ५
अेक आवे अेक मोजां पावे, अेक करे ओळगडी;
निजगुण अनुभव देवा आगळ, पडखे नहीं तु बे घडी. वा० ६
जेहवी तुमथी माहरी माया, तेहवी तुमे पिण धरजो;
मोहनविजय कहे कवि रूपनो, परतक्ष करुणा करजो. वा० ७

---

१ दर्शनथी. २ इन्द्र.

---

२४. श्री महावीर स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग धनाश्री

वीरजीने चरणे लागुं वीरपणुं ते मागुं रे
मिथ्या मोहतिमिर भय भाग्युं, जीत नगारुं वाग्युं रे. वी० १
छउमथ्य वीर्य लेश्या संगे, अभिसंधिज मति अंगे रे;
सूक्ष्म स्थूल क्रियाने रंगे, योगी थयो उमंगे रे वी० २
असंख्य प्रदेशे वीर्य असंखे, योग असंखित कंखे रे;
पुद्गल गण तेणे ले सुविशेषे, यथाशक्ति मति लेखे रे. वी० ३
उत्कृष्टे वीर्यनिवेसे, योग क्रिया नवी पेसे रे;
योग तणी ध्रुवताने लेशे, आतमशक्ति न खेसे रे. वी० ४
काम वीर्य वशे जेम भोगी, तेम आतम थयो भोगी रे;
शूरपणे आतम उपयोगी, थाय तेहणे अयोगी रे. वी० ५
वीरपणुं ते आतम ठाणे, जाण्युं तुमची वाणे रे;
ध्यान विन्नाणे शक्ति प्रमाणे निज ध्रुवपद पहिचाणे रे. वी० ६
आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणतिने भागे रे;
अक्षय दर्शन ज्ञान वैरागे, आनंदघन प्रभु जागे रे. वी० ७

२

पंथडो निहालुंरे बीजा जिनतणो रे–ए देशी.

चरम जिणेसर विगत स्वरूपनुंरे, भावुं केम स्वरूप;
साकारी विण ध्यान न संभवेरे, ए अविकार अरूप. चरम० १
आप स्वरूपे आतममां रमे रे, तेहना धुर बे भेद;
असंख्य उक्कोसे साकारी पदे रे, निराकारी निरभेद. चरम० २

सूखमनाम करम निराकार जे रे, तेह भेदे नहीं अंत;
निराकार जे निरगति कर्मथीरे, तेह अभेद अनंत. चरम० ३

रूप नहीं कइयें बंधन घटयुं रे, बंधन मोक्ष न कोय;
बंध मोक्ष विण सादि अनंतनुं रे, भंग संग केम होय? चरम० ४

द्रव्य विना तेम सत्ता नवि लहेरे, सत्ता विण शो रूप;
रूप विना केम सिद्ध अनंतता रे, भावुं अकल स्वरूप. चरम० ५

आतमता परिणति जे परिणम्या रे, ते मुज भेदाभेद;
तदाकार विण मारा रूपनुं रे, ध्यावुं विधिप्रतिषेध. चरम० ६

अंतिम भवग्रहणे तुज भावनुं रे, भावशुं शुद्ध स्वरूप;
तइयें आनंदघन पद पामशुं रे, आतमरूप अनूप. चरम० ७

२

वीर जिनेश्वर परमेश्वर जयो, जग जीवन जिन भूप;
अनुभव मित्तेरे चित्ते हित करी, दाख्युं तास स्वरूप. वीर० १

जेह अगोचर मानस वचनने, तेह अतींद्रिय रूप;
अनुभव मित्तेरे व्यक्ति शक्तिशुं, भाख्युं तास स्वरूप. वीर० २

नय निक्षेपेरे जेह न जाणिये, नवि जीहां प्रसरे प्रमाण;
शुद्ध स्वरूपे ते ब्रह्म दाखवे, केवळ अनुभव भाण. वीर० ३

अलख अगोचर अनुपम अर्थनो, कोण कही जाणे रे भेद;
सहज विशुद्धयेरे अनुभव वयण जे, शास्त्र ते सघलोरेखेद, वीर० ४

दिशि देखाडीरे शास्त्र सवि रहे न लहे अगोचर वात;
कारज साधक बाधक रहित जे, अनुभव मित्त विख्यात. वीर० ५

अहो चतुराईरे अनुभव मित्तनी, अहो तस प्रीतप्रतीत;
अंतरजामी स्वामी समीप ते, राखी मित्रशुं रीत. वीर० ६

अनुभव संगे रे रंगे प्रभु मल्या, सफळ फळयां सवि काज;
निज पद संपद जे ते अनुभवे रे, आनंदघन महाराज. वीर० ७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

कडखानी देशी.

तार हो तार प्रभु, मुज सेवक भणी,
जगतमां अेटलुं सुजश लीजे;
दास अवगुण भर्यो, जाणी पोता तणो,
दयानिधि दीन पर दया कीजे. ता० १

रागद्वेषे भर्यो, मोह वैरी नडयो,
लोकनी रीतिमां घणुंये रातो;
क्रोधवश धमधम्यो, शुद्ध गुण नवि रम्यो,
भम्यो भवमांहि हुं विषयमातो. ता० २

आदर्युं आचरण, लोक उपचारथी,
शास्त्र अभ्यास पण कांइ कीधो;
शुद्ध श्रद्धान वली, आत्म अवलंबविनुं,
तेहवो कार्य तिणे को न सीधो. ता० ३

स्वामी दरिसण समो, निमित्त लही निर्मलो,
जो उपादान अे शुचि न थाशे;
दोष को वस्तुनो, अहवा उद्यम तणो,
स्वामी सेवा सही निकट लाशे. ता० ४

स्वामी गुण ओळखी, स्वामीने जे भजे,
दरिसण शुद्धता तेह पामे;
ज्ञान चारित्र तप वीर्य उल्लासथी,
कर्म झीपी वसे मुक्ति धामे. ता० ५

जगत वत्सल महावीर जिनवर सुणी;
चित्त प्रभु चरणने शरण वास्यो;
तारजो बापजी विरुद निज राखवा,
दासनी सेवना रखे जोशो ता० ६

विनति मानजो शक्ति अे आपजो,
भाव स्याद्वादता शुद्ध भासे;
साधी साधक दशा, सिद्धता अनुभवी,
देवचंद्र विमल प्रभुता प्रकाशे. ता० ७

कळश

चोवीशे जिनगुण गाईअे, ध्याईअे तत्त्वस्वरूपोजी;
परमानंद पद पाईअे, अक्षय ज्ञान अनूपोजी. चो० १

चवदहसें बावन भला, गणधर गुण भंडारोजी;
समतामयी साहु साहुणी, सावय श्राविका सारोजी. चो० २

वर्द्धमान जिनवर तणो, शासन अति सुखकारोजी;
चउविह संघ विराजतां, दुसम काल आधारोजी. चो० ३

जिन सेवनथी ज्ञानता, लहे हिताहित बोधोजी;
अहित त्याग हित आदरे, संयम तपनी शोधोजी. चो० ४

अभिनव कर्म अग्रहणता जीर्ण कर्म अभावोजी;
निःकर्मनि अबाधता, अवेदन अनाकुल भावोजी. चो० ५

भावरोगना विगमथी, अचल अक्षय निराबाधोजी;
पूर्णानंद दशा लही, विलसे सिद्ध समाधोजी. चो० ६
श्री जिनचंद्रनी सेवना, प्रगटे पुण्य प्रधानोजी;
सुमति सागर अति उल्लसे, साधुरंग प्रभु ध्यानोजी. चो० ७
सुविहित खरतर गच्छवरु, राजसागर उवझायोजी;
ज्ञान धर्म पाठक तणो, शिष्य सुजस सुखदायोजी. चो० ८
दीपचंद्र पाठक तणो, शिष्य स्तवे जिनराजोजी;
देवचंद्र पद सेवतां, पूर्णानंद समाजोजी. चो० ९

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

राग धन्याश्री

गिरुआरे गुण तुम तणा, श्री वर्द्धमान जिनराया रे;
सुणतां श्रवणे अमी झरे, मारी निर्मल थाये काया रे. गि० १
तुम गुणगण गंगाजले हुं, झीलीने[1] निर्मल थाउं रे;
अवर न धंधो आदरुं, निशदिन तोरा गुण गाउं रे. गि० २
झील्या जे गंगाजले, ते छिल्लर जल नवि पेसे रे;
जे मालती फूले मोहीआ, ते बावल जई नवि बेसे रे. गि० ३
एम अमे तुम गुण गोठशुं, रंगे राच्या ने वळी माच्या रे;
ते केम परसुर, आदरुं, जे परनारी वश राच्या रे. गि० ४
तुं गति तुं मति आशरो, तुं आलंबन मुज प्यारो रे;
वाचक यश कहे माहरे, तुं जीव जीवन आधारो रे. गि० ५

१ नहाइने. २ हरिहरादि देव.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

पछेडानी देशी

दुर्लभ भव लही दोहिलो रे, कहो तरीअे कवण उपाय रे;
प्रभुजीने वीनवुं रे;
समकित साचा साचवुं रे, ते करणी किम थाय रे. प्र० १

अशुभ मोह जो मेटीअे रे, कांइ शुभ प्रभुने जाय रे; प्र०
निरागे प्रभु ध्याइअेरे, कांइ तो पिण राग कहाय रे. प्र० २

नाम ध्यातां जो ध्याइअेरे, कांइ प्रेम विना नवि तान रे; प्र०
मोह विकार जिहां तिहां रे, कांइ किम तरीअे गुणधाम रे. प्र० ३

मोह बंधज बांधीओ रे, कांइ बंध जहां नहीं सोय रे; प्र०
कर्म बंध न कीजीअे रे, कर्मबंधन गये जोय रे. प्र० ४

तेहमां शो पाड चडावीअे रे. कांइ तुमे श्री महाराज रे; प्र०
विण करणी जो तारशो रे, कांइ साचा श्री जिनराज रे. प्र० ५

प्रेम मगन नीभावता रे, कांइ भाव तिहां भवनाश रे; प्र०
भाव तिहां भगवंत छे रे, कांइ उपदिशे आतम सास रे. प्र० ६

पूरण घटाभ्यंतर भर्यो रे, कांई अनुभव अनुहार रे; प्र०
आतम ध्याने ओळखी रे, कांई तरशुं भवनो पार रे. प्र० ७

वर्धमान मुज विनति रे, कांई मानजो निशदिश रे; प्र०
मोहन कहे मनमंदिरे रे, कांई वसियो तुं विश्वावीश रे प्र० ८

---

३६. क्षमापनापाठनुं पद्य

रचनार—अेक मुमुक्षु

हे ! नाथ भूली हुं भवसागरमां भटक्यो;
नहि अधम काम करतां, हुं कदी पण अटक्यो.

तम वचन अमूलख, लक्षमांही नहि लीधां;
नहि तत्त्वविचारथी, कह्यां तमारां कीधां.

सेव्युं नहि उत्तम शील प्रणीत तमारुं;
तजी यादि आपनी, में ज बगाडयुं मारुं.

प्रभु, दया शांति ने क्षमा आदि में छोडी;
वळी पवित्रतानी, ओळखाण पण तोडी.

हुं भूल्यो, आथड्यो, अने रखड्यो भारी;
आ संसारे विभु, विटंबना थइ मारी.

हुं पापी मदोन्मत्त, मलिन कर्मना रजथी;
विण तत्त्व मोक्ष मेळवाय नहि, प्रभु, मुजथी.

हे परमात्मा हुं, प्रपंचमांही पड्यो छुं;
हुं मूढ, निराश्रित महा खुवार बन्यो छुं.

बनी अंध अमित अज्ञानथी भूल्यो भक्ति;
नथी निश्चय मुजमां, नाथ, विवेकनी शक्ति.

ओ रागरहित प्रभु ! मुजने जाणी अनाथ;
आ दीन दासनो, ग्रहो हेतथी हाथ.

हुं शरण हवे तो ग्रहण करुं छुं तमारुं;
तुम धर्म साथ तुम, मुनिनुं शरण स्वीकारुं.

हुं मागुं छुं प्रभु, मुज अपराधनी माफी;
करी दीओ पापथी मुक्त, कहुं पछी कांही.

अे अभिलाषा अविनाशी, पूरण करजो;
मुज दोष दयानिधि, देव, दीले नवि धरजो.

हुं पापनो पश्चात्ताप हवे करुं छुं;
वळी सूक्ष्म विचारथी, सदा ऊंडो उतरुं छुं.

तुम तत्त्वचमत्कृति, नजरे तूर्त तरे छे;
अे मुज स्वरूपनो, विकास नाथ करे छे,

छो आप निरागी, अनंत ने अविकारी;
वळी स्वरूप सत् चिदानंद गणुं सुखकारी.

छो सहजानंदी, अनंतदर्शी ज्ञानी;
त्रैलोक्यप्रकाशक, नाथ, शुं आपुं निशानी?

मुज हित अर्थे दउं, साक्षी मात्र तमारी;
हुं क्षमा चाहुं, मति सदा आपजो सारी.

तुम प्रणीत तत्त्वमां, शंकाशील न थाउं;
जे आप बतावो, मार्ग त्यांज हुं जाउं.

मुज आकांक्षाने, वृत्ति अेवी नित्य थाजो;
लइ शकुं जेथी हुं मदद् मुक्तिनो लावो.

हे! सर्वज्ञ प्रभु शुं विशेष कहुं हुं तमने;
नथी लेश अजाण्युं आपथी निश्चय मुजने.

केवळ पश्चात्तापथी दील दहुं छुं;
मुज कर्मजन्य पापनी क्षमा चाहुं छुं.

ॐ शांति शांति, करो कृपाळु शांति;
गुरुराजचंद्र जिन वचन हरो मम भ्रांति.

---

३७. श्री लालाजी रणजीतसिंहजी कृत

श्री बृहद् आलोचना

दोहा.

सिद्ध श्री परमातमा, अरिगंजन अरिहंत;
इष्ट देव वंदुं सदा, भयभंजन भगवंत, १
अरिहा सिद्ध समरुं सदा, आचारज उवझाय;
साधु सकळके चरनकुं, वंदुं शीश नमाय. २
शासननायक समरिअे, भगवंत वीर जिनंद;
*अलिय विघन दूरे हुरे, आपे परमानंद. ३
अंगुठे अमृत वसे, लब्धितणो भंडार;
श्रीगुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार. ४
श्री गुरुदेव प्रसादसें, होत मनोरथ सिद्ध;
घन वरसत वेली तरु, फूल फलनकी वृद्ध. ५
पंच परमेष्ठी देवको, भजनपूर पहिचान;
कर्म अरि भाजे सवी, होवे परम कल्यान ६
श्री जिनयुगपदकमळमें, मुज मन भ्रमर वसाय;
कब उगे वो दिनकरु, श्रीमुख दरिसन पाय. ७
प्रणमी पदपंकज भणी, अरिगंजन अरिहंत;
कथन करौं अब जीवको, किंचित् मुज [1]विरतंत. ८
आरंभ विषय कषाय वश, भमियो काळ अनंत;
लक्षचोराशी योनिसें, अव तारो भगवंत. ९
देव गुरु धर्म सूत्रमें, नव तत्त्वादिक जोय;
अधिका ओछा जे कह्या, मिथ्या दुष्कृत मोय [2] १०

---

*अनिष्ट. १ वृत्तांत, वर्तन. २ मारां माठां काम निष्फल थाओ.

मिथ्या मोह अज्ञानको, भरियो रोग अथाग;
वैद्यराज गुरु शरणथी, औषध ज्ञान विराग. ११
जे में जीव विराधिया सेव्यां पाप अढार;
प्रभु तुमारी साखसें, वारंवार धिक्कार. १२
बुरा बुरा सबको कहे, बुरा न दीसे कोइ;
जो घट शोधे आपनो, मोसुं बुरा न कोइ. १३
कहेवामां आवे नहि, अवगुण भर्या अनंत;
लिखवामां क्युं कर लिखुं, जाणो श्री भगवंत. १४
करुणानिधि कृपा करी, कर्म कठिन मुज छेद;
मिथ्या मोह अज्ञानको, करज्यो ग्रंथि भेद १५
पतितउद्धारन नाथजी, अपनो बिरुद विचार;
भूलचूक सब माहरी, खमीअे वारंवार. १६
माफ करो सब माहरा, आज तलकना दोष;
दीनदयाळु दो मुझे श्रद्धाशील संतोष. १७
आतमनिंदा शुद्ध भनी, गुनवंत वंदन भाव;
रागद्वेष पतला करी, सबसें खीमत खीभाव* १८
छूटुं पिछलां पापसें, नवां न बांधुं कोइ;
श्री गुरुदेवप्रसादसें, सफल मनोरथ होई. १९
परिग्रह ममता तजी करी, पंच महाव्रत धार;
अंत समय आलोचना, करुं संथारो सार. २०
तीन मनोरथ अे कह्या, जो ध्यावे, नित मन्न;
शक्ति सार[1] वर्तें सही, पावे शिवसुख धन्न. २१
अरिहा देव, निर्ग्रंथ गुरु, संवर निर्जर धर्म;
आगम श्री केवलि कथित, अेही जैन मत मर्म. २२
आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार;
जिनआज्ञा परमान कर, निश्चय खेवो[2] पार. २३

---

* क्षमी क्षमावो. १ अनुसार प्रमाणे. २ उतरो.

क्षण निकमो रहनो नहीं, करनो आतम काम;
भणनो गुणनो शीखनो, रमनो ज्ञानाराम. २४

अरिहा सिद्ध सब साधुजी, जिनाज्ञा धर्मसार;
मंगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणां चार. २५

घडी घडी पलपल सदा, प्रभु स्मरणको चाव;[३]
नरभव सफलो जो करे, दान शील तप भाव. २६

दोहा

सिद्धों जैसो जीव है, जीव सोई सिद्ध होय;
कर्म मेलका अंतरा, बूझे विरला कोय. १

कर्म पुद्‌गल रूप है, जीवरूप है ज्ञान;
दो मिलकर बहु रूप है, विछडयां[४] पद निरवाण. २

जीव करम भिन भिन करो, मनुष जमनकुं पाय;
ज्ञानातम[५] वैराग्यसें, धीरज ध्यान जगाय. ३

द्रव्य थकी जीव अेक है, क्षेत्र असंख्य प्रमान;
काळ थकी रहै सर्वदा, भावे दर्शन ज्ञान. ४

गर्भित पुद्‌गल पिंडमें, अलख अमूरति देव;
फिरे सहज भवचक्रमें, यह अनादिकी टेव. ५

फूल अत्तर, घी दूधमें, तिलमें तैल छिपाय;
युं चेतन जड करम संग, बंध्यो ममता पाय. ६

जो जो पुद्‌गलकी दशा, ते निज माने हंस;[६]
याही भरम विभावतें, वढे करमको वंश. ७

---

३ उत्साह. ४ छूटां थये. ५ आत्मज्ञान. ६ जीव.

रतन बंध्यो गठडी विषे, सूर्य छिप्यो घनमांही;
सिंह पिंजरामें दियो, जोर चले कछु नांही. ८

ज्युं वंदर मदिरा पिया, विछु डंकीत गात;
भूत लग्यो कौतुक करे, कर्मोंका उत्पात. ९

कर्म संग जीव मूढ है, पावे नाना रूप;
कर्म रूप मलके टले, चेतन सिद्ध सरूप. १०

शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरव,[1] रह्यो कर्म मल छाय;
तप संयमसें धोवतां, ज्ञानज्योति बढ जाय.[2] ११

ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप;
चारित्रथी आवत रुके, तपस्या क्षपन सरूप. १२

कर्म रूप मलके शुधे, चेतन चांदी रूप;
निर्मल ज्योति प्रगट भयां, केवळज्ञान अनूप. १३

मूसी[3] पावक सोहगी, फुकांतनो उपाय;
राम चरण चारु मिल्या, मैल कनकको जाय. १४

कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद;
ज्ञानरूप गुन चांदनी, निर्मळ ज्योति अमंद १५

राग द्वेष दो बीजसें, कर्मबंधकी व्याध;[4]
ज्ञानातम वैराग्यसें, पावे मुक्ति समाध.[5] १६

अवसर वीत्यो जात है, अपने वश[6] कछु होत;
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपकज्योत. १७

कल्पवृक्ष, चिंतामणि, इन भवमें सुखकार;
ज्ञानवृद्धि इनसे अधिक, भव-दुःखभंजनहार. १८

---

१ द्रव्य. २ वधी जाय. ३ सोनुं गाळवानी कुलडी. ४ व्याधि, रोग.
५ समाधि, सुख ६ पोताना हाथमां अवसर होय त्यारे कई बने छे.

राइमात्र घटवध नहीं देख्यां केवळज्ञान;
यह निश्चय कर जानके, त्यजीअे परथम[1] ध्यान. १९

दूजा[2] कुछभी न चिंतीअे, कर्मबंध बहु दोष;
त्रीजा[3] चोथा[4] ध्यायके, करीअे मन संतोष. २०

गइ वस्तु सोचे नहीं, आगम वांछा नांही;
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांही. २१

अहो ! समदृष्टि आतमा, करे कुटुंब प्रतिपाळ;
अंतर्गत न्यारो रहे, (ज्युं) धाई खिलावे बाळ. २२

सुख दुःख दोनु वसत है, ज्ञानीके घट मांही;
गिरि[5] सर* दीसे मुकरमें×, भार भींजवो नांही

जो[6] जो पुद्गलफरसना निश्चे फरसे सोय;
ममता समता भावसें, कर्म बंध-क्षय होय. २४

बांध्यां सोही भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव;
फल, निरजरा होत है, यह समाधि चित चाव. २५

बांध्या विन भुगते नहीं, विन भुगत्यां न छूटाय;
आपही करता भोगता, आपही दूर कराय. २६

पथ कुपथ घटवध करी, रोग हानि वृद्धि थाय.
पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जगमें पाय. २७

सुख दीधे सुख होत है, दुःख दीधां दुःख होय;
आप हणे नहि अवरकुं, (तो) अपने हणे न कोय. २८

---

१ आर्त-दुःखरूप परिणाम. २ रौद्र-पापरूप परिणाम ३ धर्म-शुभ भावरूप-परिणाम ४ शुक्ल-शुद्ध परिणाम. ५ पर्वत *सरोवर ×अरीसामां. ६ जे जे पुद्गलोनो स्पर्श थवानो छे, तेमां ममता भावथी कर्मबंध अने समता भावथी कर्मक्षय थाय छे ७ बांधेलां कर्म भोगवतां शुभाशुभ भावथी फळ थाय छे. समभावमां चित्त होय तो निर्जरा थाय छे ८ भोगव्या विना.

रतन बंध्यो गठडी विषे, सूर्य छिप्यो घनमांही;
सिंह पिंजरामें दियो, जोर चले कछु नांही. ८

ज्युं वंदर मदिरा पिया, विछु डंकीत गात;
भूत लग्यो कौतुक करे, कर्मोंका उत्पात. ९

कर्म संग जीव मूढ है, पावे नाना रूप;
कर्म रूप मलके टले, चेतन सिद्ध सरूप. १०

शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरव,[1] रह्यो कर्म मल छाय;
तप संयमसें धोवतां, ज्ञानज्योति वढ जाय.[2] ११

ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप;
चारित्रथी आवत रुके, तपस्या क्षपन सरूप. १२

कर्म रूप मलके शुधे, चेतन चांदी रूप;
निर्मल ज्योति प्रगट भयां, केवळज्ञान अनूप. १३

मूसी[3] पावक सोहगी, फुकांतनो उपाय;
राम चरण चारु मिल्या, मैल कनकको जाय. १४

कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद;
ज्ञानरूप गुन चांदनी, निर्मळ ज्योति अमंद १५

राग द्वेष दो बीजसें, कर्मबंधकी व्याध;[4]
ज्ञानातम वैराग्यसें, पावे मुक्ति समाध.[5] १६

अवसर वीत्यो जात है, अपने वश[6] कछु होत;
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपकज्योत. १७

कल्पवृक्ष, चिंतामणि, इन भवमें सुखकार;
ज्ञानवृद्धि इनसे अधिक, भव-दुःखभंजनहार. १८

---

१ द्रव्य. २ वधी जाय. ३ सोनुं गाळवानी कुलडी. ४ व्याधि, रोग. ५ समाधि, सुख ६ पोताना हाथमां अवसर होय त्यारे कंई बने छे.

राइमात्र घटवध नहीं देख्यां केवळज्ञान;
यह निश्चय कर जानके, त्यजीओ परथम[1] ध्यान. १९

दूजा[2] कुछभी न चिंतीओ, कर्मबंध बहु दोष;
त्रीजा[3] चोथा[4] ध्यायके, करीओ मन संतोष. २०

गइ वस्तु सोचे नहीं, आगम वांछा नांही;
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांही. २१

अहो ! समदृष्टि आतमा, करे कुटुंब प्रतिपाळ;
अंतर्गत न्यारो रहे, (ज्युं) धाई खिलावे बाळ. २२

सुख दुःख दोनु वसत है, ज्ञानीके घट मांही;
गिरि[5] सर* दीसे मुकरमें×, भार भींजवो नांही

जो[6] जो पुद्गलफरसना निश्चे फरसे सोय;
ममता समता भावसें, कर्म बंध-क्षय होय. २४

बांध्यां सोही भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव;
फल, निरजरा होत है, यह समाधि चित चाव. २५

बांध्या विन भुगते नहीं, विन भुगत्यां न छूटाय;
आपही करता भोगता, आपही दूर कराय. २६

पथ कुपथ घटवध करी, रोग हानि वृद्धि थाय.
पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जगमें पाय. २७

सुख दीधे सुख होत है, दुःख दीधां दुःख होय;
आप हणे नहि अवरकुं, (तो) अपने हणे न कोय. २८

---

१ आर्त-दुःखरूप परिणाम. २ रौद्र-पापरूप परिणाम ३ धर्म-शुभ भावरूप-परिणाम ४ शुक्ल-शुद्ध परिणाम. ५ पर्वत *सरोवर ×अरीसामां. ६ जे जे पुद्गलोनो स्पर्श थवानो छे, तेमां ममता भावथी कर्मबंध अने समता भावथी कर्मक्षय थाय छे ७ बांधेलां कर्म भोगवतां शुभाशुभ भावथी फळ थाय छे. समभावमां चित्त होय तो निर्जरा थाय छे ८ भोगव्या विना.

ज्ञान गरीवी गुरुवचन, नरम वचन निर्दोष;
इनकुं कभी न छांडिये, श्रद्धा शील संतोष. २९
सत मत छोडो हो! नरा, लक्ष्मी चौगुनी होय;
सुख दुःख रेखा कर्मकी, टाली टले न कोय. ३०
गोधन गजधन रतनधन, कंचन खान सुखान;
जब आवे संतोषधन, सब धन धूळ समान. ३१
शील रतन महोटो रतन, सब रतनांकी खान;
तीन लोककी संपदा, रही शीलमें आन.[1] ३२
शीले सर्प न आभडे[2], शीले शीतल आग;
शीले अरि करि केसरी, भय जावे सब भाग. ३३
शील रतनके पारखुं, मीठा बोले वैन;
सब जगसें ऊंचा+ रहे नीचां राखे नैन. ३४
तनकर मनकर वचनकर, देत न काहु दुःख;
कर्म रोग पातिक जरे, देखत वाका मुख ३५

दोहा

पान खरंतां इम कहे, सुन तरुवर वनराय.
[3]अबके विछुरे कब मिले, दूर पडेंगे जाय. १
तब तरुवर उत्तर दीयो, सुनो पत्र अेक बात;
इस घर अेही रीत है, अेक आवत अेक जात. २
[4]वरस दिनाकी गांठको, उत्सव गाय बजाय;
मूरख नर समजे नहीं, वरस गांठको जाय. ३

सोरठो

[5]पवन तणो विश्वास, किण कारण तें दृढ कियो?
इनकी अेही रीत, आवे के आवे नहीं. ४

---

१ आवीने. २ अथडाय. + उदासीन ३ हमणां छूटां पडेलां क्यारे मळीशुं?
४ वर्षगांठनो दिवस उजवे छे. ५ वा, श्वासोश्वास.

दोहा

करज [1]विराना काढके, खरच किया बहु नाम,
जब मुदत पूरी हुवे, देनां पडशे दाम. १
विनुं दिया छूटे नहीं, यह निश्चय कर मान;
हस हसके क्युं खरचीअे, दाम विराना जान. २
जीव हिंसा करतां थकां, लागे मिष्ट *अज्ञान;
ज्ञानी ईम जाने सही, विष मिलियो पकवान. ३
काम भोग प्यारा लगे, फल किंपाक+ समान;
मीठी खाज खुजावतां, पीछे दुःखकी खान. ४
जप तप संयम दोहिलो, औषध कडवी जान;
सुखकारक पीछे घनो, निश्चय पद निरवान. ५
डाभअणी जलबिंदुओ, सुख विषयनको चाव;
भवसागर दुःखजलभर्यो, यह संसारस्वभाव. ६
चढ उत्तंग जहांसें पतन, शिखर नहीं वो कूप;
जिस सुख अंदर दुःख वसे, सो सुख भी दुःखरूप. ७
जब लग जिनके पुण्यका, पहोंचे नहि करार;[2]
तब लग उसको माफ है, अवगुन करे हजार. ८
पुण्य खीन जब होत है, उदय होत है पाप;
दाजे वनकी लाकरी, प्रजले आपोआप. ९
पाप छिपायां ना छीपे, छीपे तो महाभाग;
दाबी डूबी ना रहे, रुइ लपेटी आग. १०
बहु बीती थोडी रही, अब तो सुरत[3] संभार;
परभव निश्चय चालनो, वृथा जन्म मत हार. ११

---

१ पारका व्याजे लावी * अज्ञानीने + झेरी झाडनुं नाम.
२ मुदत पूरी थई नथी. ३ लक्ष.

चार कोश ग्रामांतरे, खरची बांधे लार;[3]
परभव निश्चय जावणो, करीअे धर्म विचार. १२

रज विरज ऊंची गई, नरमाइके पान;[4]
पत्थर ठोकर खात है, करडाईके तान.[5] १३

अवगुन उर धरीअे नहि, जो हुवे विरख बबूल;
गुन लीजे कालु कहै, नहि छायामें सूल. १४

जैसी जापे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय;
वाका बूरा न मानीअे, कहां लेने वो जाय? १५

गुरु कारीगर सारिखा, टांकी वचन विचार;
पत्थरसे प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार. १६

संतनकी सेवा कियां, प्रभु रीझत है आप;
जाका बाल खिलाइअे, ताका रीझत बाप. १७

भवसागर संसारमें, दिपा श्री जिनराज;
उद्यम करी प्होंचे तीरे, बेठी धर्मजहाज. १८

निज आतमकुं दमनकर, पर आतमकुं चीन;
परमातमकुं भजनकर, सोई मत परवीन. १९

समजु शंके[8] पापसें, अणसमजु हरखंत;
वे लूखां वे चीकणां, इणविध कर्म बंधंत. २०

समज सार संसारमें, समजु टाले दोष;
समज समज करी जीवहीं, गया अनंता मोक्ष. २१

उपशम विषय कषायनो, संवर तीनुं योग;
किरिया जतन विवेकसें, मिटे कर्म दुःखरोग. २२

---

३ साथे. ४ नरमासपणाथी. ५ तन्मयपणुं. ६ बावळनुं वृक्ष. ७ टांकणारूप वचन गण ८ डरे.

रोग मिटे समता बधे, समकित व्रत आराध,
निर्वैरी सब जीवसें, पावे मुक्ति समाध. २३

इति भूलचूक मिच्छामि दुक्कडं.

श्री पंचपरमेष्ठि भगवद्भ्यो नमः

दोहा

अनंत चौवीशी जिन नमुं, सिद्ध अनंता क्रोड;
वर्तमान जिनवर सवे, केवली दो नव कोड.

गणधरादि सब साधुजी, समकित व्रत गुणधार;
यथायोग्य वंदन करुं, जिनआज्ञा अनुसार.

अेक नवकार गणवो.

प्रणमी पद पंकज भनी, अरिगंजन अरिहंत;
कथन करुं हवे जीवनुं, किंचित् मुज विरतंत.

अंजनानी देशी.

हुं अपराधी अनादिको, जनम जनम गुना किया भरपूर के;
लूंटीआ प्राण छ कायना, सेव्यां पाप अढारां करुर के.

(हवेनुं गद्य मूळ हिंदी भाषामां छे तेनुं गुर्जर भाषांतर मूक्युं छे.)

आज सुधी आ भवमां, पहेलां संख्याता, असंख्याता अने अनंता भवमां कुगुरु-कुदेव अने कुधर्मनी सद्दहणा, प्ररूपणा, फरसना सेवनादिक संबंधी पापदोष लाग्या ते सर्वे मिच्छा मि दुक्कडं.

अज्ञानपणे, मिथ्यात्वपणे, अव्रतपणे, कषायपणे, अशुभयोगे करी, प्रमादे करी अपछंद-अविनीतपणुं में कर्युं ते सर्वे मिच्छा मि दुक्कडं

श्री अरिहंत भगवंत वीतराग केवलज्ञानी महाराजनी, श्री गणधरदेवनी, श्री आचार्यनी, श्री धर्माचार्यनी, श्री उपाध्यायनी अने श्री साधु-साध्वीनी, श्रावकश्राविकानी, समदृष्टि-साधर्मी उत्तम पुरुषोनी, शास्त्रसूत्रपाठनी, अर्थपरमार्थनी धर्म संबंधी, अने सकल पदार्थोनी अविनय, अभक्ति, आशातनादिक करी, करावी अनुमोदी; मन, वचन अने कायाए करी द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी अने भावथी सम्यक् प्रकारे विनय, भक्ति, आराधना, पालन, स्पर्शना, सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रमे नहीं करो, नहीं करावी, नहीं अनुमोदी, ते मने धिक्कार, धिक्कार; वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. मारी भूलचूक, अवगुण, अपराध सर्वे माफ करो, क्षमा करो; हुं मन, वचन कायाए करी खमावुं छुं.

दोहा

अपराधी गुरु देवको, तीन भुवनको चोर;
ठगुं विराणा मालमें, हा हा कर्म कठोर.
कामी कपटी लालची, उपछंदा अविनीत,
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी भयभीत.
जे में जीव विराधिया, सेव्यां पाप अढार;
नाथ तुमारी साखसें वारंवार धिक्कार.

पहेलुं पाप-प्राणातिपात :—

छकायपणे में छकाय जीवनी विराधना करी; पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय चौरिंद्रिय, पंचेंद्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, गर्भज चौदे

प्रकारे संमूर्छिम आदि त्रस स्थावर जीवोनी विराधना करी, करावी, अनुमोदी; मन, वचन अने कायाअे करी ऊठतां बेसतां, सूतां, हालतां चालतां, शस्त्र, वस्त्र मकानादिक उपकरणो उठावतां, मूकतां, लेतां देतां, वर्ततां वर्तावतां, अपडिलेहणा, दुपडिलेहणा संबंधी, अप्रमार्जना, दुःप्रमार्जना संबंधी, अधिकी ओछी विपरीत पूंजना पडिलेहणा संबंधी अने आहार विहारादिक नाना प्रकारना घणा घणा कर्तव्योमां संख्याता, असंख्याता अने निगोद आश्रयी अनंता जीवना जेटला प्राण लूंटया, ते सर्व जीवोनो हुं पापी अपराधी छु; निश्चय करी बदलानो देणदार छुं; सर्व जीव मने माफ करो, मारी भूलचूक, अवगुण अपराध सर्वे माफ करो. देवसीय, राईय, पाक्षिक, चौमासी अने सांवत्सरिक संबंधी वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. वारंवार खमावुं छु. तमे सर्वे क्षमजो.

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व भूअेसु वेरं मज्झं न केणइ ॥

ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं छअे कायना जीवोना वैर बदलाथी निवृत्ति पामीश सर्व चोरासी लाख जीवयोनिने अभयदान दइश ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

बीजुं पाप मृषावादः—

क्रोधवशे, मानवशे, मायावशे, लोभवशे, हास्ये करी, भयवशे इत्यादिक करी मृपा वचन बोल्यो. निंदा-विकथा करी, कर्कश, कठोर, मार्मिक भाषा बोली इत्यादिक अनेक प्रकारे मृपा, जूठुं बोल्यो-बोलाव्युं, बोलता प्रत्ये अनुमोद्युं ते सर्वे मन-वचन-कायाअे करी मिच्छा मि दुक्कडं. ते दिवस मारो

धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे मृषावादनो त्याग करीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

त्रीजुं पाप अदत्तादान :—

अणदीधी वस्तु चोरी करीने लीधी, विश्वासघात करी थापण ओळवी, परस्त्री, परधन हरण कर्यां ते मोटी चोरी लौकिक विरुद्धनी, तथा अल्प चोरी ते घर संबंधी नाना प्रकारना कर्तव्योमां उपयोग सहिते ने उपयोग रहिते चोरी करी, करावी, करता प्रत्ये अनुमोदी, मन-वचन कायाअे करी; तथा धर्म संबंधी ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप श्री भगवंत गुरुदेवोनी आज्ञा वगर कर्यां ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं, ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे अदत्तादाननो त्याग करीश ते मारो परम कल्याणमय दिन थशे.

चोथुं पाप अब्रह्म :—

मैथुन सेववामां मन. वचन अने कायाना योग प्रवर्त्ताव्या; नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पाळयुं नहि; नव वाडमां अशुद्धपणे प्रवृत्ति करी; पोते सेव्युं, बीजा पासे सेवराव्युं, सेवनार प्रत्ये भलुं जाण्युं, ते मन, वचन कायाअे करी मने धिक्कार, धिक्कार वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं नववाड सहित ब्रह्मचर्य-शीलरत्न आराधीश, सर्वथा प्रकारे कामविकारोथी निवर्तीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

पांचमुं परिग्रह पापस्थानक :—

सचित परिग्रह ते दास, दासी, द्विपद, चौपद आदि, मणि, पत्थर आदि अनेक प्रकारे छे अने अचित परिग्रह

अग्यारमुं द्वेष पापस्थानक :—

अणगमती वस्तु जोइ द्वेष कर्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

बारमुं कलह पापस्थानक :—

अप्रशस्त वचन बोली कलेश उपजाव्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

तेरमुं अभ्याख्यान पापस्थानक :—

अछतां आळ दीधां, ने मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

चौदमुं पैशून्य पापस्थानक :—

परनी चुगली, चाडी करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

पंदरमुं परपरिवाद पापस्थानक :—

बीजाना अवगुण, अवर्णवाद बोल्यो, बोलाव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं

सोळमुं रति अरति पापस्थानक :—

पांच इंद्रियना २३ विषयो, २४० बिकारो छे तेमां मनगमतामां राग कर्यो, अणगमतामां द्वेष कर्यो, संयम तप आदिमां अरति करी करावी अनुमोदी तथा आरंभादि असंयम प्रमादमां रतिभाव कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो, ते मने धिक्कार धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

सत्तरमुं मायामृषावाद पापस्थानक :—

कपटसहित जूठुं बोल्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

अढारमुं मिथ्यादर्शनशल्य पापस्थानक :—

श्री जिनेश्वर देवना मार्गमां शंका कांक्षादिक विपरीत प्ररुपणा करी, करावी, अनुमोदी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

अेवं अढार पापस्थानक ते द्रव्यथी, क्षेत्रथी, काळथी, भावथी, जाणतां अजाणतां, मन वचन कायाअे करी सेव्यां, सेवराव्यां अनुमोद्यां; अर्थे अनर्थे, धर्म अर्थे कामवशे, मोहवशे, स्ववशे परवशे कर्यां; दिवसे रात्रे, अेकला के समूहमां सूतां वा जागतां, आ भवमां, पहेलां संख्याता, असंख्याता, अनंता भवोमां परिभ्रमण करतां आज दिन अद्यक्षण पर्यंत रागद्वेष, विषय-कषाय, आळस प्रमादादिक पौद्गलिक प्रपंच, परगुण-पर्यायने पोताना मानवारूप विकल्पे करी भूल करी, ज्ञाननी विराधना करी, दर्शननी विराधना करी, चारित्रनी विराधना करी, देशचारित्रनी विराधना करी, तपनी विराधना करी, शुद्ध श्रद्धा-शील, संतोष, क्षमादिक निज स्वरूपनी विराधना करी; उपशम, विवेक, संवर, सामायिक, पोसह, प्रतिक्रमण, ध्यान, मौनादि नियम, व्रत पच्चखाण, दान, शील, तपादिनी विराधना करी; परम कल्याणकारी आ बोलोनी आराधना, पालना आदिक मन, वचन अने कायाअे करी नहि, करावी नहि, अनुमोदी नहि, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

छअे आवश्यक सम्यक्प्रकारे विधि-उपयोग सहित आराध्या नहि, पाळ्या नहि, स्पर्श्या नहि, विधि उपयोग रहित-निरादरपणे कर्या परंतु आदर-सत्कार-भाव-भक्ति सहित नहि कर्या; ज्ञानना चौद, समकितना पांच बार व्रतना

साठ कर्मादानना पंदर संलेखनानः पांच, अेवं नव्वाणुं अतिचारमां तथा १२४ अतिचार मध्ये तथा साधुना १२५ अतिचार मध्ये तथा बावन अनाचरणना श्रद्धादिकमां विराधनादि जे कोइ अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचारादि सेव्या सेवराव्या, अनुमोद्या. जाणतां अजाणतां मन वचन, कायाअे करी ते मने धिक्कार, धिक्कार. वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

में जीवने अजीव सद्दह्या, प्ररूप्या; अजीवने जीव सद्दह्या प्ररूप्याः धर्मने अधर्म अने अधर्मने धर्म सद्दह्या, प्ररुप्या. साधुने असाधु अने असाधुने साधु सद्दह्या प्ररूप्या तथा उत्तम पुरुष, साधु, मुनिराज साध्वीजीनी सेवा भक्ति यथाविधि मानतादि नहि करी, नहि करावी, नहि अनुमोदी; तथा असाधुओनी सेवा भक्ति आदि मानता पक्ष कर्यो; मुक्तिना मार्गमां संसारनो मार्ग यावत् पचीस मिथ्यात्वमांनां मिथ्यात्व सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां. मने करी. वचने करी, कायाअे करी; पचीस कषाय संबंधी, पचीस क्रिया संबंधी, तेत्रीश आशातना संबंधी, ध्यानना ओगणीस दोष-वंदनाना बत्रीस दोष-सामायिकना बत्रीस दोष, पोसहना अढार दोष संबंधी मने. वचने. कायाअे करी जे कांइ पाप दोष लाग्या, लगाव्या. अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार. वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

महामोहनीय कर्मबंधनां त्रीशस्थानकने मन, वचन कायाअे करी सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां, शीलनी नव वाड, आठ प्रवचन मातानी विराधनादिक तथा श्रावकना अेकवीश गुण अने बार व्रतनी विराधनादि मन. वचन अने कायाअे करी. करावी, अनुमोदी तथा त्रण अशुभ लेश्यानां लक्षणोनी अने

बोलोनी सेवना करी अने त्रण शुभ लेश्यानां लक्षणोनी अने बोलोनी विराधना करी, चर्चा, वार्ता, व्याख्यानमां श्री जिनेश्वर देवनो मार्ग लोप्यो, गोपव्यो, नहि मान्यो, अछतानी स्थापना करी-प्रवर्ताव्यो, छतानी स्थापना करी नहि अने अछताने निषेध करवानो नियम कर्यो नहि, कलुषता करी तथा छः प्रकारे ज्ञानावरणीय वंधना बोल तेम ज छ प्रकारना दर्शनावरणीय वंधना बोल यावत् आठ कर्मनी अशुभ प्रकृति वंधना पंचावन कारणे करी व्यासी प्रकृति पापोनी बांधी वंधावी-अनुमोदी, मने करी, वचने करी कायाअे करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

अेक अेक बोलथी मांडी कोडाकोडी यावत् संख्यात, असंख्यात अनंता अनंत बोल पर्यंत में जाणवा योग्य बोलने सम्यक्प्रकारे जाण्या नहि, सद्द्ह्या-प्ररूप्या नहि तथा विपरीतपणे श्रद्धान आदि करी, करावी, अनुमोदी, मन, वचन, कायाअे करी ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. अेक अेक बोलथी मांडी यावत् अनंता बोलमां छांडवा योग्य बोलने छांड्या नहि अने ते मन, वचन, कायाअे करी सेव्या, सेवराव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

अेक अेक बोलथी मांडी यावत् अनंतानंत बोलमां आदरवा योग्य बोल आदर्या नहि, आराध्या-पाळ्या-स्पर्श्या नहि, विराधना खंडनादिक करी, करावी, अनुमोदी, मन, वचन, कायाअे करी ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

हे जिनेश्वर वीतराग ! आपनी आज्ञा आराधवामां जे जे प्रमाद कर्यो, सम्यक्प्रकारे उद्यम नहि कर्यो, नहि कराव्यो, नहि अनुमोद्यो, मन, वचन, कायाअे करी अथवा अनाज्ञा विषे उद्यम कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो, अेक अक्षरना अनंतमा भाग मात्र-कोई स्वप्नमात्रमां पण आपनी आज्ञाथी न्यून-अधिक, विपरीतपणे प्रवर्त्यो, ते मने धिक्कार. धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

ते मारो दिवस धन्य हशे के जे दिवसे हुं आपनी आज्ञामां सर्वथा प्रकारे सम्यक्पणे प्रवर्तीश.

दोहा.

श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा. करी फरसना सोय;
अनजाने पक्षपातमें मिच्छा दुक्कड मोय.
सूत्र अर्थ जानुं नहि. अल्पबुद्धि अनजान;
जिनभाषित सब शास्त्रका अर्थ पाठ परमान.
देवगुरु धर्म सूत्रकुं, नव तत्त्वादिक जोय;
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कड मोय
हुं मगसेलीओ हो रह्यो, नहीं ज्ञान रसभीज;
गुरुसेवा न करी शकुं. किम मुज कारज सीझ.
जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय;
अपराधी उन सबनको बदला देशुं सोय
जैन धर्म शुद्ध पायके, वरतुं विषय कषाय;
अेह अचंबा हो रह्या, जलमें लागी लाय.
अेक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तरवार;
उठ्यो थो जिन भजनकुं, बिचमें लियो मार.

सवैया

संसार छार तजी फरी छारनो वेपार करुं,
प्हेलांनो लागेलो कीच, धोई कीच बीच फरुं;
तेम महापापी हुं तो. मानुं सुख विषयथी,
करी छे फकीरी अेवी, अमीरीना आशयथी.

दोहा.

त्याग न कर संग्रह करुं, विषय वचन जिम आहार;
तुलसी अे मुज पतितकुं वारंवार धिक्कार.
कामी कपटी लालची, कठण लोहको दाम;
तुम पारस परसंगथी, सुवरन थाशुं स्वाम.
जप तप संवर हीन हुं. वळी हुं समता हीन;
करुणानिधि कृपाळ हे! शरण राख, हुं दीन.
नहि विद्या नहि वचन बळ. नहि धीरज गुण ज्ञान;
तुलसीदास गरीबकी, पत राखो भगवान.
आठ कर्म प्रबल करी, भमीओ जीव अनादि;
आठ कर्म छेदन करी, पावे मुक्ति समाधि.
सुसा जैसें अविवेक हुं, आंख मीच अंधियार;
मकडी[1] जाल बिछायके, फसुं आप धिक्कार.
सब भक्षी जिम अग्नि हुं तपीओ विषय कषाय;
अवछंदा अविनीत मैं, धर्मी ठग दुःखदाय.
कहा भयो घर छांडके तज्यो न माया संग;
नाग त्यजी जीम कांचली, विष नहि तजीयो अंग.

---

१ करोळियो.

पुत्र कुपात्र ज मैं हुओ, अवगुण भर्यो अनंत;
याहित वृद्ध विचारके, माफ करो भगवंत.

शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दोड;
[२]जैसे समुद्र जहाज विण, सूजत और न ठोर.

भवभ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार;
निलौभी सद्गुरु बिना, कवण उतारे पार.

श्री पंचपरमेष्ठी भगवंत गुरुदेव महाराज आपनी सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्र, तप, संयम, संवर, निर्जरा आदि मुक्तिमार्ग यथाशक्तिअे शुद्ध उपयोग सहित आराधना पालन स्पर्शन करवानी आज्ञा छे वारंवार शुभ उपयोग संबंधी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह-नियम पच्चखाणादि करवा, कराववानी, समिति-गुप्ति आदि सर्व प्रकारे आज्ञा छे.

निश्चे चित शुद्ध मुख पढत, तीन योग थिर थाय;
दुर्लभ दीसे कायरा, हलु कर्मी चित भाय.
अक्षर पद हीणो अधिक, भूलचूक कही होय;
अरिहा सिद्ध निज साखसें, मिच्छा दुक्कड मोय.

भूलचूक मिच्छा मि दुक्कडं

बृहद् आलोचना समाप्त.

---

२ समुद्रना वहाणना पक्षीने बीजे उडीने जवानुं स्थळ नथी तेम.

३८. पच्चख्खाण.

(१) अेकासणा वेआसणानुं पच्चख्खाण.

उग्गअे सूरे, नमुक्कार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं मुट्ठि सहिअं पच्चख्खाइ. उग्गअे सूरे, चउव्विहंपि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं; विगइओ पच्चख्खाइ; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहथ्थसंसट्ठेणं, उख्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमख्खिअेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, अेगासणं वियासणं पच्चख्खाइ, तिविहंपि आहारं-असणं, खाइमं, साइमं, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं. पाणस्सलेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा बहुलेवेण वा, ससिथ्थेण वा, असिथ्थेण वा, वोसिरे.

(२) आयंबिलनुं पच्चख्खाण.

उग्गअे सूरे. नमुक्कार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं पच्चख्खाइ. उग्गअे सूरे, चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं, खाइमं, साइमं; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्न-कालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहि-वत्तियागारेणं, आयंबिलं पच्चख्खाइ; अन्नथ्थणाभोगेणं; सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहथ्थसंसट्ठेणं, उख्खित्तविवेगेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिव[illegible] अेगासणं पच्चख्खाइ; तिविहंपि आहारं-असणं, खाइमं, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, पसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, म[illegible]

सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा असित्थेण वा वोसिरे.

(३) तिविहार उपवासनुं पच्चक्खाण

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ; तिविहंपि आहारं असणं, खाईमं, साईमं; अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणहार पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं, पच्चक्खाई; अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहियत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असित्थेण वा, वोसिरे.

(४) चउविहार उपवासनुं पच्चक्खाण.

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं; खाईमं, साईमं; अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(५) पाणाहारनुं पच्चक्खाण.

पाणहार दिवसचरिमं पच्चक्खाई, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(६) चउविहारनुं पच्चक्खाण.

दिवसचरिमं पच्चक्खाई, चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं खाईमं, साईमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

---

३९. स्तुति तथा थोयो

न्ये वरं हरिहरादय अेव द्रष्टा,
द्रष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति;
कं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेऽपि. १

त्रीणां शतानि शतशो जनयंति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता:
र्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मि,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम्. २

वामामनंति मुनयः परमं पुमांसम्,
आदित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्;
वामेव सम्यगुपलभ्य जयंति मृत्युम्,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पंथाः ३

वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्यम्,
ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुम्;
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं,
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति संतः ४

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित बुद्धिबोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्;
धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोसि. ५